छत्तीसगढ़ माध्यमिक शिक्षा मण्डल द्वारा निर्धारित नवीन पाठ्यक्रम के अनुसार

हिन्दी विशिष्ट

कक्षा - 12

2018-19

छत्तीसगढ़ पाठ्यपुस्तक निगम, रायपुर

मूल्य रु.

हिन्दी–विषय पाठ्यपुस्तक निर्माण–समिति

1. श्रीमती रत्ना गांगुली, प्राचार्य
2. डॉ. एल. आर. तिवारी प्राचार्य
3. श्रीमती सरिता नासरे, प्राचार्य
4. कु. उर्मिला आचार्य, व्याख्याता
5. डॉ. साधना कसार, व्याख्याता
6. श्री आई. पी. गुप्ता, व्याख्याता
7. श्री सन्तोष कुमार दुबे, व्याख्याता
8. डॉ. दामोदर प्रसाद तिवारी, व्याख्याता
9. डॉ. श्यामसुन्दर त्रिपाठी,

आवरण पृष्ठ

रेखराज, रायपुर

प्रकाशक

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् छत्तीसगढ़, रायपुर

मुद्रक

छत्तीसगढ़ पाठ्यपुस्तक निगम, रायपुर

मुद्रणालय

....

मुद्रित पुस्तकों की संख्या – ....

प्राक्कथन

छ.ग. मा. शि. मंडल के अथक प्रयासों के फलस्वरूप हिन्दी विशिष्ट, हिन्दी सामान्य के पाठ्यक्रमों में यथावश्यक परिवर्तन किया गया है। कक्षा बारहवीं की हिन्दी विशिष्ट में नीरस एवं बोझिल पाठों का निरसन किया गया है। प्रत्येक पाठ के अंत में शब्दार्थ दिए गए हैं। अभ्यास के प्रश्नों की शैली में परिवर्तन कर दिया गया हैं। दो अंक वाले अति लघु उत्तरीय प्रश्न, पाँच अंक वाले लघूत्तरीय तथा आठ अंक वाले दीर्घ उत्तरीय एवं व्याख्यात्मक प्रश्न दिए गए हैं, ताकि छात्र/छात्राओं को संपूर्ण विषयवस्तु की जानकारी प्राप्त हो सके। लेखक/कवियों का सामान्य परिचय देते हुए उनकी साहित्यिक विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला गया है ताकि विद्यार्थी वर्ग महाविद्यालय में प्रवेश के पूर्व साहित्यिक परिचय लिखने के लिए समर्थ हो सकें। पाठ्य पुस्तक लेखन समिति ने प्रत्येक इकाई में व्याकरण के अंश भी समाविष्ट किए हैं ताकि व्याकरणिक अंश कहीं भी बोझिल न हो सकें। मानवीय मूल्यों, आस्थाओं, प्रेम, सौंदर्य, प्रकृति का दार्शनिक संदेश, आंचलिक जनजीवन, छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति, हिन्दी साहित्य के विकास का क्रम, रस, छन्द, अलंकारों का सरस एवं मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करने वाली यह पुस्तक पाठक वर्ग को सादर समर्पित है।

हिन्दी विषय समिति

हिन्दी विशिष्ट
कक्षा—बारहवीं

इकाई क्र.	विषय सामग्री		आवंटित अंक	कालखण्ड
01	गद्य, पद्य, व्याकरण	(8+5+2)	15	24
02	गद्य, पद्य, व्याकरण	(5+5+2)	12	20
03	गद्य, पद्य,	(5+5)	10	20
04	गद्य, पद्य, व्याकरण	(5+2)	07	18
05	पद्य, गद्य, हिन्दी साहित्य का इतिहास	(5+2+2)	09	22
06	पद्य, गद्य, व्याकरण	(5+2)	07	20
07	पद्य, गद्य, पत्र साहित्य	(5+2)	07	24
08	गद्य, पद्य, व्याकरण			
	छत्तीसगढ़ी कविताएँ	(8+2+2)	12	22
09	पत्र लेखन,अपठित गद्यांश	(8+5)	13	10
10	निबंध लेखन	(8)	08	—
	योग	100	100	180

टीपः—

(1) 2 अंक वाले प्रश्नों की संख्या 9 , कुल अंक = 18

(2) 5 अंक वाले प्रश्नों की संख्या 10, कुल अंक = 50

(3) 8 अंक वाले प्रश्नों की संख्या 04, कुल अंक = 32

कुल प्रश्नों की संख्या 23, कुल अंक =100

(4) व्याकरण के अतिरिक्त पाठ्यपुस्तक से भी 2 अंक वाले प्रश्न पूछे जा सकते हैं।

(5) शिक्षक प्रत्येक इकाई में विविध विषयों पर निबंध का अभ्यास कराएँ।

(6) किसी भी इकाई से गद्य एवं पद्य की व्याख्या पूछी जा सकती है। किन्तु प्रश्न उसी पाठ से न पूछे जाएँ।

अनुक्रमणिका

क्र.	पाठ	पाठ का नाम	विधा	लेखक/कवि	पृष्ठ
1.	1	क्या लिखूँ	निबंध	पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी	1 –6
	2	श्रद्धा–भक्ति	निबंध	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल	7–13
	3	कबीर की साखियाँ	कविता	संत कबीर	14–17
		रस	व्याकरण		18–19
2.	4	उद्धव प्रसंग	कविता	जगन्नाथदास रत्नाकर	20–22
	5	उसने कहा था	कहानी	चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी'	23–32
	6	सूखी डाली	एकांकी	उपेन्द्रनाथ 'अश्क'	33–51
	मुहावरे–लोकोक्तियाँ	–	–	–	52
3.	7	विश्वमंदिर	निबंध	वियोगी हरि	53–56
	8	मृत्तिका	कविता	नरेश मेहता	57–59
	9	मानसरोवर खंड	कविता	मलिक मुहम्मद जायसी	60–63
4.	10	बेजुबान	बस्तर का जनजीवन	डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा	64–72
	11	प्रेम को मंत्र	कविता	घनानंद	73–77
	अलंकार	–	–	–	78–79
5.	12	मैं तुम लोगों से दूर हूँ	कविता	गजानन माधव मुक्तिबोध	80–82
	13	चीनी फेरीवाला	रेखाचित्र	महादेवी वर्मा	83–90
	हिन्दी साहित्य का इतिहास		–	–	91–96
6.	14	संध्या सुंदरी	कविता	सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'	97–99
	15	फ्री स्टाइल गवाही	हास्य–व्यंग्य	काका हाथरसी	100–108
	छन्द –	–	–		109–110
7.	16	नौका विहार	कविता	सुमित्रानंदन पंत	111–116
	17	निंदा रस	हास्य–व्यंग्य	हरिशंकर परसाई	117–121
	18	सुभाषचन्द्र बोस का पत्र एस.सी. केलकर के नाम	पत्र–साहित्य	सुभाषचन्द्र बोस	122–125
8.	19	सहयोग श्रम और शांति	कविता	रामधारी सिंह दिनकर	126–131

अनुक्रमणिका

क्र.	पाठ	पाठ का नाम	विधा	लेखक / कवि	पृष्ठ
9.	20	आशा सर्ग से	कविता	जयशंकर प्रसाद	133–135
	21	चुरकी अउ मुरकी	लोककथा	(संकलित)	136–140
	22	छत्तीसगढ़ी कविताएँ		(संकलित) डॉ. दामोदर प्रसाद तिवारी	141–146
		वाक्य संरचना	व्याकरण	(संकलित)	147–148
10.		पत्र लेखन, अपठित गद्यांश		(संकलित)	149–156
11.		निबंध लेखन		(संकलित)	157–159

इकाई – 1

पाठ – 1
क्या लिखूँ
पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी

(1) जीवन परिचय – द्विवेदी युग के प्रतिष्ठित साहित्यकार पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी का जन्म सन् 1894 में छत्तीसगढ़ के खैरागढ़ राज्य में हुआ एवं निधन सन् 1971 को रायपुर में हुआ।

(2) रचनाएँ – (अ) निबंध – प्रदीप, पंचपात्र, मेरे प्रिय निबंध।

(ब) आलोचना – हिन्दी साहित्य विमर्श, विश्व–साहित्य, हिन्दी कहानी साहित्य।

(स) कविता – शतदल

(3) साहित्यिक विशेषताएँ – (1) बख्शी जी के निबंधों के विषय साहित्यिक एवं सामाजिक दोनों ही हैं।

(2) द्विवेदी युग की छाप बख्शी जी पर है।

(3) वे राष्ट्र और समाज की प्रगति के लिए भी जागरूक रहे।

(4) सामाजिक जीवन की रूढ़ियों पर बख्शी जी ने प्रहार किया।

(5) साहित्य के सिद्धांतों पर भी बख्शी जी ने समीक्षात्मक निबंध लिखे हैं।

(4) भाषा शैली – बख्शी जी की भाषा सजीव, प्रभावपूर्ण एवं सरस है। उन्होंने उर्दू, फारसी तथा अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रयोग किया है। भाषा में मुहावरों तथा लोकोक्तियों का भी सुंदर प्रयोग हुआ है।

बख्शी जी ने अपने निबंधों में प्रमुखतः विवेचनात्मक एवं भावात्मक शैली का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त व्यंग्यात्मक शैली, उद्धरण शैली का प्रयोग हुआ है। हास्यपुट उनकी शैली की विशेषता है।

(5) साहित्य में स्थान – हिन्दी साहित्य में बख्शी जी का विशिष्ट स्थान है। विषय की विविधता, भाषा की सरसता एवं सरलता के लिए आप सदैव स्मरणीय रहेंगे।

निबंध –

क्या लिखूँ ?

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी

केन्द्रीय भाव–('क्या लिखूँ' निबंध में निबंधकार ने एक ओर जहाँ आदर्श निबंध लेखन को स्पष्ट किया है, वहीं दूसरी ओर युवा और वृद्ध दो भिन्न पीढ़ियों के दृष्टिकोण में अंतर को स्पष्ट किया है।)

मुझे आज लिखना ही पड़ेगा। अंग्रेजी के प्रसिद्ध निबंध लेखक ए.जी. गार्डिनर का कथन है कि लिखने की एक विशेष मानसिक स्थिति होती है। उस समय मन में कुछ ऐसी उमंग–सी उठती है, हृदय में कुछ ऐसी स्फूर्ति सी आती है, मस्तिष्क में कुछ ऐसा आवेग–सा उत्पन्न होता है कि लेख लिखना ही पड़ता है। उस समय विषय की चिन्ता नहीं रहती। कोई भी विषय हो, उसमें हम अपने हृदय के आवेग को भर ही देते हैं। हैट टाँगने के लिए कोई भी खूँटी काम दे सकती है। उसी तरह अपने मनोभावों को व्यक्त करने के लिये कोई भी विषय उपयुक्त है। असली वस्तु है हैट, खूँटी नहीं। इसी तरह मन के भाव ही तो यथार्थ वस्तु हैं, विषय नहीं। गार्डिनर साहब के इस कथन की यथार्थता में मुझे संदेह नहीं, पर मेरे लिए कठिनता यह है कि मैंने उस मानसिक स्थिति का अनुभव ही नहीं किया है, जिसमें भाव अपने आप उपस्थित हो जाते हैं। मुझे तो सोचना पड़ता है, चिंता करनी पड़ती है, परिश्रम करना पड़ता है, तब ही मैं एक निबंध लिख सकता हूँ। आज तो मुझे विशेष परिश्रम करना पड़ेगा, क्योंकि मुझे कोई आदर्श निबंध लिखना होगा। नमिता का आदेश है कि मैं "दूर के ढोल सुहावने होते हैं।" इस विषय पर लिखूँ। ये दोनों ही विषय परीक्षा में आ चुके हैं और इन दोनों पर आदर्श निबंध लिखकर मुझे उन दोनों को निबंध–रचना का रहस्य समझाना पड़ेगा।

"दूर के ढोल सुहावने होते हैं।" पर क्या वे इतने सुहावने होते हैं कि उन पर पाँच पेज लिखे जा सकें? इसी प्रकार जिस समाज–सुधार की चर्चा अनादिकाल से लेकर आज तक होती आ रही है और जिसके संबंध में बड़े–बड़े विज्ञों में भी विरोध है, उसको मैं पाँच पेजों में कैसे लिख दूँ? मैंने सोचा कि सबसे पहले निबंध शास्त्र के आचार्यों की सम्मति जान लूँ। पहले यही तो समझ लूँ कि आदर्श निबंध क्या है और यह कैसे लिखा जाता है, तब फिर मैं विषय की चिंता करूँगा। इसीलिए मैंने निबंध शास्त्र के कई आचार्यों की रचनाएँ देखीं। एक विद्वान का कथन है कि निबंध छोटा होना चाहिए। छोटा निबंध बड़े की अपेक्षा अधिक अच्छा होता है, क्योंकि बड़े निबंध में रचना की सुंदरता नहीं बनी रह सकती। इस कथन को मान लेने में ही मेरा लाभ है। मुझे छोटा ही निबंध लिखना है, बड़ा नहीं। पर लिखूँ कैसे?निबंध–शास्त्र के उन्हीं आचार्य महोदय का कथन है कि निबंध के दो प्रधान अंग हैं– सामग्री और शैली। पहले तो मुझे सामग्री एकत्र करनी होगी, विचार–समूह संचित करना होगा। इसके लिए मुझे मनन करना चाहिए। यह तो सच है कि जिसने जिस विषय का अच्छा अध्ययन किया है, उसके मस्तिष्क में उस विषय के विचार आते हैं पर यह कौन, जानता था कि 'दूर के ढोल सुहावने' पर भी निबंध लिखने की आवश्यकता होगी। यदि यह बात पहले से ज्ञात होती तो पुस्तकालय में जाकर इस विषय का अनुसंधान कर लेता, पर अब समय नहीं है। मुझे तो यहीं बैठकर दो ही घंटों में दो निबंध तैयार करने होंगे। यहाँ न तो विश्वकोश है और न कोई ऐसा ग्रंथ

जिसमें इन विषयों की सामग्री उपलब्ध हो सके। अब तो मुझे अपने ही ज्ञान पर विश्वास कर लिखना होगा।

विज्ञों का कथन है कि निबंध लिखने के पहले उसकी रूपरेखा बना लेनी चाहिए। अतएव सबसे पहले मुझे 'दूर के ढोल सुहावने' की रूपरेखा बनानी है। मैं सोच ही नहीं सकता कि इस विषय की कैसी रूपरेखा है। निबंध लिख लेने के बाद मैं उसका सारांश कुछ ही वाक्यों में भले ही लिख दूँ पर निबंध लिखने के पहले उसका सार दस–पाँच शब्दों में कैसे लिखा जाए ? क्या सचमुच हिन्दी के सब विज्ञ लेखक पहले से अपने–अपने निबंधों के लिए रूपरेखा तैयार कर लेते हैं? ए0जी0 गार्डिनर को तो अपने लेखों के शीर्षक बनाने में ही सबसे अधिक कठिनाई होती है। उन्होंने लिखा है कि मैं लेख लिखता हूँ, शीर्षक देने का भार मैं अपने मित्र पर छोड़ देता हूँ। उन्होंने यह भी लिखा है कि शेक्सपियर को भी नाटक लिखने में जितनी कठिनता न हुई होगी उतनी कठिनता नाटकों के नामकरण में हुई होगी। तभी तो घबराकर नाम न रख सकने के कारण उन्होंने अपने एक नाटक का नाम रखा 'जैसा तुम चाहो'। इसलिए मुझसे तो यह रूपरेखा न होगी। अब मुझे शैली निश्चित करनी है। आचार्य महोदय का कथन है कि भाषा में प्रवाह होना चाहिए। इसके लिए वाक्य छोटे–छोटे हों, पर एक दूसरे से संबद्ध। यह तो बिल्कुल ठीक है। मैं छोटे–छोटे वाक्य अच्छी तरह लिख सकता हूँ पर मैं हूँ मास्टर। कहीं नमिता और अमिता यह न समझ बैठें कि मैं यह निबंध बहुत मोटी अक्ल वालों के लिए लिख रहा हूँ। अपनी विद्वता का प्रदर्शन करने के लिए, अपना गौरव स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि वाक्य कम से कम आधे पृष्ठ में तो समाप्त हों। बाणभट्ट ने कादम्बरी में ऐसे ही वाक्य लिखे हैं। वाक्यों में कुछ अस्पष्टता चाहिए, क्योंकि यह अस्पष्टता या दुर्बोधता गाम्भीर्य ला देती है। इसीलिए संस्कृत के प्रसिद्ध कवि श्री हर्ष ने जान–बूझकर अपने काव्य में ऐसी गुत्थियाँ डाल दी हैं, जो अज्ञों से न सुलझ सकें और सेनापति ने भी अपनी कविता मूढ़ों के लिए दुर्बोध कर दी है। तभी तो अलंकारों, मुहावरों और लोकोक्तियों का समावेश भी निबंधों के लिए आवश्यक बतलाया जाता है। तब क्या किया जाए ?

अंग्रेजी के निबंधकारों ने एक दूसरी ही पद्धति को अपनाया है। उनके निबंध इन आचार्यों की कसौटी पर भले ही खरे सिद्ध न हों, पर अंग्रेजी साहित्य में उनका मान अवश्य है। उस पद्धति के जन्मदाता मानटेन समझे जाते हैं। उन्होंने स्वयं जो कुछ देखा, सुना और अनुभव किया उसी को अपने प्रबंधों में लिपिबद्ध कर दिया। पाश्चात्य साहित्य में ऐसे निबंधों का विकास आधुनिक युग में हुआ है। आख्यायिका की तरह वह निबंध–कला भी आधुनिक युग की रचना है। ऐसे निबंधों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे मन की स्वच्छंद रचनाएँ हैं। उनमें न कवि की उदात्त कल्पना रहती है, न आख्यायिका लेखक की सूक्ष्म दृष्टि और न विज्ञों की गंभीर तर्कपूर्ण विवेचना। उनमें लेखक की सच्ची अनुभूति रहती है, उनमें उसके सच्चे भावों की सच्ची अभिव्यक्ति होती है, उनमें उसका उल्लास रहता है। कवि उच्च मार्ग से प्रेरित होकर काव्य की रचना करते हैं, विद्वान ज्ञान की कसौटी पर सत्य की परीक्षा कर निबंध लिखते हैं। आख्यायिका लेखक कल्पना के द्वारा मनुष्य जीवन का रहस्य प्रत्यक्ष कराने के लिए **चरित्र–वैचित्र्य** और **घटना–वैचित्र्य** की **सृष्टि** करते हैं। पर ये निबंध तो उस मानसिक स्थिति में लिखे जाते हैं, जिसमें न ज्ञान की गरिमा रहती है और न कल्पना की महिमा, जिसमें जीवन

का गौरव भूलकर हम अपने में ही लीन हो जाते हैं, जिसमें हम संसार को अपनी ही दृष्टि से देखते हैं और अपने ही भाव से ग्रहण करते हैं। तब इसी पद्धति का अनुसरण कर मैं भी क्यों निबंध लिखूँ ? पर मुझे तो दो निबंध लिखने होंगे।

मुझे अमीर खुसरो की कहानी याद आई। एक बार प्यास लगने पर वे एक कुएँ के पास पहुँचे। वहाँ चार औरतें पानी भर रहीं थीं। पानी माँगने पर पहले उनमें से एक ने खीर पर कविता सुनने की इच्छा प्रकट की, दूसरी ने चर्खे पर, तीसरी ने कुत्ते पर और चौथी ने ढोल पर। अमीर खुसरो प्रतिभावान थे, उन्होंने एक ही पद्य में चारों की इच्छाओं की पूर्ति कर दी। उन्होंने कहा–

खीर पकाई जतन से, चर्खा दिया चलाये,
आया कुत्ता खा गया, तू बैठी ढोल बजाये।

मुझमें खुसरो की प्रतिभा नहीं है पर उनकी इस पद्धति को स्वीकार करने से मेरी कठिनाई आधी रह जाती है। मैं भी एक ही निबंध में इन दोनों विषयों का समावेश कर दूँगा, एक ही ढेले से दो चिड़ियाँ मार लूँगा।

दूर के ढोल सुहावने होते हैं, क्योंकि उनकी कर्कशता दूर तक नहीं पहुँचती। जब ढोल के पास बैठे हुए लोगों के कान के पर्दे फटते रहते हैं, तब दूर किसी नदी के तट पर संध्या समय, किसी दूसरे के कान में वही शब्द मधुरता का संचार कर देते हैं। ढोल के उन्हीं शब्दों को सुनकर वह अपने हृदय में किसी के विवाहोत्सव का चित्र अंकित कर लेता है। कोलाहल से पूर्ण घर के एक कोने में बैठी हुई किसी लज्जाशील नववधू की कल्पना वह अपने मन में कर लेता है। उस नववधू के प्रेम, उल्लास, संकोच, आशंका और विषाद से युक्त हृदय के कंपन, ढोल की उस कर्कश ध्वनि को मधुर बना देते हैं। सच तो यह है कि ढोल की ध्वनि के साथ आनंद का कलरव, उत्सव का प्रमोद और प्रेम का संगीत ये तीनों मिले रहते हैं। तभी उनकी कर्कशता समीपस्थ लोगों को भी कटु नहीं प्रतीत होती और दूरस्थ लोगों के लिए तो यह अत्यंत मधुर बन जाती है।

यह बात सच है कि दूर रहने से हमें यथार्थता की कठोरता का अनुभव नहीं होता। यही कारण है कि जो तरुण संसार के जीवन संग्राम से दूर हैं, उन्हीं को संसार का चित्र बड़ा ही मनमोहक प्रतीत होता है। प्रेम की वेदना ही उनके लिए वेदना है। प्रियतमा की निष्ठुरता ही उनके लिए निष्ठुरता है। प्रेम का व्यवसाय ही उनका एक व्यवसाय है। प्रेम ही उसके लिए आटा–दाल है और प्रेम ही उनका सर्वस्व है। ये प्रियतमा की गोद में रोग की यंत्रणा भूल जाते हैं। प्रियतमाएँ भी संध्या के समय में प्रियतम के अंक में मृत्यु का अनुभव करने के लिए लंबी यात्रा का कष्ट सह लेती हैं। तरुणों के लिए रोग और मृत्यु दोनों सुखद हैं, क्योंकि दोनों में प्रेम की मधुरता है पर संसार में प्रविष्ट होते ही प्रेम का यह कल्पित संसार न जाने कहाँ विलीन हो जाता है। तब उन्हें ढोल की कर्कशता मालूम हो जाती है।

जो वृद्ध हो गए हैं, जो अपनी बाल्यावस्था और तरुणावस्था से दूर हट आए हैं, उन्हें अपने अतीतकाल की स्मृति बड़ी सुखद लगती है। वे अतीत का ही स्वप्न देखते हैं। तरुणों के लिए जैसे भविष्य उज्जवल होता है वैसे ही वृद्धों के लिए अतीत। वर्तमान से दोनों को असंतोष होता है। तरूण भविष्य को वर्तमान में लाना चाहते हैं और वृद्ध अतीत को खींचकर वर्तमान में देखना चाहते हैं। तरुण क्रांति के समर्थक होते हैं और वृद्ध अतीत के गौरव के संरक्षक। इन्हीं दोनों के कारण वर्तमान सदैव क्षुब्ध रहता है और इसी से वर्तमान काल सदैव सुधारों का काल बना रहता है।

मनुष्य जाति के इतिहास में कोई ऐसा काल ही नहीं हुआ जब सुधारों की आवश्यकता न हुई हो। तभी तो आज तक कितने ही सुधारक हो गए हैं पर सुधारों का अंत कब हुआ है ? भारत के इतिहास में बुद्ध देव, महावीर स्वामी, नागार्जुन, शंकराचार्य, कबीर, नानक, राजा राममोहन राय, स्वामी दयानंद और महात्मा गाँधी में ही सुधारकों की गणना समाप्त नहीं होती। सुधारकों का दल नगर–नगर, गाँव–गाँव में होता है। यह सच है कि जीवन में नए–नए दोष उत्पन्न होते जाते हैं और नए–नए सुधार होते जाते हैं। न दोषों का अंत है और न सुधारों का। जो कभी सुधार थे, वही आज दोष हो गए हैं और उन सुधारों का फिर नवसुधार किया जाता है। तभी तो यह जीवन प्रगतिशील माना गया है।

हिन्दी में भी प्रगतिशील साहित्य का निर्माण हो रहा है। उसके निर्माता यह समझ रहे हैं कि उनके साहित्य में भविष्य का गौरव निहित है पर कुछ ही समय के बाद उनका यह साहित्य भी अतीत का स्मारक हो जाएगा और आज जो तरुण हैं, वे वृद्ध होकर अतीत के गौरव का स्वप्न देखेंगे। उसके स्थान में तरुणों का फिर दूसरा दल आ जाएगा जो भविष्य का स्वप्न देखेगा। दोनों के ही स्वप्न सुखद होते हैं, क्योंकि दूर के ढोल सुहावने होते हैं।

अभ्यास के प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) ए0जी0 गार्डिनर कौन थे ?

(2) निबंध के दो प्रधान अंग कौन–कौन से हैं ?

(3) 'दूर के ढोल सुहावने होते हैं' कहावत का क्या अर्थ होता है ?

(4) 'सेनापति' कौन थे ?

(5) 'कर्कशता' शब्द में कौन–सा प्रत्यय है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) शेक्सपियर कौन थे, उन्हें नाटक लिखते समय क्या कठिनाई होती थी ?

(2) प्रस्तुत पाठ में आए संस्कृत साहित्यकार एवं उनकी रचना का क्या नाम है ?

(3) निबंध के बारे में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की परिभाषा क्या है ?

(4) खूँटी और टोपी से लेखक का क्या आशय है ? स्पष्ट कीजिए।

(5) आख्यायिका और निबंध में क्या अंतर है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) आदर्श निबंध की कौन–कौन–सी विशेषताएँ होती हैं ?

(2) वर्तमान काल हमेशा सुधारों का काल क्यों बना रहता है ?

(3) प्रगतिशील जीवन को निबंधकार ने किस प्रकार परिभाषित किया है ?

(4) स्वच्छंदतावादी पद्धति में लिखे गए निबंध की कौन–कौन सी विशेषताएँ हैं ?

(5) मानव समाज में निरंतर सुधार प्रक्रिया जारी क्यों रहती है ?

व्याख्यात्मक प्रश्न

निम्नलिखित गद्यांशों की ससंदर्भ व्याख्या कीजिए–

(क) अपनी विद्वता————————जाता है।

(ख) अंग्रेजी के——————————देते हैं।

शब्दार्थ

अनुसंधान	=	अन्वेषण (खोज)।	**कर्कशता**	=	कठोरता।
आविष्कार	=	नई खोज।	**निष्ठुरता**	=	क्रूरता।
आवेग	=	उत्तेजना।	**संरक्षक**	=	रक्षा करने वाला।
विज्ञों	=	जानकारों।	**सम्मति**	=	राय।
मनन	=	विचार।	**शैली**	=	लिखने या बोलने का ढंग।
दुर्बोधता	=	कठिनता।			
गांभीर्य	=	गंभीरता।	**रहस्य**	=	राज या भेद।
आख्यायिका	=	कहानी।	**पाश्चात्य**	=	पश्चिमी।
चरित्र्य–वैचित्र्य	=	असाधारण चरित्र।			

पाठ – 2
श्रद्धा–भक्ति
आचार्य रामचंद्र शुक्ल

(1) जीवन परिचय – आचार्य रामचंद्र शुक्ल का जन्म सन् 1884 में उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के अंतर्गत अगोना नामक गाँव में हुआ था। उन्होंने इंटरमीडियट तक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् मिर्जापुर के मिशन स्कूल में अध्यापन कार्य आरंभ किया। साहित्य साधना के प्रति उनके मन में स्वाभाविक लगाव था, जिसके कारण वे पत्र–पत्रिकाओं में अपने आलेख प्रकाशित करने लगे। उनकी विद्वता से प्रभावित होकर काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने उन्हें 'हिन्दी सागर' के संपादक मंडल में नियुक्त किया। इस कार्य में उन्होंने अपनी योग्यता का प्रशंसनीय परिचय दिया, जिसके फलस्वरूप बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में इनकी नियुक्ति हुई।

(2) jpuk¸ ¡ –

(अ) निबंध संग्रह – चिन्तामणि (दो भाग)

(ब) समीक्षा – जायसी ग्रंथावली, तुलसी ग्रंथावली, भ्रमरगीतसार।

(स) अनुवाद – 'बुद्धचरित' के नाम से 'लाइट ऑफ एशिया' का सफल अनुवाद।

(3) साहित्यिक विशेषताएँ –

(1) आचार्य शुक्ल ने क्रोध, उत्साह आदि विषयों पर मनोवैज्ञानिक निबंध लिखे।

(2) आपने हिन्दी साहित्य का क्रमिक विकास प्रस्तुत किया।

(3) आपकी विषय–वस्तु में विविधता है।

(4) उनके निबंध के विषय मूलतः साहित्य समीक्षा से जुड़े हैं।

(5) उनकी समीक्षा में सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक समीक्षा के मिले–जुले पक्ष समाहित हैं।

(4) भाषा–शैली – आचार्य शुक्ल की भाषा विशुद्ध खड़ी बोली है। आपकी रचनाओं में तत्सम शब्दों का बाहुल्य है। कहीं–कहीं अंग्रेजी भाषा का भी प्रयोग है। मुहावरों का प्रयोग भी हुआ है।

आपकी कृतियों में समीक्षात्मक, गवेषणात्मक, भावात्मक एवं व्यंग्य प्रधान शैली दृष्टिगोचर होते हैं।

(5) साहित्य में स्थान – आचार्य शुक्ल आधुनिक काल के श्रेष्ठ निबंधकार हैं। आपने हिन्दी निबंध–साहित्य को समृद्ध किया। अपनी समीक्षात्मक कृतियों की मौलिकता और प्रौढ़ता के बल पर एक युग तक हिन्दी समीक्षा का नेतृत्व किया। हिन्दी समीक्षा के कीर्ति स्तंभ के रूप में आचार्य शुक्ल सदैव प्रतिस्थापित रहेंगे।

श्रद्धा – भक्ति

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

केन्द्रीय भाव– ('श्रद्धा – भक्ति' निबंध में निबंधकार ने श्रद्धा, प्रेम और भक्ति नामक मनोभावों की अभिव्यक्ति सोदाहरण की है। ये तीनों भाव सामाजिक कल्याण की दृष्टि से आवश्यक हैं।)

किसी मनुष्य में जन–साधारण से विशेष गुण व शक्ति का विकास देख उसके सम्बन्ध में जो एक स्थायी आनन्द–पद्धति हृदय में स्थापित हो जाती है, उसे श्रद्धा कहते हैं। श्रद्धा महत्व की आनन्दपूर्ण स्वीकृति के साथ–साथ **पूज्य बुद्धि** का संचार है। यदि हमें निश्चय हो जायेगा कि कोई मनुष्य बड़ा वीर, बड़ा सज्जन, बड़ा गुणी, बड़ा विद्वान, बड़ा परोपकारी व बड़ा धर्मात्मा है तो वह हमारे आनन्द का एक विषय हो जाएगा। हम उसका नाम आने पर प्रशंसा करने लगेंगे, उसे सामने देख आदर से सिर नवायेंगे, किसी प्रकार का स्वार्थ न रहने पर भी हम सदा उसका भला चाहेंगे, उसकी बढ़ती से प्रसन्न होंगे और अपनी पोषित **आनन्द–पद्धति** में व्याघात पहुँचने के कारण उसकी निन्दा न सह सकेंगे। इससे सिद्ध होता है कि जिन कर्मों के प्रति श्रद्धा होती है उनका होना संसार को वांछित है। यही विश्वकामना श्रद्धा की प्रेरणा का मूल है।

प्रेम और श्रद्धा में अन्तर यह है कि प्रेम के स्वाधीन कार्यों पर उतना निर्भर नहीं–कभी–कभी किसी का रूप मात्र, जिसमें उसका कुछ भी हाथ नहीं, उसके प्रति प्रेम उत्पन्न होने का कारण होता है। पर श्रद्धा ऐसी नहीं है। किसी की सुंदर आँख या नाक देखकर उसके प्रति श्रद्धा नहीं उत्पन्न होगी, प्रीति उत्पन्न हो सकती है। प्रेम के लिए इतना ही बस है कि कोई मनुष्य हमें अच्छा लगे; पर श्रद्धा के लिए आवश्यक यह है कि कोई मनुष्य किसी बात में बढ़ा हुआ होने के कारण हमारे सम्मान का पात्र हो। श्रद्धा का व्यापार स्थल विस्तृत है, प्रेम का एकान्त। प्रेम में घनत्व अधिक है और श्रद्धा में विस्तार। किसी मनुष्य से प्रेम रखने वाले दो एक ही मिलेंगे, पर उस पर श्रद्धा रखने वाले सैकड़ों, हजारों, लाखों क्या करोड़ों मिल सकते हैं। सच पूछिए तो इसी श्रद्धा के आश्रय से उन कर्मों के महत्व का भाव दृढ़ होता रहता है, जिन्हें धर्म कहते हैं और जिनसे मनुष्य–समाज की स्थिति है। कर्ता से बढ़कर कर्म का स्मारक दूसरा नहीं। कर्म की क्षमता प्राप्त करने के लिए बार–बार कर्ता ही की ओर आँख उठती है। कर्मों से कर्ता की स्थिति को जो मनोहरता प्राप्त हो जाती है, उस पर मुग्ध होकर बहुत से प्राणी उन कर्मों की ओर प्रेरित होते हैं। कर्ता अपने सत्कर्म द्वारा एक विस्तृत क्षेत्र में मनुष्य की सद्वृत्तियों के आकर्षण का एक शक्ति–केन्द्र हो जाता है। जिस समाज में किसी ऐसे ज्योतिष्मान् शक्ति–केन्द्र का उदय होता है, उस समाज में भिन्न–भिन्न हृदयों से शुभ भावनाएँ मेघखण्डों के समान उठकर तथा एक ओर और एक साथ अग्रसर होने के कारण परस्पर मिलकर, इतनी घनी हो जाती हैं कि उनकी घटा–सी उमड़ पड़ती है और मंगल की ऐसी वर्षा होती है कि सारे दुःख और क्लेश बह जाते हैं।

हमारे अन्तःकरण में प्रिय के आदर्श रूप का संघटन उसके शरीर या व्यक्ति मात्र के आश्रय से हो सकता है पर श्रद्धेय के आदर्श रूप का संघटन उसके फैलाये हुए कर्म–तन्तु के उपादान से होता है। प्रिय का चिन्तन हम आँख मूँदे हुए, संसार को भुलाकर, करते हैं; पर श्रद्धेय

का चिन्तन हम आँख खोले हुए, संसार का कुछ अंश सामने रखकर करते हैं। यदि प्रेम स्वप्न है, तो श्रद्धा जागरण है। प्रेमी प्रिय को अपने लिए और अपने को प्रिय के लिए संसार से अलग करना चाहता है। प्रेम में केवल दो पक्ष होते हैं, श्रद्धा में तीन। प्रेम में कोई मध्यस्थ नहीं, पर श्रद्धा में मध्यस्थ अपेक्षित है। प्रेमी और प्रिय के बीच कोई और वस्तु अनिवार्य नहीं, पर श्रद्धालु और श्रद्धेय के बीच कोई वस्तु चाहिए। इस बात का स्मरण रखने से यह पहचानना उतना कठिन न रह जायेगा कि किसी के प्रति किसी का कोई आनन्दान्तर्गत भाव प्रेम है या श्रद्धा। यदि किसी कवि का काव्य बहुत अच्छा लगा, किसी चित्रकार का बनाया चित्र बहुत सुन्दर जँचा और हमारे चित्त में उस कवि या चित्रकार के प्रति एक सुहृद्–भाव उत्पन्न हुआ तो वह श्रद्धा है; क्योंकि यह काव्य या चित्ररूप मध्यस्थ द्वारा प्राप्त हुआ है।

प्रेम का कारण बहुत कुछ अनिर्दिष्ट और अज्ञात होता है पर श्रद्धा का कारण निर्दिष्ट और ज्ञात होता है। कभी–कभी केवल एक साथ रहते–रहते दो प्राणियों में यह भाव उत्पन्न हो जाता है कि वे बराबर साथ रहें उनका साथ कभी न छूटे। प्रेमी प्रिय के सम्पूर्ण जीवन–क्रम के सतत साक्षात्कार का अभिलाषी होता है। वह उसका उठना–बैठना, चलना–फिरना, सोना, खाना–पीना, सब कुछ देखना चाहता है। संसार में बहुत से लोग उठते–बैठते, चलते–फिरते हैं, पर सबका उठना–बैठना, चलना–फिरना उसको वैसा अच्छा नहीं लगता। प्रेमी प्रिय के जीवन को अपने जीवन से मिलाकर एक निराला मिश्रण तैयार करना चाहता है। वह दो से एक करना चाहता है। सारांश यह कि श्रद्धा में दृष्टि पहले कर्मों पर से होती हुई श्रद्धेय तक पहुँचती है और प्रीति में प्रिय पर से होती हुई उसके कर्मों आदि पर जाती है। एक में व्यक्ति को कर्मों द्वारा, मनोहरता प्राप्त होती है दूसरी में कर्मों को व्यक्ति द्वारा। एक में कर्म प्रधान है, दूसरे में व्यक्ति।

किसी के रूप को स्वयं देखकर हम तुरंत मोहित होकर उससे प्रेम कर सकते हैं, पर उसके रूप की प्रशंसा किसी दूसरे से सुनकर चट हमारा प्रेम नहीं उमड़ पड़ेगा। कुछ काल तक हमारा भाव लाभ के रूप में रहेगा, पीछे वह प्रेम में परिणित हो सकता है। यह बात है कि प्रेम मात्र एक अपने ही अनुभव पर निर्भर रहता है; पर श्रद्धा अपनी सामाजिक विशेषता के कारण दूसरों के अनुभव पर भी जगती है। रूप की भावना का बहुत कुछ सम्बन्ध व्यक्तिगत रुचि से होता है। अतः किसी के रूप और हमारे बीच यदि तीसरा व्यक्ति आया तो इस व्यापार में सामाजिकता आ गई; क्योंकि हमें उस समय यह ध्यान हुआ कि उस रूप से एक तीसरे व्यक्ति को आनन्द या सुख मिला और हमें भी मिल सकता है। जब तक हम किसी के रूप का बखान सुनकर वाह–वाह करते जायेंगे, तब तक हम एक प्रकार के लोभी अथवा रीझने वाले या कद्रदान ही कहलाएँगे, पर जब हम उसके दर्शन के लिए आकुल होंगे, उसे बराबर अपने सामने ही रखना चाहेंगे, तब प्रेम का सूत्रपात समझा जाएगा। श्रद्धा–भाजन पर श्रद्धावान अपना किसी प्रकार का अधिकार नहीं चाहता, पर प्रेमी प्रिय के हृदय पर अपना अधिकार चाहता है।

श्रद्धा एक सामाजिक भाव है, इससे अपनी श्रद्धा के बदले में हम श्रद्धेय से अपने लिए कोई बात नहीं चाहते। श्रद्धा धारण करते हुए हम अपने को उस समाज में समझते हैं जिसके किसी अंश पर चाहे हम व्यष्टि रूप में उसके अन्तर्गत न भी हों, जान–बूझकर उसने कोई शुभ प्रभाव डाला। श्रद्धा स्वयं ऐसे कर्मों के प्रतिकार में होती है।

जिनका शुभ प्रभाव अकेले हम पर नहीं, बल्कि सारे मनुष्य समाज पर पड़ सकता है। श्रद्धा एक ऐसी आनन्दपूर्ण कृतज्ञता है, जिसे हम केवल समाज के प्रतिनिधि रूप में प्रकट करते हैं। सदाचार पर श्रद्धा और अत्याचार पर क्रोध या घृणा प्रकट करने के लिए समाज ने प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिनिधित्व प्रदान कर रखा है। स्थूल रूप से श्रद्धा तीन प्रकार की कही जा सकती है–

1. प्रतिभा–सम्बन्धिनी,
2. शील–सम्बन्धिनी,
3. साधन–सम्पत्ति–सम्बन्धिनी।

प्रतिभा से मेरा अभिप्राय अन्तःकरण की उस उद्‌भाविका क्रिया से है जिसके द्वारा कला, विज्ञान आदि नाना क्षेत्रों में नई–नई बातें या कृतियाँ उपस्थित की जाती हैं। यह ग्रहण और धारण–शक्ति से भिन्न हैं, जिसके द्वारा इधर–उधर से प्राप्त ज्ञान (विद्वता) संचित किया जाता है। कला–सम्बन्धिनी श्रद्धा के लिए श्रद्धालु में भी थोड़ी–बहुत मार्मिक निपुणता चाहिए, इससे उसका अभाव कोई भारी त्रुटि नहीं, वह क्षम्य है। यदि किसी उत्तम काव्य या चित्र की विशेषता न समझने के कारण हम कवि या चित्रकार पर श्रद्धा न कर सके तो यह हमारा अनाड़ीपन है, हमारे रुचि–संस्कार की त्रुटि है। इसका उपाय यही है कि समाज कला सम्बन्धिनी मर्मज्ञता के प्रचार की व्यवस्था करे, जिससे विविध कलाओं के सामान्य आदर्श की स्थापना जन–समूह में हो जाए। पर इतना होने पर भी कला सम्बन्धिनी रुचि की विभिन्नता थोड़ी बहुत अवश्य रहेगी। अश्रद्धालु रुचि का नाम लेकर ईर्ष्या या अहंकार के दोषारोपण से बच जाया करेंगे।

पर शील–सम्बन्धिनी श्रद्धा प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है। शील या धर्म के सामान्य लक्षण संसार के प्रत्येक सभ्य जन–समुदाय में प्रतिष्ठित हैं। धर्म ही से मनुष्य–समाज की स्थिति है अतः उसके सम्बन्ध में किसी प्रकार का रूचि–भेद, मत–भेद आदि नहीं। सदाचारी के प्रति यदि हम श्रद्धा नहीं रखते तो समाज के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं करते। यदि किसी को दूसरों के कल्याण के लिए भारी स्वार्थ–त्याग करते देख हमारे मुँह से धन्य–धन्य भी न निकला तो हम समाज के किसी काम के न ठहरे, समाज को हमसे कोई आशा नहीं, हम समाज में रहने योग्य नहीं। किसी कर्म में प्रवृत्त होने के पहले यह स्वीकार करना आवश्यक होता है कि वह कर्म या तो हमारे लिए या समाज के लिए अच्छा है। इस प्रकार की स्वीकृति कर्म की पहली तैयारी है। श्रद्धा द्वारा हम यह आनन्दपूर्वक स्वीकार करते हैं कि कर्म के अमुक–अमुक दृष्टान्त धर्म के हैं, अतः श्रद्धा धर्म की पहली सीढ़ी है। धर्म के इस प्रथम सोपान पर प्रत्येक मनुष्य को रहना चाहिए, जिसमें जब कभी अवसर आये तब वह कर्म–रूपी दूसरे सोपान पर हो जाय।

अब रह गई साधन–सम्पत्ति–सम्बन्धिनी श्रद्धा की बात। यहाँ पर साधन–सम्पन्नता का ठीक–ठीक भाव समझ लेना आवश्यक है। साधन–सम्पत्ति का अनुपयोग भी हो सकता है सदुपयोग भी हो सकता है और दुरूपयोग भी हो सकता है। किसी को पद्य रचने की अच्छी अभ्यास–सम्पन्नता है। यदि शिक्षा द्वारा उसके भाव उन्नत हैं, वह सहृदय है तो वह अपनी इस सम्पन्नता का उपयोग मनोहर उच्च भाव पूर्ण काव्य प्रस्तुत करने में कर सकता है यदि उसकी अवस्था ऐसी नहीं है तो वह या तो साधारण, भाव–शून्य गद्य की गीतिका, शिखरिणी आदि नाना छन्दों में परिणत करेगा या अपनी भद्दी और कुरूचिपूर्ण भावनाओं को छन्दोबद्ध करेगा। उसके इस कृत्य पर श्रद्धा रखने वाले भी बहुत मिल जाएँगे। ऐसे व्यक्ति के प्रति जो श्रद्धा

होती है वह साधन–सम्पन्नता पर ही होती है, साध्य की पूर्णता पर नहीं।

देशी कारीगरी, चित्रकारी, संगीत आदि में साधन–सम्पन्नता पर इधर बहुत दिनों से ध्यान दिया जाने लगा था। पुराने मकानों की कारीगरी देखिए तो उनमें बहुत सा काम गिचपिच दिखाई देगा। इमारत हाथ पर लेकर देखने की चीज नहीं। जिस समय कोई कलावन्त जब पक्का गाना गाने के लिए आठ अंगुल मुँह फैलाता और आआ करके विकल होता है, उस समय बड़े–बड़े धीरों का धैर्य छूट जाता है, बड़े–बड़े आलसियों का आसन डिग जाता है। काव्य पर शब्दालंकार आदि का इतना बोझ लादा गया कि उसका सारा रूप ही छिप गया। विविध कलाओं के जितने श्रमसाध्य रूप थे, वे हद से बाहर घसीटे गए।

जितने सहृदयता से संबंध रखने वाले थे उन पर ध्यान ही न रहा।

श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है। जब पूज्यभाव की वृद्धि के साथ श्रद्धा–भाजन के समीप्य लाभ की प्रवृत्ति हो, उसकी सत्ता के कई रूपों के साक्षात्कार की वासना हो, तब हृदय में भक्ति का प्रादुर्भाव समझना चाहिए। जब श्रद्धेय के दर्शन, श्रवण, कीर्तन, ध्यान आदि में आनन्द का अनुभव होने लगे, जब उससे सम्बन्ध रखने वाले श्रद्धा के विषयों के अतिरिक्त बातों की ओर भी मन आकर्षित होने लगे, तब भक्ति–रस का संचार समझना चाहिए। जब श्रद्धेय का उठना–बैठना, चलना–फिरना, हँसना–बोलना, क्रोध करना आदि भी हमें अच्छा लगने लगे, तब हम समझ लें कि हम उसके भक्त हो गए। भक्ति की अवस्था प्राप्त होने पर हम अपने जीवन–क्रम का थोड़ा या बहुत अंश उसे अर्पित करने को प्रस्तुत होते हैं और उसके जीवन–क्रम पर भी अपना कुछ प्रभाव रखना चाहते हैं। कभी हम अर्पण् करते हैं और कभी याचना करते हैं। सारांश यह कि भक्ति द्वारा हम भक्ति–भाजन से विशेष घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करते हैं, उसकी सत्ता में विशेष रूप से योग देना चाहते हैं। किसी के प्रति श्रद्धा धारण करके हम बहुत करेंग तो, समय–समय पर उसकी प्रशंसा करेंगे, उसकी निन्दा करने वालों से झगड़ा करेंगे या कभी कुछ उपहार लेकर उपस्थित होंगे, पर जिसके प्रति हमारी अनन्य भक्ति हो जायेगी, वह अपने जीवन के बहुत से अवसरों पर हमें अपने साथ देख सकता है–वह अपने बहुत से उद्योगों में हमारा योगदान पा सकता है। भक्त वे ही कहला सकते हैं जो अपने जीवन का बहुत अंश स्वार्थ (परिवार या शारीरिक सुख आदि) से विभक्त करके किसी के आश्रय से किसी ओर लगा सकते हैं। इसी का नाम है आत्मनिवेदन।

श्रद्धालु महत्व को स्वीकार करता है, पर भक्त महत्व की ओर अग्रसर होता है। श्रद्धालु अपने जीवन–क्रम को ज्यों का त्यों छोड़ता है पर भक्त उसकी काँट–छाँट में लग जाता है। अपने आचरण द्वारा दूसरों की भक्ति के अधिकारी होकर ही संसार के बड़े–बड़े महात्मा समाज के कल्याण–साधन में समर्थ हुए हैं। गुरू गोविन्द सिंह को यदि केवल दण्डवत् करने वाले और गद्दी पर भेंट चढ़ाने वाले श्रद्धालु ही मिलते, दिन–रात साथ रहने वाले, अपने सारे जीवन को अर्पित करने वाले भक्त न मिलते, तो वे अन्याय दमन में कभी समर्थ न होते। इससे भक्ति के सामाजिक महत्व को, इसकी लोक–हितकारिणी शक्ति को स्वीकार करने में किसी को आगा–पीछा नहीं हो सकता। सामाजिक महत्व के लिए आवश्यक है कि या तो आकर्षित करो या आकर्षित हो। जैसे इस आकर्षण विधान के बिना अणुओं द्वारा व्यक्त पिण्डों का आविर्भाव नहीं हो सकता, वैसे ही मानव–जीवन की विशद् अभिव्यक्ति भी नहीं हो सकती।

भक्ति का स्थान मानव हृदय है, वहीं श्रद्धा और प्रेम के संयोग से उसका प्रादुर्भाव होता है। अतः मनुष्य की श्रद्धा के जो विषय ऊपर कहे जा चुके हैं, उन्हीं को परमात्मा में अत्यन्त विशद् रूप में दिखा कर ही उसका मन खिंचता है और वह उस विशद् रूप विशिष्ट का सामीप्य चाहता है। रामकृष्ण आदि अवतारों में परमात्मा की विशेष कला देख एक हिन्दू के हृदय की सारी शुभ और आनंदमयी वृत्तियाँ उनकी ओर दौड़ पड़ती हैं। उसके सारे जीवन में एक अपूर्व आर्ध्य और बल का संचार हो जाता है, कभी वह उनके अलौकिक रूप सौन्दर्य की भावना करता है, कभी सिर झुकाकर वन्दना करता है, यहाँ तक कि प्रेम से भरी उलाहना भी देता है। भक्ति हृदय से की जाती है। बुद्धि से भक्ति करना ऐसा ही है, जैसा नाक से खाना और कान से सूँघना। रामलीला, कृष्णलीला आदि सामीप्य–सिद्धि के विधान हैं। इस सामीप्य की कामना, भक्तवर रसखान ने बड़ी मार्मिकता से इस प्रकार प्रकट की है–

मानुष हों तो वही रसखान
बसौं संग गोकुल गाँव के ग्वारन।
जौं पशु हों तो कहा बस मेरो,
चलौं मिलि नन्द के धेनु मझारन।
पाहन हौं तो वही गिरि को,
जो किए हरि छत्र पुरंदर–धारन।
जो खग हों तो बसेरों करों।
मिलि कूल कलिंदी कदंब के डारन।।

रामलीला द्वारा लोग वर्ष में एक बार अपने पूज्यदेव की आदर्श मानव–लीला का माधुर्य देखते हैं। जिस समय दूर–दूर के गाँवों के लोग एक मैदान में आकर इकट्ठे होते हैं तथा एक ओर जटा–मुकुटधारी विजयी राम–लक्ष्मण की मधुर मूर्ति देखते हैं और दूसरी ओर तीरों से बिंधा रावण का विशाल शरीर जलता देखते हैं, उस समय वे धर्म के सौन्दर्य पर लुब्ध और अधर्म की घोरता पर क्षुब्ध हो जाते हैं। इसी प्रकार, जब हम कृष्णलीला में जीवन की प्रफुल्लता के साथ धर्म–रक्षा के अलौकिक बल का विकास देखते हैं, तब हमारी जीवन–धारणा की अभिलाषा दूनी–चौगुनी हो जाती है। हिन्दू–जाति इन्हीं की भक्ति के बल से इतनी प्रतिकूल अवस्थाओं के बीच अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बचाती चली आई है, इन्हीं की अद्भुत आकर्षण शक्ति से वह इधर–उधर ढलने नहीं पाई है। राम और कृष्ण को बिना आँसू बहाए छोड़ना हिन्दू–जाति के लिए सहज नहीं था, क्योंकि ये अवतार अलग–टीले पर खड़े होकर उपदेश देने वाले नहीं थे, बल्कि मानव जीवन में पूर्ण रूप से सम्मिलित होकर उसके एक–एक अंग की मनोहरता दिखलाने वाले थे। मंगल के अवसरों पर उनके गीत गाये जाते हैं। विमाताओं की कुटिलता की, बड़ों के आदर की, दुष्टों के दमन की, जीवन के कष्ट की, घर की, वन की, सम्पदा की, विपद की जहाँ चर्चा होती है, वहाँ उनका स्मरण किया जाता है।

संसार में तटस्थ रहकर शान्ति–सुखपूर्वक लोक–व्यवहार–सम्बन्धी उपदेश देने वालों का उतना अधिक महत्व हिन्दू धर्म में नहीं है, जितना संसार के भीतर घुस कर उसके व्यवहारों के बीच सात्विक विभूति की ज्योति जगाने वालों का है। हमारे यहाँ उपदेशक ईश्वर के अवतार नहीं माने गये हैं। अपने जीवन द्वारा कर्म–सौन्दर्य संघटित करने वाले ही अवतार कहे गये हैं। कर्म–सौन्दर्य के योग से उनके स्वरूप में इतना माधुर्य आ गया है कि हमारा हृदय आप से आप उनकी ओर खिंचा पड़ता है। जो कुछ हम करते हैं–खेलना, कूदना, हँसना, बोलना, क्रोध करना, शोक करना, प्रेम करना, विनोद करना–उन सबमें लाते हुए हम जिन्हें देखेंगे उन्हीं की ओर ढल सकते हैं। वे हमें

दूर से रास्ता दिखाने वाले नहीं हैं, आप रास्ते में चल कर हमें अपने पीछे लगाने क्या खींचने वाले हैं। जो उनके स्वरूप पर मोहित न हो वह निःसन्देह जड़ है।

सुनि सीतापति सील सुभाउ।
मोद न मन, तन पुलक, नयन जल सो नर खेहर खाउ।।

जो उनका नाम सुनकर पुलकित होता है, जो उनके स्वरूप पर मोहित होता है, उसके सुधरने की बहुत कुछ आशा हो सकती है। जो संसार या मनुष्यत्व का सर्वथा त्याग न कर दें, उनके लिए शुद्ध सात्विक जीवन का यही मार्ग है।

अभ्यास के प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) 'श्रद्धा–भाजन' का क्या अर्थ होता है ?
(2) कवि रसखान का कौन–सा छंद प्रसिद्ध है ?
(3) गुरू गोविन्द सिंह कौन थे ?
(4) 'मनुष्यत्व' शब्द में कौन–सा प्रत्यय है ?
(5) 'दोषारोपण' शब्द का संधि विच्छेद क्या होगा ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) श्रद्धा किसे कहते हैं ?
(2) भक्ति का स्थान कहाँ होता है एवं उसका प्रादुर्भाव कैसे होता है ?
(3) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निबंध संग्रह का क्या नाम है ?
(4) शब्दालंकार किसे कहते हैं ?
(5) कालिन्दी किस नदी को कहते हैं और क्यों ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) 'पाहन हौं————————धारन' में अंतर्निहित कथा क्या है ?
(2) श्रद्धा और प्रेम में क्या अंतर है ?
(3) श्रद्धा, धर्म की पहली सीढ़ी है। कैसे ?
(4) स्थूल रूप से श्रद्धा कितने प्रकार की कही जा सकती है ? स्पष्ट कीजिए।
(5) भाव–विस्तार कीजिए–
(अ) श्रद्धा और प्रेम के योग का नाम भक्ति है ?
(ब) कर्ता से बढ़कर कर्म का स्मारक दूसरा नहीं।
(स) यदि प्रेम स्वप्न है तो श्रद्धा जागरण।

व्याख्यात्मक प्रश्न

ससंदर्भ व्याख्या कीजिए–
(1) किसी मनुष्य————————संचार है।
(2) श्रद्धा का————————दूसरा नहीं।
(3) कर्ता अपने————————बह जाते हैं।
(4) संसार में————————गए हैं।

शब्दार्थ

आनन्द पद्धति = आनन्द धारा। **पूज्य बुद्धि** = पूजा का विचार। **कर्म तन्तु** = कार्यों का जाल। **उपादान** = साधन। **आनंदान्तर्गत** = आनंद + अंतर्गत। **अनिर्दिष्ट** = बिना बताया। **चट** = तुरंत। **शील** = चरित्र। **शिखरिणी** = एक वर्णिक छंद। **छन्दोबद्ध** = छन्द में बाँधना। **योग** = मेल। **अर्पित** = देना। **प्रादुर्भाव** = जन्म, आरँभ। **वृत्तियाँ** = मनोदशाएँ। **सामीप्य–सिद्धि** = निकटता पाने की सफलता। **पुरंदर** = इन्द्र। **लुब्ध** = मोहित, ललचाते। क्षुब्ध = क्रोधित। **खेहर खाऊ** = मिट्टी में मिल जाए। **सात्विक** = पवित्र। **समष्टि** = सृष्टि। **वाग्मिता** = वाक्पटुता।

संकलनकर्ता– सन्तोष कुमार दुबे

कविता –

कबीर की साखियाँ

संत कबीर

(1) जीवन परिचय – संत कबीर का आविर्भाव सन् 1398 में काशी के समीप लहर तालाब में हुआ माना जाता है। इनका लालन–पालन नीरू और नीमा नामक जुलाहा दंपत्ति ने किया। उन्होंने विधिवत् शिक्षा–दीक्षा प्राप्त नहीं की थी, फिर भी उनकी रचनाओं में जीवन के विविध अनुभव भरे हुए हैं। निरंतर सत्संग के द्वारा उन्होंने अपने ज्ञान को आगे बढ़ाया और धर्म के गुण रहस्यों को जन साधारण की भाषा में, काव्य रूप में अत्यंत सरल और सहज अभिव्यक्ति प्रदान की। स्वामी रामानंद के उदार विचारों का भी इन पर बहुत प्रभाव पड़ा। इन्होंने अपनी रचना द्वारा मूलतः उपदेशों के माध्यम से, जगह–जगह घूमकर समाज में फैली रूढ़ियों, पाखंडों, अंधविश्वासों पर तीखा प्रहार कर उन्हें हटाने का प्रयास किया। जिस साम्प्रदायिक एकता के प्रति आज हम सचेत हैं, उसे संत कबीर ने अपनी कविता का मुख्य विषय बनाया। सन् 1518 में संत कबीर मगहर में अंतर्ध्यान हुए।

(2) रचनाएँ–संत कबीर की प्रामाणिक उपलब्ध कृतियाँ हैं–

(1) बीजक, (2) अनुराग सागर, (3) साखी ग्रंथ, (4) शब्दावली, (5) कबीर ग्रंथावली।

'बीजक' में साखी, शबद और रमैनी तीन भाग हैं। शब्दावली में लगभग 59 प्रकार के शब्द संग्रहित हैं। जिनमें चौका के शब्द, शब्द बसंत, शब्द होरी, शब्द मंगल, शब्द प्रभाती, शब्द सोहर आदि अत्यधिक लोकप्रिय एवं प्रचलित हैं।

(3) काव्यगत विशेषताएँ – संत कबीर की काव्यगत विशेषताएँ अधोलिखित हैं–

(1) इनकी अधिकांश रचनाएँ गेय हैं।

(2) आपके काव्य में अनेक स्थलों पर रहस्यात्मकता के दर्शन होते हैं।

(3) संत कबीर के काव्य में एक सुनिश्चित दार्शनिक विचारधारा मिलती है।

(4) अद्वैतवादी विचारधारा में आत्मा और परमात्मा को तात्विक दृष्टि से आपने एक माना है।

(5) ब्रहम के साथ एकाकारिता के लिए 'अहं' का त्याग करने को संत कबीर ने आवश्यक माना है।

(4) भावपक्ष – संत कबीर धार्मिक संकीर्णता को दूर करने वाले समाज सुधारक के रूप में भी हमारे सामने आते हैं। वे सभी धर्मों के एकता के समर्थक थे। राम–रहीम की एकता बताकर, उन्होंने हिन्दू और मुसलमानों के धार्मिक विद्वेष को दूर करने का प्रयत्न किया। दोनों धर्मों में व्याप्त आडंबरों की संत कबीर ने खूब निंदा की। दोनों के धर्म नेताओं, पंडितों और मुल्लाओं को धर्म के बाह्य आडंबरों में फँसे होने पर खूब फटकारा। आपकी रचनाओं को पढ़ने एवं सुनने से पाठकों को रसानुभूति होती है।

(5) कलापक्ष – संत कबीर के लिए कविता साध्य न होकर साधन थी। वे सहज अनुभूतियों को बड़े प्रभावी शैली में जनमानस तक पहुँचाना चाहते थे। संत कबीर की वाणी में सच्चे हृदय से कही गई बातें हैं, जो दिल में घर कर लेती हैं। ठीक निशाने पर चोट करने की कला में संत कबीर अद्वितीय हैं। उनके कहने का ढंग ओजपूर्ण और सुबोध है। कठिन विचार को भी वे अनुप्रास, अन्योक्ति, दृष्टांत रूपक व उपमा के माध्यम से

बड़े मर्मस्पर्शी ढंग से समझाते हैं। उनकी भाषा जनसाधारण में प्रचलित बोलचाल की भाषा है। उसे सधुक्कड़ी अथवा पंचमेल खिचड़ी भी कहा जाता है।

(6) साहित्य में स्थान – भक्तिकाल के अंतर्गत निर्गुण शाखा के प्रतिनिधि कवि संत कबीर ने लोक आडंबरों पर तीक्ष्ण प्रहार करके लोक आदर्शों की स्थापना की। उन्होंने जाति, वर्ग और सम्प्रदाय से परे मनुष्य–धर्म को अपने काव्य में प्रतिष्ठित किया। ज्ञानमार्गी कवियों में इनका स्थान सर्वोपरि है।

कविता –

पाठ–3
कबीर की साखियाँ

केन्द्रीय भाव – प्रस्तुत साखियों के माध्यम से कवि ने सच्चा भक्त, सच्चा संतोष, सच्चा साधु, सच्ची भक्ति, विवेक, अपकार के बदले उपकार, गर्व से दूर रहने और मानव–जीवन के मूल्य पर प्रकाश डाला है।

(1) भक्ति भजन हरि नाव है, दूजा दुक्ख अपार।
मनसा, वाचा, करमना, कबीर सुमिरन सार।।

(2) मेरा मुझमें कुछ नहीं, जो कुछ है सब तोर।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागत है मोर।।

(3) दुर्लभ मानुष जनम है, देह न बारंबार।
तरवर ज्यों पत्ता झड़े, बहुरिन लागै डार।

(4) जल ज्यों प्यारा माछरी, लोभी प्यारा दाम।
माता प्यारा बालका, भक्त पियारा नाम।।

(5) हंसा पय को काढ़ि ले, छीर नीर निरवार।
ऐसे गहै जो सार को, सो जन उतरै पार।।

(6) साध कहावन कठिन है, लंबा पेड़ खजूर।
चढ़ै तो चाखै प्रेम रस, गिरै तो चकनाचूर।।

(7) साधू भूखा भाव का, धन का भूखा नाहिं।
धन का भूखा जो फिरै, सो तो साधू नाहिं।।

(8) सोना, सज्जन, साधुजन, टूटि जुरै सौ बार।
दुर्जन कुंभ कुंभार के एकै धका दरार।।

(9) चाह गई चिंता मिटी, मनुआँ बेपरवाह।
जिनको कछू न चाहिए, सोई साहंसाह।

(10) कबिरा क्या मैं चिंतहूँ, मम चिंते क्या होय।
मेरी चिंता हरि करैं, चिंता मोहि न कोय।।

(11) जो तोको काँटा बुवै, ताहि बोय तू फूल।
तोहि फूल को फूल है, वाको है तिरसूल।।

(12) आवत गारी एक है, उलटत होत अनेक।
कह कबीर नहिं उलटिए, वही एक की एक।।

(13) गोधन, गजधन, बाजिधन और रतन सब खान।
जब आवै संतोष धन, सब धन धूरि समान।।

(14) कबीरा गर्व न कीजिए, ऊँचा देख अवास।
काल्ह परै भुंइ लेटना, ऊपर जामि है घास।

(15) कबीरा यह तन जात है, सकै तो राख बहोर।
खाली हाथों वे गए, जिनके लाख करोर।।

शब्दार्थ

मनसा, वाचा, करमना = मन, वाणी और कर्म।
दूजा = दूसरा।
बहुरि = फिर।
माछरी = मछली।
पय = दूध।
मानुष = मनुष्य।
छीर = दूध।
खजूर = एक वृक्ष, जिससे मीठा फल प्राप्त होता है।
बाजि = घोड़ा।
आवास = निवास स्थान, घर।
चाह = इच्छा।
गारी = गाली।
करोर = करोड़।
कुंभ = घड़ा। बेपरवाह = निश्चिंत।
गज = हाथी।

अभ्यास के प्रश्न

अति लघुउत्तरीय प्रश्न

(1) 'सोना, सज्जन, साधुजन' में कौन–सा अलंकार हैं ?

(2) दोहा छंद के विषय चरणों में कितनी–कितनी मात्राएँ होती हैं ?

(3) भक्ति से संबंधित कविता में कौन–सा रस होता है ?

(4) साखी क्रमांक एक में 'नाव' किसे कहा गया है ?

(5) 'तरुवर' के पर्यायवाची शब्द कौन–कौन से हैं ?

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) मनुष्य का जन्म दुर्लभ है, इसे किस दृष्टांत से सिद्ध किया गया है ?

(2) साखी क्रमांक तेरह में सर्वश्रेष्ठ धन किसे कहा गया है ? स्पष्ट कीजिए ।

(3) ईश्वर के प्रति सर्वस्व समर्पण का भाव किस साखी में है ? समझाइए।

(4) मनुष्य को अपने आवास पर गर्व क्यों नहीं करना चाहिए ?

(5) मानव–जीवन नाशवान है। कवि ने इसे किस प्रकार स्पष्ट किया हैं ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) साधु की कौन–कौन सी विशेषताएँ होती हैं ?

(2) मनुष्य को चिंता से दूर क्यों रहना चाहिए ?

(3) कवि ने ईश्वर–स्मरण को सार क्यों माना है? ईश्वर का स्मरण किस प्रकार करना चाहिए?

(4) गाली को क्यों नहीं उलटना चाहिए ?

(5) भक्त को भगवान का नाम प्रिय है। इसे क्या–क्या उदाहरण देकर स्पष्ट किया गया है ?

व्याख्यात्मक प्रश्न

निम्नलिखित साखियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए–

(1) हंसा————————————————पार।।

(2) साध———————————————चकनाचूर।।

–रस–

परिभाषा – काव्य के आस्वाद से जो अनिर्वचनीय आनंद प्राप्त होता है, उसे रस कहते हैं।

काव्य में रस का महत्व – जिस प्रकार प्राण के बिना शरीर का कोई महत्व नहीं होता, उसी प्रकार रस के बिना काव्य। रस उत्तम काव्य का अनिवार्य गुण है।

रस निष्पत्ति – सहृदय के हृदय में स्थित स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के साथ संयोग होता है, तब रस की निष्पत्ति होती है।

रस के अंग – रस के अधोलिखित अंग होते हैं।

(अ) स्थायी भाव – सहृदय के हृदय में जो भाव स्थायी रूप से विद्यमान होते हैं, उसे स्थायी भाव कहते हैं। इसकी संख्या दस होती हैं। रति, हास, क्रोध, भय, उत्साह, आश्चर्य (विस्मय), शोक, घृणा (जुगुप्सा) निर्वेद, वत्सल (स्नेह, पुत्र–प्रेम)

(ब) विभाव – स्थायी भाव के होने के कारण को विभाव कहते हैं।

प्रकार – विभाव दो प्रकार के होते हैं –

(1) आलंबन विभाव – वे कारण जिन पर भाव अवलंबित होते हैं उन्हें आलंबन विभाव कहते हैं।

(2) उद्दीपन विभाव – जो आलंबन द्वारा उत्पन्न भावों को उद्दीप्त करते हैं, उन्हें उद्दीपन विभाव कहते हैं।

(स) अनुभाव – आश्रय की वाहय चेष्टाओं को अनुभाव कहते हैं।

(द) संचारी भाव – जो भाव सहृदय के हृदय में अस्थायी रूप से विद्यमान होते हैं, उन्हें संचारी भाव कहते हैं।

स्मृति, शंका, आलस्य, चिंता आदि। इनकी संख्या 33 होती है।

स्थायी भाव और संचारी भाव में अंतर –

(1) स्थायी भाव की संख्या दस होती है; जबकि संचारी भाव की संख्या तैंतीस होती है।

(2) स्थायी भाव उत्पन्न होकर रस परिपाक तक बने रहते हैं, जबकि संचारी भाव क्षण–प्रतिक्षण बदलते रहते हैं।

रस के भेद – रस के निम्नलिखित दस प्रकार होते हैं –

(1) श्रृंगार रस – सहृदय के हृदय में स्थित 'रति' नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के साथ संयोग होता है, उसे श्रृंगार रस कहते हैं।

उदाहरण – बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाई।
सौंह करै, भौंहनि हँसै, दैन कहै नटि जाई।।

प्रकार – श्रृंगार रस दो प्रकार के होते हैं –

(अ) संयोग श्रृंगार – जहाँ पर नायक–नायिका के संयोग या मिलन का वर्णन हो, वहाँ संयोग श्रृंगार होता है।

उदाहरण –
कहत नटत रीझत खिझत, नयन मिलत लजियात।
भरे भवन में करत हैं, नैनन ही सों बात।।

(ब) वियोग श्रृंगार या विप्रलंभ श्रृंगार – जहाँ पर नायक–नायिका के वियोग का वर्णन हो वहाँ वियोग श्रृंगार कहते हैं।

उदाहरण – निसिदिन बरसत नैन हमारे।
सदा रहत पावस ऋतु हम पर जब से स्याम सिधारे।

(2) हास्य रस – सहृदय के हृदय में स्थित 'हास' नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से संयोग होता है, उसे हास्य रस कहते हैं।

उदाहरण – मैं महावीर हूँ पापड़ को तोड़ सकता हूँ।
अवसर आ जाए तो कागज को मोड़ सकता हूँ।

(3) करूण रस – सहृदय के हृदय में स्थित 'शोक' नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और

संचारी भाव के साथ संयोग होता है, उसे करूण रस कहते हैं।

उदाहरण – सब बन्धुन को सोच तजि–तजि गुरूकुल को नेह।
हा सुशील सुत! किमि कियो अनंत लोक में गेह।

(4) वीर रस – सहृदय के हृदय में स्थित 'उत्साह' नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के साथ संयोग होता है, उसे वीर रस कहते हैं।

उदाहरण – द्वार बलि का खोल चल भूडोल कर दे।
एक हिमगिरि एक सिर का मोल कर दे।

(5) रौद्र रस – सहृदय के हृदय में स्थित 'क्रोध' नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से संयोग होता हैं उसे रौद्र रस कहते हैं।

उदाहरण – बालकु बोलि बधऊँ नहिं तोही, केवल मुनि जड़ जानहिं मोही।
बाल ब्रह्मचारी अति कोही, विश्व विदित छत्रिय कुल द्रोही।

(6) भयानक रस – सहृदय के हृदय में स्थित 'भय' नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के साथ संयोग होता है, उसे भयानक रस कहते हैं।

उदाहरण –

एक ओर अजगरहिं लखि, एक ओर मृगराय।
विकल बटोही बीच ही, पर्‌यौ मूरछा खाय।

(7) अद्‌भुत रस – सहृदय के हृदय में स्थित विस्मय (आश्चर्य) नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के साथ संयोग होता है, उसे अद्‌भुत रस कहते हैं।

उदाहरण–बिनु पग चलै सुनै बिनु काना।
कर बिनु कर्म करै, विधि नाना।
आनन रहित सकल रस भोगी।
बिन वाणी वक्ता बड़ जोगी।

(8) वीभत्स रस – सहृदय के हृदय में स्थित 'जुगुप्सा' या 'घृणा' नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के साथ संयोग होता है, उसे वीभत्स रस कहते हैं।

उदाहरण – सिर पर बैठ्यो काग आँखि दोऊ खात निकारत।
खींचहिं जीभ सियार, अतिहिं आनंद उर धारत।

(9) शांत रस – सहृदय के हृदय में स्थित 'निर्वेद' नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के साथ संयोग होता है, उसे शांत रस कहते हैं।

उदाहरण – एक भरोसो एक बल, एक आस विश्वास।
एक राम घनश्याम हित, चातक तुलसीदास।

(10) वात्सल्य रस – सहृदय के हृदय में स्थित 'वत्सलता' (स्नेह, पुत्र–प्रेम) नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के साथ संयोग होता है, उसे वात्सल्य रस कहते है।

उदाहरण – मैया मोरी मैं नहीं माखन खायो।
भोर भए गैयन के पीछे, मधुबन मोहि पठायो।
चार पहर वंशीवट भटक्यो, साँझ परे घर आयो।

पाठ – 4
उद्धव–प्रसंग

जगन्नाथ दास 'रत्नाकर'

परिचय

जन्म :– जगन्नाथ दास रत्नाकर का जन्म वाराणसी में सन् 1886 में हुआ।

शिक्षा–प्रेरणा :– जगन्नाथ जी को विरासत में लेखन की प्रेरणा मिली। उनके पिता काव्य प्रेमी थे और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र उनके घर आया करते थे। इन्हीं की प्रेरणा से जगन्नाथ दास जी कवि बन गए।

फारसी विषय लेकर जगन्नाथ दास जी ने बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की और एक सफल कवि बने।

मृत्यु :– सन् 1932 में हरिद्वार में इनका निधन हो गया।

रचनाएँ :– (1)'उद्धव शतक', (2) गंगावतरण, (3) बिहारी सतसई पर बिहारी रत्नाकर टीका।

काव्यगत विशेषताएँ :–

(1) रत्नाकर कृष्ण भक्त कवि थे। 'उद्धव शतक' कृष्ण भक्ति का ही परिणाम है।

(2) साहित्यगत भ्रमरगीत परम्परा का निर्वाह भी 'उद्धवशतक' में हुआ है। जिसमें कृष्ण, उद्धव का संवाद, गोपी–उद्धव का संवाद और उद्धव की मनोदशा का सजीव एवं मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

उदाहरण –

विरह विथा की कथा अकथ अथाह महा,
कहत बनै न जो प्रवीन सुकवीन सौं।

(3) रत्नाकर जी के काव्य में भक्ति और रीति शैली का सम्मिश्रण एवं मानव–स्वभाव का कुशल चित्रण हुआ है।

(4) उत्सुकता, प्रेम, करूणा, क्रोध आदि मनोभावों का अनुभावों एवं संचारी भावों के द्वारा चित्र उपस्थित कर देना रत्नाकर जी की विशेषता है :–

उदाहरण–''प्रेम मद छाके पग परत कहाँ के कहाँ,
थाके अंग नैननि सिथिलता सुहाई है।''

(5) रत्नाकर जी ने प्रबंध और मुक्तक दोनों तरह की रचनाएँ की हैं। एक ओर उद्धव शतक है तो दूसरी ओर गंगावतरण में प्रकृति का दृश्य वर्णन।

कलापक्ष

1. बाल्यावस्था में रत्नाकर जी फारसी भाषा में कविता करते थे किन्तु बाद में ब्रजभाषा को अपना काव्य भाषा बनाया।
2. सूरदास की तरह ब्रज भाषा का लालित्य आपकी कविताओं में देखने को मिलता है।
3. काव्य शैली परम्परागत होने पर भी नए साँचे में ढाल दी गई है।
4. लाक्षणिकता और अलंकारों का सरस प्रयोग रत्नाकर जी की सबसे बड़ी विशेषता है।

उदाहरण– कुटील कटारी है, अटारी है उतंग अति
जमुना तरंग है, तिहारो सतसंग है।

साहित्य में स्थान :– उद्धव शतक और गंगावतरण जैसी काव्य रचना के द्वारा जगन्नाथ दास रत्नाकर जी हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित कवि बने। उनकी रचनाओं में ब्रजभाषा की मिठास सर्वत्र विद्यमान है।

केन्द्रीय भाव :– प्रस्तुत पद उद्धव शतक (खण्डकाव्य) का कुछ अंश है। इसमें प्रवासी कृष्ण का ''ब्रज'' को याद करना, उद्धव का ब्रम्हज्ञान देना और गोपियों की कृष्ण भक्ति और प्रेममग्न उद्धव की मनोदशा का मार्मिक चित्रण किया गया है।

कविता –

उद्धव–प्रसंग

जगन्नाथ दास रत्नाकर

(1)

विरहं विथा की कथा अकथ अथाह महा
कहत बनै न जो प्रवीन सुकवीन सौं।
कहै रत्नाकर बुझावन लगे ज्यों कान्ह,
उधौ को कहन–हेत ब्रज–जुवतीनि सौं।।
गहवरि आयौ गरौ भभरि अचानक त्यों,
प्रेम परयौ चपल चुचाई पुतरीन सौं।
नेकु कही बैननि, अनेक कही नैननि सौं,
रही सही सोऊ कही दीन्ही हिचकीनि सौं।।

(2)

प्रेम नेम निफल निवारि उर अतंर तें,
ब्रह्मज्ञान आनंद निधान भरि लैहें हम।
कहै रत्नाकर सुधाकर–मुखीनि–ध्यान
आँसुनि सौं धोई जोति जोइ जर लैहें हम।।
आवौ एक बार धारि गोकुल गली की धूरि,
तब इति नीति की प्रतीति धरि लैहें हम।
मन सौ करेज सौं, स्त्रवन–सिर आँखिन सौं,
उद्धव तिहारी सीख भीख करि लैंहे हम।।

(3)

भेजे मन भावन के उद्धव के आवन की,
सुधि ब्रज गाँवनि में पावन जबै लगी।
कहै रत्नाकर गुवालिनी की झौरि–झौरि,
दौरि–दौरि नंद पौरि आवन तबै लगीं।।
उझकि–उझकि पद कंजनि के पंजनि पै,
पेखि–पेखि पाती छाती छोहनि छ्वै लगी।
हमको लिख्यौ है कहा, हमको लिख्यौ है कहा,
हमको लिख्यौ है कहा, कहन सबै लगी।।

(4)

आए हौ सिखावन कौं, जोग मथुरा तैं तोपैं,
ऊधौ ये वियोग के वचन बतरावौ ना।
कहैं रत्नाकर दया करि दरस दीन्यों,
दुःख दरिबै कौ तोपै अधिक बढ़ावौ ना।।
टूक–टूक ह्वै है मन मुकुर हमारौ हाय,
चूंकि हूँ कठोर बैन पाहन चलावौ ना।
एक मनमोहन तो बसिकैं उजार्‌यो मोहि,
हिय में अनेक मनमोहन बसावौ ना।।

(5)

कान्ह–दूत कैधों ब्रह्मदूत ह्वै पधारे आप,
धारे प्रन फेरन को मति ब्रजवारी की ।
कहे रत्नाकर पै प्रीति रीति जानत ना,
ठानत अनीति आनि नीति ले अनारी की।।
मान्यौ हम, कान्ह ब्रम्ह एक ही कह्यो जो तुम,
तो हू हमै भावति न भावना अन्यारी की।
जैहे बनि बिगरि न वारिधिता वारिधि की,
बूँदता बिलैहैं बूँद बिबस बेचारी की।।

(6)

धरि राखौ ज्ञान–गुन–गौरव गुमान गोह,
गोपिन को आवन न भावत भड़ंग है।
कहै रत्नाकर करत टाँय–टाँय वृथा,
सुनतन कोऊ यहाँ यह मुहचंग है।।
और दू उपाय केते सहज सुढंग उधौ,
साँस रोकिबे को कहा जोग ही कुढंग है।
कुटिल कटारी है, अटारी है उतंग अति,
जमुनातरंग है, तिहारो सतसंग है।।

(7)

प्रेम मद छाके पग परत कहाँ के कहाँ,
थाके अंग नैननि सिथिलता सुहाई है।
कहै रत्नाकर यों आवत चकात ऊधौ,
मानो सुधियात कोऊ भावना भुलाई है।।
धारत धरा पै ना उदार अति आदर सौ,
सारत बहोलिनि जो आँसु अधिकाई है।
एक कर राजै नवनीत जसुदा को दियौ,
एक कर बंसी बर राधिका पठाई है।।

प्रश्न–अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

1. उद्धव–प्रसंग किस खण्ड काव्य से लिया गया है ?
2. प्रस्तुत पद में निहित रस एवं उसका स्थायी भाव लिखिए।
3. उद्धव कौन थे ?
4. इनके तत्सम रूप लिखिए :–
   बिथा, दरस, उजार्‌यो, बिगरि, गुन।
5. अलंकार पहचानकर लिखें :–

(1) ''एक मनमोहन तो बसिकै उजारियो मोहीं,
हिय में अनेक मनमोहन बसावो ना।''

(2) सुधाकर–मुखीनि–ध्यान।

(3) उझकि–उझकि, पद कंजनि के पंजनि पें।

लघुउत्तरीय प्रश्न

(1) कृष्ण जी के संदेश व्यक्त करने में उत्पन्न अनुभाव का वर्णन करें।

(2) उद्धव के ब्रज आगमन की सूचना पाकर गोपियों की क्या प्रतिक्रिया हुई ?

(3) कृष्ण को मन–भावन कहना ''भाव व्यंजना का सुन्दर उदाहरण है।'' स्पष्ट करें।

(4) ''प्रेम पर्‌यो चपल चुचाइ पुतरीन सौं'' इसके लक्षणा सौन्दर्य को स्पष्ट करें।

(5) ''उद्धव प्रीति–रीति नहीं जानते'' गोपियों के विचार लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) गोकुल से लौटते उद्धव की दशा का वर्णन करें।

(2) कृष्ण कब ब्रह्म ज्ञान स्वीकार करेंगे ? विस्तार से लिखें।

(3) सप्रसंग अर्थ करें :–

(1) जैहे बनि बिगारि न वारिधिता––––बिबस बेचारी की।

(2) कुटील कटारी————————सतसंग है।

(3) गोपियाँ उद्धव के निर्गुण ब्रह्म की उपासना क्यों अस्वीकार करती हैं ?

योग्यता विस्तार :–सूरदास के भ्रमरगीत से रत्नाकर के इन पदों की तुलना करें।

शब्दार्थ

विरहविथा = वियोग पीड़ा। अकथ = अकथनीय। गह्वरि = भर आना। भभरि = उमड़कर। सारत = पोंछते हुए। प्रन = प्रण। प्रीति–रीति = प्रेम का नियम। वारिधि = महासागर। बिलैहें = समा जाना। बहोलिनि = बाहों में। बैननि = बातों से। मुकुर = दर्पण। नवनीत = मक्खन। चकात् = चकित। सुधि = याद। प्रतीति = विश्वास। कर = हाथ। पठाई = भेजा है।

पाठ – 5
उसने कहा था
चन्द्रधर शर्मा गुलेरी

परिचय

जन्म, शिक्षा, प्रेरणाः– हिन्दी कहानी साहित्य में चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। गुलेरी जी का जन्म 1883 ई. में तथा मृत्यु 1922 ई. में हुई। वे संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित तथा अंग्रेजी के अच्छे जानकार थे। आप मेयो कालेज में अध्यापक तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत महाविद्यालय में प्रधानाध्यापक थे। ''सरस्वती'' पत्रिका ने गुलेरी जी की रचनागत प्रतिभा को पहचाना। आप नागरी प्रचारिणी सभा की व्याकरण संशोधन–समिति के सदस्य भी रहे।

रचनाएँ :– कहानी के क्षेत्र में मात्र तीन कहानियाँ आपने लिखीं :–

(1) सुखमय जीवन, (2) बुद्धू का काँटा,(3) उसने कहा था।

निबंध :– (1) कछुआ धरम, (2) मारेसि मोहि कुठाऊँ।

अन्य लेख और समीक्षाएँ :– (1) जयसिंह काव्य (आलेख), (2) पृथ्वीराज विजय महाकाव्य (आलेख,) (3) पुरानी हिन्दी विषयक स्थापनाएँ।

साहित्यगत विशेषताएँ :–

(1) गुलेरी जी मूलतः कहानीकार थे। ''उसने कहा था'' कहानी अपनी शिल्पविधि तथा विषय –वस्तु के विकास की दृष्टि से 'मील का पत्थर' मानी जाती है।

(2) 'उसने कहा था' कहानी यथार्थपूर्ण वातावरण में प्रेम के सूक्ष्म और उदात्त स्वरूप की मार्मिक व्यंजना प्रस्तुत करती है।

(3) निबंधों में गूढ़ शास्त्रीय तथा सामान्य कोटि के विषयों पर समान अधिकार से लिखा।

(4) ''पुरानी हिन्दी विषयक स्थापनाएँ'' हिन्दी भाषा के इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण रचना मानी जाती है।

भाषा–शैली :– (1) गुलेरी जी का शिल्प विधान उच्चकोटि का है। वातावरण के अनुसार शब्दावलियों का प्रयोग अद्वितीय है।

जैसे :– हर एक लड़ढो वाले के लिए ठहरकर सब्र का समुद्र उमड़ाकर 'बचो खालसा जी, हटो भाई जी, ठहरना भाई ....। (उसने कहा था।)

(2) गुलेरी जी की कहानियों में संवाद कौशल भी देखते ही बनता है।

जैसे :– तेरे घर कहाँ है ?

मगरे में––और तेरे।

माझे में–––यहाँ कहाँ रहती है

(3) तत्सम प्रधान शब्दों का भी आपने बड़ी खूबी से प्रयोग किया।

''जिसके प्रकाश से संस्कृत कवियों का दिया हुआ 'क्षयी' नाम सार्थक होता है। हवा ऐसे चल रही थी जैसे कि बाणभट्ट की भाषा में 'दन्तवीणोपदेशाचार्य'' कहलाती ।

(उसने कहा था)

(4) पात्रानुकूल भाषा और शैली के प्रयोग में गुलेरी जी सिद्ध हस्त थे।

साहित्य में स्थान :– आधुनिक हिन्दी कहानी, निबंध तथा समीक्षा और भाषाशास्त्र के विकास में चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का योगदान महत्वपूर्ण समझा जाता है। उनकी रचना 'उसने कहा था' हिन्दी कहानी साहित्य का प्रतिनिधित्व करती है।

केन्द्रीय भाव :– ''उसने कहा था'' कहानी में एक यथार्थपूर्ण वातावरण में प्रेम के सूक्ष्म तथा उदात्त स्वरूप की मार्मिक व्यंजना प्रस्तुत की गई है। कहानी का नायक 'लहना सिंह' सूबेदारनी के कहने पर बाल्यप्रेम का मान रखते हुए सूबेदार

और उसके पुत्र बोधासिंह के प्राण बचाता है और स्वयं देश के लिए शहीद हो जाता है। अमर प्रेम की मार्मिक कहानी––––––।''

कहानी –

उसने कहा था

चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी'

(1)

बड़े–बड़े शहरों के इक्केगाड़ी वालों की जबान के कोड़ों से जिनकी पीठ छिल गयी है, कान पक गये हैं, उनसे हमारी प्रार्थना है कि अमृतसर बम्बूकार्ट वालों की बोली का मरहम लगावें। जब बड़े–बड़े शहरों की चौड़ी सड़कों पर घोड़े की पीठ को चाबुक से धुनते हुए, इक्के वाले कभी घोड़े की नानी से अपना निकट सम्बन्ध स्थिर करते हैं, कभी राह चलते पैदलों की आँखों के न होने पर तरस खाते हैं, कभी उसके पैरों की अँगुलियों के पोरों को **चींथकर** अपने ही को सताया हुआ बताते हैं, और संसार भर की ग्लानि, निराशा और क्षोभ के अवतार बने, नाक की सीध चले जाते हैं, तब अमृतसर में उनकी बिरादरी वाले तंग चक्करदार गलियों में, हर–एक **लड्ढो वाले** के लिए ठहरकर, सब्र का समुद्र उमड़ाकर 'बचो खालसा जी !' 'हटो भाईजी!' 'ठहरना माई !' 'आने दो लालाजी!' हटो **बाछा**!' –कहते हुए सफेद फेंटों, खच्चरों और बत्तकों और गन्ने, खोमचे और भारे वालों के जंगल में से राह खेते हैं। क्या मजाल है, कि 'जी' और 'साहब' बिना सुने किसी को हटना पड़े। यह बात नहीं कि उनकी जीभ चलती ही नहीं है, पर मीठी छुरी की तरह महीन मार करती हुई। यदि कोई बुढ़िया बार–बार **चितौनी** देने पर भी लीक से नहीं हटती, तो उनकी वचनावली के नमूने हैं–हट जा जीणे जोगिए, हट जा उमराँ वालिए, हट जा पुत्तां प्यारिए, बच जा लम्बी उमराँ वालिए। **समष्टि** में इनके अर्थ हैं कि तू जीने योग्य है, तू भाग्यों वाली है, पुत्रों की प्यारी है, लम्बी उमर तेरे सामने हैं, तू क्यों मेरे पहिये के नीचे आना चाहती है ? बच जा।

ऐसे बम्बूकार्ट वालों के बीच में होकर एक लड़का और एक लड़की चौक की दुकान पर आ मिले। उसके बालों और इसके ढीले सुथने से जान पड़ता था, कि दोनों सिक्ख हैं। वह अपने मामा के केश धोने के लिए दही लेने आया था, और यह रसोई के लिए बड़ियाँ। दुकानदार एक परदेशी से गुथ रहा था, जो सेर–भर गीले पापड़ों की गड्डी को गिने बिना हटता न था।

'तेरे घर कहाँ है ?'

'मगरे में–और तेरे ?'

'माझे में,–यहाँ कहाँ रहती है ?'

'अतर सिंह की बैठक में, वे मेरे मामा हैं।'

इतने में दुकानदार निबटा, और इनका सौदा देने लगा। सौदा लेकर दोनों साथ–साथ चले। कुछ दूर जाकर लड़के ने मुस्कुराकर पूछा–'तेरी कुड़माई हो गयी ?'

इस पर लड़की कुछ आँखें चढ़ाकर 'धत्' कहकर दौड़ गयी, लड़का मुँह देखता रह गया।

दूसरे–तीसरे दिन सब्जी वाले के यहाँ, दूध वाले के यहाँ, अकस्मात् दोनों मिल जाते। महीना–भर यही हाल रहा। दो–तीन बार लड़के

ने फिर पूछा–'तेरी कुड़माई हो गयी ?' और उत्तर में वही 'धत्' मिला। एक दिन जब फिर लड़के ने वैसे ही हँसी में चिढ़ाने के लिए पूछा लड़की लड़के की सम्भावना के विरूद्ध बोली 'हाँ, हो गयी।'

'कब?'

'कल; देखते नहीं, यह रेशम से कढ़ा हुआ 'सालू'।

लड़की भाग गयी। लड़के ने घर की राह ली। रास्ते में एक लड़के को मोरी में ढकेल दिया, एक छावड़ी वाले की दिन–भर की कमाई खोयी, एक कुत्ते पर पत्थर मारा और एक गोभी वाले के ठेले में दूध उड़ेल दिया। सामने नहाकर आती हुई किसी वैष्णवी से टकराकर अन्धे की उपाधि पायी। तब कहीं घर पहुँचा।

(2)

'राम–राम, यह भी कोई लड़ाई है! दिन–रात खन्दकों में बैठे हड्डियाँ अकड़ गयीं। लुधियाना से दस–गुना जाड़ा और मेह, और बरफ ऊपर से। पिंडलियों तक कीचड़ में धँसे हुए हैं। जमीन कहीं दिखती नहीं, घण्टे–दो घण्टे में कान के परदे फाड़ने वाले धमाके के साथ सारी खन्दक हिल जाती है और सौ–सौ गज धरती उछल पड़ती है। इस दैवी–गोले से बचे तो कोई लड़े। नगरकोट का जलजला सुना था, यहाँ दिन में पच्चीस जलजले होते हैं। जो कहीं खन्दक से बाहर साफा या कुहनी निकल गयी, तो चटाक से गोली लगती है। न मालूम बेईमान मिट्टी में लेटे हुए हैं या घास की पत्तियों में छिपे रहते हैं।'

'लहना सिंह, और तीन दिन हैं। चार तो खन्दक में बिता ही दिये। परसों 'रिलीफ' आ जाएगी, और फिर सात दिन की छुट्टी। अपने हाथों झटका करेंगे, और पेट भर खाकर सो रहेंगे। उसी फिरंगी मेम के बाग में मखमल की सी हरी घास है। फल और दूध की वर्षा कर देती है। लाख कहते हैं, दाम नहीं लेती। कहती है–तुम राजा हो, मेरे मुल्क को बचाने आये हो।'

'चार दिन तक पलक नहीं झँपी। बिना फेरे घोड़ा बिगड़ता है और बिना लड़े सिपाही। मुझे तो संगीन चढ़ाकर मार्च का हुक्म मिल जाए। फिर सात जर्मनों को अकेला मारकर न लौटूँ तो मुझे दरबार साहब की देहली पर मत्था टेकना नसीब न हो। पाजी कहीं के, कलों के घोड़े–संगीन देखते ही मुँह फाड़ देते हैं और पैर पकड़ने लगते हैं। यों अँधेरे में तीस–तीस मन का गोला फेंकते हैं। उस दिन धावा किया था– चार मील तक एक जर्मन नहीं छोड़ा था। पीछे जनरल साहब ने हट आने का कमान दिया, नहीं तो'

'नहीं तो सीधे बर्लिन पहुँच जाते। क्यों ? सूबेदार हजारा सिंह ने मुस्कुरा कर कहा–'लड़ाई के मामले जमादार या नायक के चलाये नहीं चलते। बड़े अफसर दूर की सोचते हैं। तीन सौ मील का सामना है। एक तरफ बढ़ गये तो क्या होगा ?'

'सूबेदार जी, सच है–लहना सिंह बोला–'पर करें क्या ? हड्डियों–हड्डियों में तो जाड़ा धँस गया है। सूर्य निकलता नहीं और खाई में दोनों तरफ से चम्बे की बावलियों के–से सोते झर रहे हैं। एक धावा हो जाए, तो गरमी आ जाए।'

'उदमी उठ, सिगड़ी में कोले डाल। वजीरा तुम चार जने बालटियाँ लेकर खाई का पानी बाहर फेंको। महासिंह, शाम हो गयी है, खाई के दरवाजे का पहरा बदला दे।'–यह कहते हए सूबेदार सारी खन्दक में चक्कर लगाने लगे।

वजीरा सिंह पलटन का विदूषक था। बाल्टी में गँदला पानी भर कर खाई के बाहर फेंकता हुआ बोला–'मैं पाधा बन गया हूँ। करो जर्मनी के बादशाह का तर्पण!'– इस पर सब

खिलखिला पड़े और उदासी के बादल फट गये।

लहनासिंह ने दूसरी बाल्टी भरकर उसके हाथ में देकर कहा–'अपनी बाड़ी के खरबूजों में पानी दो। ऐसा खाद का पानी पंजाब–भर में नहीं मिलेगा।'

'हाँ देश क्या है, स्वर्ग है। मैं तो लड़ाई के बाद सरकार से दस घुमा जमीन यहाँ माँग लूँगा और फलों के बूटे लगाऊँगा।

'लाड़ी होराँ को भी यहाँ बुला लोगे ? या वहीं दूध पिलाने वाली फिरंगी मेम–'

'चुपकर। यहाँ वालों को शरम नहीं।'

'देश–देश की चाल है। आज तक मैं उसे समझा न सका कि सिख तम्बाकू नहीं पीते। वह सिगरेट देने में हठ करती है, ओठों में लगाना चाहती है और पीछे हटता हूँ तो समझती है, कि राजा बुरा मान गया, अब मेरे मुल्क के लिए लड़ेगा नहीं।'

अच्छा, अब बोधासिंह कैसा है ?

'अच्छा है।'

'जैसे मैं जानता ही न होऊँ! रात भर तुम अपने दोनों कम्बल उसे उढ़ाते हो, आप सिगड़ी के सहारे गुजर करते हो। उसके पहरे पर आप पहरा दे आते हो। अपने सूखे लकड़ी के तख्ते पर उसे सुलाते हो, आप कीचड़ में पड़े रहते हो। कहीं तुम न माँदे पड़ जाना। जाड़ा क्या है मौत है और 'निमोनिया' से मरने वालों को मुरब्बे नहीं मिला करते।'

'मेरा डर मत करो। मैं तो बुलेल की खड्ड के किनारे मरूँगा। भाई कीरत सिंह की गोदी पर मेरा सिर होगा और मेरे हाथ के लगाये हुए आँगन के पेड़ की छाया होगी।'

वजीरासिंह ने त्यौरी चढ़ाकर कहा–'क्या मरने–मारने की बात लगायी है ? मरें जर्मनी और तुरक! हाँ भाइयों, कैसे–कौन जानता कि दाढ़ियों वाले, घरबारी सिख ऐसा लुच्चों का गीत गायेंगे; पर सारी खन्दक इस गीत से गूँज उठी और सिपाही फिर ताजे हो गये, मानो चार दिन से सोते और मौज ही करते रहे हों।

दोपहर बीत गयी है, अँधेरा है। सन्नाटा छाया हुआ है। बोधासिंह खाली बिस्कुटों के तीन टिनों पर अपने दोनों कम्बल बिछाकर और लहना सिंह के दो कम्बलों और बरानकोट–ओढ़कर सो रहा है। लहनासिंह पहरे पर खड़ा है। एक आँख खाई के मुँह पर है और एक बोधासिंह के दुबले शरीर पर। बोधासिंह कराहा।

'क्यों बोधा भाई, क्या है ?'

'पानी पिला दो।'

लहनासिंह ने कटोरा उसके मुँह से लगाकर पूछा–'कहा, कैसे हो ?' पानी पीकर बोधा बोला–'कँपकपी छूट रही है। रोम–रोम में तार दौड़ रहे हैं। दाँत बज रहे हैं।'

'अच्छा, मेरी जरसी पहन लो।'

'और तुम ?'

'मेरे पास सिगड़ी है और मुझे गरमी लगती है। पसीना आ रहा है।'

'ना, मैं नहीं पहनता, चार दिन से तुम मेरे लिए–

'हाँ, याद आया। मेरे पास दूसरी गरम जरसी है। आज सबेरे ही आयी है। विलायत से मेम बुन–बुनकर भेज रहीं है। गुरू उनका भला करें।'–यों कहकर लहना अपना कोट उतार कर जरसी उतारने लगा।

'सच कहते हो ?'

'और नहीं झूठ?'–यों कहकर नाहीं करते बोधा को उसने जबरदस्ती जरसी पहना दी और आप खाकी कोट और जीन का कुरता–भर पहनकर पहरे पर आ खड़ा हुआ। मेम की जरसी की कथा केवल कथा थी।

आधा घंटा बीता। इतने में खाई के मुँह से आवाज आयी।–'सूबेदार हजारा सिंह!'

'कौन लपटन साहब! हुकुम हुजुर ?–कहकर सूबेदार तनकर फौजी सलाम करके सामने हुआ।

'देखो, इसी समय धावा करना होगा। मील भर की दूरी पर पूरब के कोने में एक जर्मन खाई है। उसमें पचास से जियादह जर्मन नहीं हैं। इन पेड़ों के नीचे दो खेत काटकर रास्ता है। तीन–चार घुमाव हैं, जहाँ मोड़ है। वहाँ पन्द्रह जवान खड़े कर आया हूँ। तुम यहाँ दस आदमी छोड़कर सब को साथ ले उनसे जा मिलो। खन्दक छीनकर वहीं, जब तक दूसरा हुक्म न मिले, डटे रहो। हम यहाँ रहेगा।'

'जो हुकुम।'

चुपचाप सब तैयार हो गये। बोधा भी कम्बल उतारकर चलने लगा। तब लहनासिंह ने उसे रोका। लहना सिंह आगे हुआ, तो बोधा के बाप सूबेदार ने उँगली से बोधा की ओर इशारा किया। लहना सिंह समझ कर चुप हो गया। पीछे दस आदमी कौन रहें, इस पर बड़ी हुज्जत हुई। कोई रहना न चाहता था। समझा–बुझाकर सूबेदार ने मार्च किया। लपटन साहब लहना की सिगड़ी के पास मुँह फेरकर खड़े हो गये और जेब से सिगरेट निकालकर सुलगाने लगे। दस मिनट बाद उन्होंने लहना की ओर हाथ बढ़ाकर कहा–'लो तुम भी पियो।'

आँखें मारते–मारते लहनासिंह सब समझ गया। मुँह का भाव छिपाकर बोला–'लाओ साहब।' हाथ आगे करते ही उसने सिगड़ी के उजाले में साहब का मुँह देखा, बाल देखे। तब उसका माथा ठनका। लपटन साहब के पट्टियों वाले बाल एक दिन में कहाँ उड़ गये और उनकी जगह कैदियों–से कटे हुए बाल कहाँ से आ गये ?

शायद साहब शराब पिये हुए हैं और इन्हें बाल कटवाने का मौका मिल गया है ? लहना सिंह ने जाँचना चाहा। लपटन साहब पाँच वर्ष से उसकी रेजिमेंट में थे।

'क्यों साहब हम लोग हिन्दुस्तान कब जायेंगे ?'

'लड़ाई खत्म होने पर। क्यों क्या यह देश पसन्द नहीं ?'

'नहीं साहब, शिकार के वे मजे यहाँ कहाँ ? याद है, पर साल नकली लड़ाई के पीछे हम–आप जगाधरी जिले में शिकार करने गये थे–'हाँ, हाँ–वहीं जब आप खोते पर सवार थे और आप का खानसामा अब्दुल्ला रास्ते के एक मन्दिर में जल चढ़ाने को रह गया था ? 'बेशक, पाजी कहीं का'– सामने से वह नीलगाय निकली कि ऐसी बड़ी मैंने कभी न देखी थी और आप की एक गोली कन्धे में लगी और पुट्ठे में निकली। ऐसे अफसर के साथ शिकार खेलने में मजा है! क्यों साहब, शिमले से तैयार होकर उस नीलगाय का सिर आ गया था न ? आपने कहा था कि रेजिमेंट की मेस में लगायेंगे।' 'हाँ, पर मैंने वह विलायत भेज दिया'–ऐसे बड़े–बड़े सींग! दो–दो फुट के तो होंगे ?'

'हाँ, लहनासिंह, दो फुट चार इंच के थे। तुमने सिगरेट नहीं पिया ?'

'पीता हूँ साहब, दियासलाई ले आता हूँ' कहकर लहनासिंह खन्दक में घुसा। अब उसे सन्देह नहीं रहा था। उसने झटपट निश्चय कर लिया कि क्या करना चाहिए।

अँधेरे में किसी सोने वाले से वह टकराया।

'कौन ? वजीरासिंह ?'

'हाँ, क्यों लहनासिंह ? क्या, कयामत आ गयी ? जरा तो आँख लगने दी होती ?

(4)

'होश में आओ। कयामत आयी और लपटन साहब की वर्दी पहन कर आयी है।'

'क्या ?'

'लपटन साहब या तो मारे गये हैं या कैद हो गये हैं। उनकी वर्दी पहनकर यह कोई जर्मन आया है। सूबेदार ने इसका मुँह नहीं देखा। मैंने देखा और बातें की हैं। सौहरा साफ उर्दू बोलता है, पर किताबी उर्दू और मुझे पीने को सिगरेट दिया है।'

'तो अब ?'

'अब मारे गये। धोखा है। सूबेदार होरा कीचड़ में चक्कर काटते फिरेंगे और यहाँ खाई पर धावा होगा। उधर उन पर खुले में धावा होगा। उठो, एक काम करो। पल्टन के पैरों के निशान देखते–देखते दौड़ जाओ। अभी बहुत दूर न गये होंगे। सूबेदार से कहो एकदम लौट आवें। खन्दक की बात झूठ है। चले जाओ, खन्दक के पीछे से निकल जाओ। पत्ता तक न खड़के देर मत करो।'

'हुकुम तो यह है कि यहीं–'

'ऐसी–तैसी हुकुम की! मेरा हुकुम–जमादार लहना सिंह, जो इस वक्त यहाँ सबसे बड़ा अफसर है, उसका हुकुम है। मैं लपटन साहब की खबर लेता हूँ।'

'पर यहाँ तो तुम आठ ही हो।'

'आठ नहीं, दस लाख।

एक–एक अकालिया सिख सवा लाख के बराबर होता है। चलो जाओ।'

लौटकर खाई के मुहाने पर लहनासिंह दीवार से चिपक गया। उसने देखा लपटन साहब ने जेब से बेल के बराबर तीन गोले निकाले, तीनों को जगह–जगह खन्दक की दीवारों में घुसेड़ दिया और तीनों में एक तार–सा बाँध दिया। तार के आगे सूत की गुत्थी थी, जिसे सिगड़ी के पास रखा। बाहर की तरफ जाकर एक दियासलाई जलाकर गुत्थी पर रखने–

बिजली की तरह दोनों हाथों से उल्टी बन्दूक को उठाकर लहना सिंह ने साहब की कुहनी पर तान के दे मारा। धमाके के साथ साहब के हाथ से दियासलाई गिर पड़ी। लहना सिंह ने एक कुन्दा साहब की गर्दन पर मारा और साहब 'आक्ख, मीन गौट्ट' कहते हुए चित हो गये। लहना सिंह ने तीनों गोले बीनकर खन्दक के बाहर फेंके और साहब को घसीटकर सिगड़ी के पास लिटाया जेबों की तलाशी ली। तीन–चार लिफाफे और एक डायरी निकाल कर उन्हें अपनी जेब के हवाले किया।

साहब की मूर्छा हटी। लहनासिंह हँसकर बोला–क्यों लपटन साहब ? मिजाज कैसा है ? आज मैंने बहुत बातें सीखीं। यह सीखा कि सिख सिगरेट पीते हैं। यह सीखा कि जगाधरी के जिले में नीलगायें होती हैं और उनके दो फुट चार इंच के सींग होते हैं। यह सीखा कि मुसलमान खानसामा मूर्तियों पर जल चढ़ाते हैं और लपटन साहब खोते पर चढ़ते हैं, पर यह तो कहो, ऐसी साफ उर्दू कहाँ से सीख आये! हमारे लपटन साहब तो बिना 'डैम' के पाँच लफ्ज भी नहीं बोला करते थे।

लहना ने पतलून की जेबों की तलाशी नहीं ली थी। साहब ने, मानो जाड़े से बचने के लिए, दोनों हाथ जेब में डाले।

लहना सिंह कहता गया–'चालाक तो बड़े हो,' पर माँझे का लहना इतने बरस लपटन साहब के साथ रहा है। उसे चकमा देने के लिए चार आँखें चाहिए। तीन महीने हुए एक तुरकी मौलवी मेरे गाँव में आया था। औरतों को बच्चे होने के ताबीज बाँटता था और बच्चों को दवाई देता था। चौधरी के बड़ के नीचे मंजा बिछाकर

हुक्का पीता रहता था और कहता था जर्मनी वाले बड़े पण्डित हैं। वेद पढ़–पढ़ कर उसमें से विमान चलाने की विद्या जान गये हैं। गौ को नहीं मारते। हिन्दुस्तान में आ जायेंगे, तो हत्या बन्द कर देंगे। मण्डी के बनियों को बहकाता था कि डाकखाने से रूपया निकाल लो, सरकार का राज्य जाने वाला है। डाक–बाबू पोल्हूराम भी डर गया था। मैंने मुल्लाजी की दाढ़ी मूड़ दी थी और गाँव से बाहर निकालकर कहा था कि मेरे गाँव में अब पैर रखा, तो–'

साहब की जेब में से पिस्तौल चली और लहना की जाँघ में गोली लगी। इधर लहना की हैनरीमार्टिनी के दो फायरों ने साहब की कपालक्रिया कर दी। धड़ाका सुनकर सब दौड़ आये।

'बोधा चिल्लाया, क्या है ?'

लहनासिंह ने उसे यह कहकर सुला दिया कि 'एक हड़का हुआ, कुत्ता आया था, मार दिया' और औरों से सब हाल कह दिया। सब बन्दूकें लेकर तैयार हो गये। लहना ने साफा फाड़ कर घाव के दोनों तरफ पट्टियाँ कसकर बाँधी। घाव माँस में था ? पट्टियों के कसने से लहू निकलना बन्द हो गया।

इतने में सत्तर जर्मन चिल्लाकर खाई में घुस पड़े। सिक्खों की बन्दूकों की बाढ़ ने पहले धावे को रोका। दूसरे को रोका पर यहाँ थे आठ (लहना सिंह तक–तक कर मार रहा था–वह खड़ा था, और लेटे हुए थे) और वे सत्तर। अपने मुर्दा भाइयों के शरीर पर चढ़कर जर्मन आगे घुस आते थे। थोड़े से मिनटों में वे..............................

अचानक आवाज आयी–'वाहे गुरूजी की फतह! वाहे गुरूजी का खालसा!' और धड़ाधड़ बन्दूकों के फायर जर्मनों के ऊपर पड़ने लगे। ऐन मौके पर जर्मन दो चक्की के पाटों के बीच आ गये। पीछे से सूबेदार हजारा सिंह के जवान आग बरसाते थे और सामने लहनासिंह के साथियों के संगीन चल रहे थे। पास आने पर पीछे वाले ने भी संगीन पिरोना शुरू कर दिया।

एक किलकारी और 'अकाल सिक्खों की फौज आयी! वाहे गुरूजी की फतह! वाहे गुरूजी का खालसा! सत श्री अकाल पुरुष!!!–' और लड़ाई खत्म हो गयी। तिरसठ जर्मन या तो खेत रहे थे या कराह रहे थे। सिक्खों में पन्द्रह के प्राण गये। सूबेदार के कन्धे में से गोली आर–पार निकल गयी। लहना सिंह की पसली में एक गोली लगी। उसने घाव को खन्दक की गीली मिट्टी से पूर लिया और बाकी का साफा कसकर कमरबन्द की तरह लपेट दिया। किसी को खबर न हुई कि लहना को दूसरा भारी–घाव लगा है।

लड़ाई के समय चाँद निकल आया था, ऐसा चाँद, जिसके प्रकाश से संस्कृत कवियों का दिया हुआ 'क्षयी' नाम सार्थक होता है और हवा ऐसी चल रही थी कि जैसी कि बाणभट्ट की भाषा में 'दन्तवीणोपदेशाचार्य' कहलाती। वजीरासिंह, कह रहा था कि कैसे मन–मन भर फ्रांस की भूमि मेरे बूटों से चिपक रही थी, जब मैं दौड़ा–दौड़ा सूबेदार के पीछे गया था। सूबेदार लहना सिंह से सारा हाल सुन और कागजात पाकर वे उसकी तुरन्त बुद्धि को सराह रहे थे और कह रहे थे कि तू न होता, तो आज सब मारे जाते।

इस लड़ाई की आवाज तीन मील दाहिनी ओर की खाई वालों ने सुन ली थी। उन्होंने पीछे टेलीफोन कर दिया था। वहाँ झटपट दो बीमार ढ़ोने की गाड़ियाँ चलीं, जो कोई डेढ़ घंटे के अन्दर आ पहुँची। फील्ड अस्पताल नजदीक था। सुबह होते–होते वहाँ पहुँच जायेंगे, इसलिए मामूली पट्टी बाँधकर एक गाड़ी में घायल लिटाये गये और दूसरी में लाश रखी गयी। सूबेदार ने लहना सिंह

की जाँघ में पट्टी बँधवानी चाही, पर उसने यह कहकर टाल दिया कि थोड़ा घाव है, सबेरे देखा जाएगा। बोधासिंह ज्वर में बर्रा रहा था। वह गाड़ी में लिटाया गया। लहना को छोड़कर सूबेदार जाते नहीं थे। यह देख लहना ने कहा–'तुम्हें बोधा की कसम है, और सूबेदार जी की सौगन्ध है, जो इस गाड़ी में न चले जाओ।'

'और तुम ?'

'मेरे लिए वहाँ पहुँचकर गाड़ी भेज देना और जर्मन मुरदों के लिए भी तो गाड़ियाँ आती होंगी। मेरा हाल बुरा नहीं है। देखते नहीं, मैं खड़ा हूँ ? वजीरा सिंह मेरे पास है ही।'

'अच्छा, पर–'

'बोधा गाड़ी पर लेट गया। भला। आप भी चढ़ जाओ। सुनिए तो, सूबेदारनी होराँ को चिट्ठी लिखो, तो मेरा मत्था टेकना लिख देना और जब घर जाओ, तो कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था, वह मैंने कर दिया।'

गाड़ियाँ चल पड़ी थीं। सूबेदार ने चढ़ते–चढ़ते लहना का हाथ पकड़कर कहा–तैने मेरे बोधा के प्राण बचाये हैं। लिखना कैसा ? साथ ही घर चलेंगे। अपनी सूबेदारनी को तू ही कह देना। ''उसने क्या कहा था ?''

'अब आप गाड़ी पर चढ़ जाओ, मैंने जो कहा, वह लिख देना, और कह भी देना।'

गाड़ी के जाते ही लहना लेट गया; 'वजीरा, पानी पिला दे, और मेरा कमरबन्द खोल दे। तर हो रहा है।'

(5)

मृत्यु के कुछ समय पहले स्मृति बहुत साफ हो जाती है। जन्मभर की घटनायें एक–एक कर के सामने आती हैं। सारे दृश्यों के रंग साफ होते हैं, समय की धुन्ध बिल्कुल उन पर से हट जाती है।

लहनासिंह बारह वर्ष का है। अमृतसर में मामा के यहाँ आया हुआ है। दही वाले के यहाँ, सब्जी वाले के यहाँ हर कहीं, उसे एक आठ वर्ष की लड़की मिल जाती है। जब वह पूछता है–'तेरी कुड़माई हो गयी ? 'तब 'धत्' कहकर वह भाग जाती है। एक दिन उसने वैसे ही पूछा, तो उसने कहा–'हाँ, कल हो गयी, देखते नहीं, यह रेशमी बूटों वाला सालू ?'–सुनते ही लहनासिंह को दुःख हुआ। क्रोध हुआ। क्यों हुआ ?

'वजीरासिंह, पानी पिला दे।'

पच्चीस वर्ष बीत गये। अब लहनासिंह नं. 77 रैफल्स में जमादार हो गया है। उस आठ वर्ष की कन्या का ध्यान ही न रहा। न मालूम वह कभी मिली थी या नहीं। सात दिन की छुट्टी लेकर जमीन के मुकदमे की पैरवी करने वह अपने घर चला गया। वहाँ रेजिमेन्ट के अफसर की चिट्ठी मिली कि फौज लाम पर जाती है, फौरन चले आओ। साथ ही सूबेदार हजारासिंह की चिट्ठी मिली कि मैं और बोधासिंह भी लाम पर जाते हैं। लौटते हुए हमारे घर होते हुए जाना। साथ ही चलेंगे। सूबेदार का गाँव रास्ते में पड़ता था, और सूबेदार उसे बहुत चाहता था। लहना सिंह सूबेदार के यहाँ पहुँचा।

जब चलने लगे, तब सूबेदार बेढ़े में से निकल कर आया। बोला 'लहना, सूबेदारनी तुझको जानती है, बुलाती है। जा मिल आ।' लहना सिंह भीतर पहुँचा। सूबेदारनी मुझे जानती है ? कब से ? रेजिमेंट के क्वार्टरों में तो कभी सूबेदार के घर के लोग रहे नहीं। दरवाजे पर जाकर 'मत्था टेकना' कहा। असीस सुनी। लहनासिंह चुप।

'मुझे पहचाना ?'

'नहीं'

तेरी कुड़माई हो गयी–'धत्' कल हो गयी–देखते नहीं, यह रेशमी बूटों वाला सालू–अमृतसर में।

भावों की टकराहट से मूर्छा खुली। करवट बदली। पसली का घाव बह निकला।

'वजीरा, पानी पिला' उसने कहा था।

स्वप्न चल रहा है! सूबेदारनी कह रही है–'मैंने तेरे को आते ही पहचान लिया था। एक काम कहती हूँ। मेरे तो भाग फूट गये। सरकार ने बहादुरी का खिताब दिया है, लायलपुर में जमीन दी है, आज नमक–हलाली का मौका आया है, पर सरकार ने हम तीमियों की एक घघरिया पलटन क्यों न बना दी, जो मैं भी सूबेदार के साथ चली जाती ? एक बेटा है। फौज में भर्ती हुए उसे एक ही बरस हुआ है। उसके पीछे चार हुए, पर एक भी नहीं जिया।' सूबेदारनी रोने लगी–'अब दोनों जाते हैं। मेरे भाग! तुम्हें याद है, एक दिन टाँगे वाले का घोड़ा दही वाले की दुकान के पास बिगड़ गया था। तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे। आप घोड़े की लातों में चले गये थे, और मुझे उठाकर दुकानदार के तख्ते पर खड़ा कर दिया था। ऐसे ही इन दोनों को बचाना यह मेरी भिक्षा है। तुम्हारे आगे मैं आँचल पसारती हूँ।'

रोती–रोती सूबेदारनी ओवरी में चली गई। लहना भी आँसू पोंछता हुआ बाहर आया।

'वजीरासिंह, पानी पिला' उसने कहा था।

लहना का सिर अपनी गोद में रखे वजीरा सिंह बैठा है। जब माँगता है, तब पानी पिला देता है, आधे घण्टे तक लहना चुप रहा, फिर बोला–कौन! कीरतसिंह ?' वजीरा ने समझकर कहा–हाँ'

'भइया, मुझे और ऊँचा कर ले। अपने पट्टे पर मेरा सिर रख ले।'

वजीरा ने वैसा ही किया।

'हाँ, अब ठीक है। पानी पिला दे। बस, अब के झाड़ में यह आम खूब फलेगा। चाचा–भतीजा दोनों यहीं बैठकर आम खाना। जितना बड़ा तेरा भतीजा है, उतना ही यह आम है। जिस महीने उसका जन्म हुआ था, उसी महीने में मैंने इसे लगाया था।'

वजीरासिंह के आँसू टप–टप टपक रहे थे।

कुछ दिन पीछे लोगों ने अखबारों में पढ़ा–फ्रांस और बेल्जियम 68 वीं सूची–मैदान में घावों में मरा–नं. 77 सिख राइफल्स जमादार लहनासिंह।

प्रश्न–अभ्यास

अति लघुउत्तरीय प्रश्न

1. अमृतसर के बम्बूकार्ट वाले बाजार में लड़के ने लड़की से क्या कहा ?
2. ''तुम राजा हो, मेरे मुल्क को बचाने आए हो।'' किसने, किससे कहा ?
3. पलटन का विदूषक कौन था ?
4. ''जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था, मैंने कर दिया''
   लहना सिंह के इस कथन से गुलेरी जी ने पाठकों को क्या प्रेरणा दी है? निम्नलिखित में से किसी एक का चयन करें–

(i) आदर्श प्रेम का मूल्य आत्मोत्सर्ग से चुकता है।
(ii) सिपाही को इसी प्रकार अपने देश की रक्षा करना है।
(iii) सिपाही का कर्त्तव्य है कि वह अपने अधिकारी और उसके पुत्र की रक्षा करे।

5. **वाक्य में प्रयोग करें :–**

(1) बोली का मरहम लगाना
(2) माथा ठनकना।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. अमृतसर के बाजार का वर्णन करो।
2. तेरी कुड़माई हो गई ''के उत्तर में हाँ हो गई।'' सुनकर लहनासिंह की क्या प्रतिक्रिया हुई ?
3. ज्वर में बर्राते हुए बोधासिंह की ''लहना'' ने कैसे मदद की ?
4. लहना सिंह ने नकली लपटन की जाँच किस प्रकार की ?
5. यह मेरी भिक्षा है। तुम्हारे आगे आँचल पसारती हूँ।'' इस वाक्य के द्वारा सूबेदारनी लहना सिंह से क्या चाहती थी ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. गाड़ी के जाते ही लहना लेट गया–'वजीरा पानी पिला दे और मेरा कमरबंद खोल दे–––लहना सिंह की निश्चिंतता का क्या कारण था ?
2. लहना सिंह का चरित्र–चित्रण कीजिए।
3. ''उसने कहा था'' कहानी के शीर्षक की सार्थकता सिद्ध कीजिए।
4. 'उसने कहा था' कहानी से हमें क्या–प्रेरणा मिलती है लिखें।

योग्यता विस्तारः–

आदर्श प्रेम पर एक लघु कहानी लिखिए।

शब्दार्थ

मुल्क = देश।
सुथने = बालों का जूड़ा।
सोते = झरने।
पाधा = पुरोहित।
खोता = गधा।
बर्राना = बड़बड़ाना।
बेड़ा = जनानखाना (स्त्रियों का कमरा)।
बरानकोट = ओवरकोट।
पट्ट = जाँघ, गोद।
चीथकर = छीलकर।
कुड़माई = सगाई।
सालू = कढ़ाई किया हुआ रेशमी दुपट्टा।
मंजा = खटिया।
ओवरी = बरामदा।

सूखी डाली

उपेन्द्र नाथ अश्क

जन्म—शिक्षाः— उपेन्द्र नाथ अश्क आधुनिक काल के उल्लेखनीय नाटककार हैं। अश्क जी का जन्म 14 दिसम्बर, 1910 को पंजाब में हुआ था। शिक्षक कार्य के अतिरिक्त अश्क जी ने पत्रकारिता के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। रेडियो, नाटक और फिल्मों से भी उनका निकट का संबंध रहा।

अश्क जी को 1965 में संगीत नाटक अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया।

रचनाएँः— एकांकी एवं नाटक —(1) जय—पराजय, (2) पैंतरे, (3) कैद और उड़ाके, (4) छठा बेटा, (5) स्वर्ग की झलक, (6) अंधी गली, (7) तौलिए, (8) सूखी डाली आदि।

साहित्यिक विशेषताएँः—

(1) अश्क जी ने अपने नाटकों के द्वारा समाज पर तीखे व्यंग्य किये हैं।

(2) उनकी रचनाओं में सामाजिक समस्याओं का चित्रण यथार्थवादी ढंग से हुआ है।

(3) अश्क जी के सभी नाटक, रंगमंच पर खेले गए और सफल भी हुए।

(4) उपन्यास, कहानी, कविता और संस्मरण सभी विधाओं में अश्क जी ने लेखन कार्य किया किन्तु वे एकांकी और नाटक के क्षेत्र में अधिक सफल हुए ।

(5) आपकी एकांकियाँ अधिकांशतः मध्यमवर्गीय जीवन से संबंध रखती हैं।

भाषा—शैलीः— (1) अश्क जी की भाषा पर अच्छी पकड़ रही है तभी तो वे सभी पात्रों का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण करने में सफल हुए। (2) पात्रानुकूल एवं देशकाल अनुरूप सहज प्रभावी संवाद आपकी रचनाओं की खूबी है।

उदाहरणः— गर्म होते हैं तो आग बन जाते हैं, नर्म होते हैं तो मोम से भी कोमल दिखाई देते हैं। (बेला, सूखी डाली से)

(3) अश्क जी की कहानियों और उपन्यासों की भाषा भी प्रेमचन्द की तरह सीधी सरल भाषा है। वे सर्वथा यथार्थ के करीब हैं।

साहित्य में स्थानः— उपेन्द्रनाथ अश्क जी के लगभग ग्यारह नाटक और चालीस से अधिक एकांकी प्रकाशित हो चुके हैं और उनका रंगमंच में प्रदर्शन भी हो चुका है, जो उनकी सफलता का परिचायक है। तभी तो एकांकी और नाटक साहित्य में उनका नाम सर्वोपरि है।

सूखी डाली

केन्द्रीय भावः— अश्क जी की प्रस्तुत एकांकी में दो पीढ़ियों के भावों और विचारों की टकराहट दिखाकर पाठकों को, दर्शकों को संयुक्त परिवार का महत्व समझाया गया है और बिखरते परिवारों को समेटने की प्रेरणा दी गई है।

पाठ – 6
सूखी डाली

पात्र–परिचय

बेला (छोटी बहू)	रजवा
छोटी भाभी	पारो
(बेला की सास, इन्दु की माँ)	
मँझली भाभी	दादा
बड़ी भाभी	कर्मचन्द
मँझली बहू	परेश
बड़ी बहू	भाषी
इन्दु	मल्लू

पहला दृश्य

(मानव प्रगति के इस युग में, जब व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अराजकता की हद तक महत्व दिया जाता है और तानाशाही को ''सभ्य'' समाज में अत्यंत निन्दनीय माना जाता है, दादा मूल राज अपने समस्त कुटुंब को एक यूनिट बनाए, उस पर पूर्णरूप से अपना प्रभुत्व जमाए, उस महान बरगद की तरह अटल खड़े हैं, जिसकी लंबी–लंबी डालियाँ उनके आँगन में एक बड़े छाते की तरह धरती को आच्छादित किए हुए, वर्षों से तूफानों और आँधियों का सामना किए जा रही हैं।)

बड़ी बहू : (इन्दु के कंधों पर अपने दोनों हाथ रखते हुए) आखिर कुछ कहो भी, क्या कह दिया छोटी बहू ने ?

इन्दु : (चुप)

बड़ी बहू : क्या कह दिया उसने, जो इतनी **बिफरी** हुई हो ?

इन्दु : (क्रोध से) और क्या ईंट मारती।

बड़ी बहू : कुछ कहो भी।

इन्दु : मेरे मायके में यह होता है, मेरे मायके में यह नहीं होता। (हाथ मटका कर) अपने और अपने मायके के सामने तो वह किसी को कुछ गिनती ही नहीं। हम तो उसके लिए फूहड़, गँवार और मूर्ख हैं।

बड़ी बहू : (आश्चर्य से) क्या।

इन्दु : बैठक के बाहर मिश्रानी खड़ी रो रही थी। मैंने पूछा तो मालूम हुआ कि बहू रानी ने उसे काम से हटा दिया है।

बड़ी बहू : (उसी आश्चर्य से) काम से हटा दिया। भला क्या कसूर था उसका ?

इन्दु : कसूर यह था कि उसे काम करना नहीं आता।

बड़ी बहू : (स्तम्भित होकर) काम करना नहीं आता।

इन्दु : उस बेचारी ने कहा भी मैं दस पाँच दिन में सब कुछ सीख जाऊँगी। भला कै दिन हुए हैं मुझे आपका काम करते, किंतु वह रानी न मानी। झाड़न उसके हाथ से छीन लिया और कहा कि हट तू, मैं सब कुछ कर लूँगी। अभी तक इतना तो सलीका नहीं कि बैठक कैसे साफ की जाती है, दस पाँच दिन में तू क्या सीख जाएगी ?

बड़ी बहू : सलीका नहीं......।

इन्दु : मैंने जाकर समझाया कि भाभी दस साल से यही मिश्रानी घर का काम कर रही हैं। घर भर की सफाई करती है, बर्तन मलती है, कपड़े धोती है। जाने तुम्हारा कौन–सा ऐसा काम है जो इससे

नहीं होता और फिर मैंने समझाया कि भाभी नौकर से काम लेने की भी तमीज होनी चाहिए।

बड़ी बहू : हाँ, और क्या........।

इन्दु : झट से बोली, 'वह तमीज तो बस आप लोगों को है।' मैंने कहा तुम तो लड़की हो। मैं तो सिर्फ यह कहना चाहती थी कि नौकर से काम लेने का भी ढंग होता है। इस पर तुनक कर बोली और वह ढंग मुझे नहीं आता मैंने नौकर जो यहीं आकर देखे हैं। फिर कहने लगीं, काम लेने का ढंग उसे आता है, जिसे काम की परख हो। सुबह शाम झाड़ू लगा देने से ही तो कमरा साफ नहीं हो जाता। उसकी बनावट–सजावट भी कोई चीज है। न जाने तुम लोग किस तरह इन फूहड़ नौकरों से गुजारा कर लेती हो। मेरे मायके में तो ऐसी गँवार मिश्रानी दो दिन छोड़, दो घड़ी भी न टिकती।

बड़ी बहू : कही उसने ये सब बातें।

इन्दु : और कैसे कही जाती हैं। जब से आई हैं, यही तो सुन रहे हैं– नौकर अच्छे हैं तो उसके मायके में, खाना पीना अच्छा है तो उसके मायके में, कपड़े पहनने का ढंग आता है तो उसके मायके वालों को, हम तो न जाने कैसे जी रहे हैं। (नाक–भौं चढ़ाकर) यहाँ के लोगों को खाना–पीना, पहनना–ओढ़ना कुछ भी नहीं आता। हमारे नौकर गँवार, हमारे पड़ोसी गँवार, हम खुद गँवार..........

बड़ी बहू : (चकित विस्मित सिर्फ सुनती है)

इन्दु : मैंने भी कह दिया–क्या बात है भाभी तुम्हारे मायके की ! एक नमूना तुम्हीं जो हो। एक मिश्रानी भी ले आतीं तो हम गँवार भी उससे कुछ सीख लेते।

[दाँयी दीवार के कमरे से छोटी भाभी (इन्दु की माँ और छोटी बहू बेला की सास) प्रवेश करती हैं। उसके पीछे–पीछे रजवा है।]

छोटी भाभी : क्यों इन्दु बेटी, क्या बात हुई–यह रजवा रो रही है। कोई कड़वी बात कह दी छोटी बहू ने इसे ?

इन्दु : मीठी वो कब कहती है, जो आज कड़वी कहेगी।

छोटी भाभी : यह आज तुम कैसी जली कटी बातें कर रही हो। छोटी बहू से झगड़ा हो गया है क्या ?

रजवा : (भरे हुए गले से) माँ जी, आज उन्होंने बरबस मुझे काम से हटा दिया। इतने बरस हो गए आपकी सेवा करते, कभी किसी ने इस तरह बेइज्जती न की थी। मुझे तो माँ आप अपने पास ही रखियेगा। आज से उनका काम न करने जाऊँगी।

छोटी भाभी : वह तो बच्ची है मिश्रानी, तू भी उसके साथ बच्ची हो गयी।

इन्दु : (मुँह से बिचका कर व्यंग्य से) जी हाँ, बच्ची है ! रोटी को चोची कहती है। उसे तो बात ही करना नहीं आता! (क्रोध से) अपने मायके के सामने तो वह किसी को कुछ समझती ही नहीं और फिर गज–भर

की जबान।

बड़ी बहू : बात यह है छोटी माँ, कि छोटी बहू को हमारा खाना–पीना, पहनना–ओढ़ना, कुछ भी पसंद नहीं। उसे हमसे, हमारे पड़ोस से हमारी हर बात से घृणा है।

छोटी भाभी : (चिंता से) फिर कैसे चलेगा ? हमारे घर में तो मिलकर रहना, बड़ों का आदर करना, अपने घर की रूखी –सूखी को दूसरों की चुपड़ी से अच्छा समझना नौकरों पर दया और छोटों पर।

(मँझली बहू बाहर से हँसती हुई प्रवेश करती है।)

मँझली बहू : खिहि–खिहि–खिहि हा–हा–हा।

इन्दु : क्या बात है भाभी जो हँसी के मारे लोट–पोट हुई जाती हो ?

मँझली बहू : खिहि–खिहि (हाथ पर हाथ ekjrh gS&gk&gk&gk&gk&gk&gk ¼eSjhl se>y hHkkHkh vkSj cMh HkkHkh iz'sk djrh gSa½

दोनों : क्या बात है जो आज इतनी हा हा, ही ही हो रही है।

इन्दु : यह भाभी है कि बस हँसे जा रही हैं, कुछ बताती ही नहीं।

मँझली बहू : मैं कहती हूँ।

(फिर हँस पड़ती है।)

बड़ी बहू : आखिर कुछ कहो भी।

मँझली बहू : आज भाई परेश की वो गत बनी कि बेचारे अपना–सा मुँह लेकर रह गए खिहिहि–हा–हा–हा–हा–हा–हा–हा।

छोटी भाभी : ओ हो, तुम्हारी हँसी भी बहू....।

मँझली बहू : मैं क्या करूँ, मैं हँसी के मारे मर जाऊँगी छोटी माँ! अभी भी छोटी बहू ने परेश की वो गत बनाई कि बेचारा अपना–सा मुँह लेकर दादा जी के पास भाग गया।

बड़ी बहू : क्या बात हुई ?

मँझली बहू : मैं तो उधर सामान रखने गई थी। बहुत बातें तो मैंने सुनी ही नहीं। बहुत समझ भी नहीं पाई अंग्रेजी में गिटपिट कर रहे थे। छोटी बहू का पारा कुछ चढ़ा हुआ था। इतना मालूम हुआ कि परेश नहाकर कमरे में गया तो बहू रानी ने सारा फर्नीचर निकाल कर बाहर रख दिया था। परेश ने कारण पूछा। छोटी बहू ने कहा, ''मैं इन टूटी–फूटी कुर्सियों और गले–सड़े फर्नीचर को अपने कमरे में न रहने दूँगी''। परेश कहने लगा, 'हमारे बुजुर्ग'। बात काट कर छोटी बहू ने कहा, ' हमारे बुजुर्ग तो नंगे बुच्चे जंगलों में घूमा करते थे तो क्या हम भी उनकी तरह नंगे घूमें।' (हँसती है) और जो सामान पड़ा था वो भी उठाकर बाहर फेंक दिया।

इन्दु : फिर–फिर

मँझली भाभी : छोटी बहू।

छोटी भाभी : यह तो–।

मँझली बहू : परेश ने कहा, 'इस फर्नीचर पर हमारे दादा बैठते थे, पिता बैठते थे, चाचा बैठते थे।' उन लोगों को कभी शर्म नहीं आई; उन्होंने कभी फर्नीचर के गले–सड़े होने की शिकायत नहीं की; अब अगर

मैं जाकर इसे रखने में आपत्ति करूँगा तो दादा कहेंगे कि तहसीलदार होते ही लड़के का सिर फिर गया है (हाथ मटका कर) न भाई! मैं यह बात उनसे नहीं कह सकता।'

मँझली और बड़ी भाभी : हाँ, ठीक ही तो कहा परेश ने।

छोटी भाभी : परेश—मेरा बेटा भला।

मँझली बहू : तब बहू ने कहा—'तो न कहो—मैं तो इस गले—सड़े समान को कमरे के पास तक न फटकने दूँगी।' इस बेढंगे फर्नीचर से तो नीचे धरती पर चटाई बिछाकर बैठे रहना अच्छा है। मेरे मायके में—।

इन्दु : (क्रोध से) बस, उसे तो अपने मायके की पड़ी रहती है, चौबीसों घड़ी।

मँझली बहू : और छोटी बहू ने अपने मायके के बड़े—बड़े कमरों और उनके कीमती फर्नीचर का बखान किया। (हँसती है) और महाशय परेश की एक भी न चलने दी। बेचारे भीगी बिल्ली बने दादाजी के पास चले गए खि हि हि खि हि हि........।

[हँसती है। दूसरी भी उसके साथ हँसती है।]

मँझली बहू : मैं तो चुपके से चली आई (मुँह बिचका कर) जबान है छोटी बहू की या कतरनी और फिर जब अंग्रेजी बोलने लगती है तो कुछ समझ में ही नहीं आता। परेश बेचारा तो अपना—सा मुँह लेकर रह जाता है। तहसीलदार कैसे बन गया ?

इन्दु : बस जबान ही जबान है। बात तो तब है, जब काम भी हो। एक काम को कहो नाक—भौं चढ़ाती है। दादाजी ने चार कपड़े धोने को कहा था, वो तो पड़े गुसलखाने में गल रहे हैं।

छोटी भाभी : गुसलखाने में गल रहे हैं। तू उठा क्यों न लाई उन्हें ? जा भागकर उठा ला और फटक कर आँगन में डाल दे। मैं बहू को समझा दूँगी—इस तरह कैसे चलेगा........(और भी चिंता से) परेश ने समझाया नहीं उसे ?

इन्दु : परेश की तो वहाँ बड़ी सुनवायी होती है।

[हँसती है]

मँझली बहू : वह मलमल के थान और अबरों की बात याद है न अभी तक पड़े हुए हैं, कह—कह कर हार गए परेश महाशय। बहू रानी ने हाथ तक न लगाया, उन्हें और वे शर्म के मारे ले जाते नहीं दादाजी के पास। कचहरी में होंगे तहसील—दार, घर में तो **मुलजिमों** से भी गए—बीते हो जाते हैं। (हँसती है, इन्दु और बड़ी बहू भी हँसती है।)

छोटी भाभी : पर दादाजी के कपड़े.....

बड़ी भाभी : तुम भी बहन बस.......क्या इतना पढ़—लिख कर छोटी बहू कपड़े धोएगी ?

इन्दु : क्यों ? उसके हाथ नमक मिट्टी

के हैं, जो गल जाएँगे। (बाहर से दादा के हुक्का गुड़गुड़ाने की आवाज आती है।)

छोटी भाभी : तुम चलो इन्दु कपड़े फटक कर अहाते में डाल दो। शायद उन्हें जरूरत हो, माँगेंगे तो.......मैं बहू को समझा दूँगी। (पर्दा गिरता है।)

दूसरा दृश्य

(वही बरामदा। दाँयी ओर के तख्त पर बिस्तर बिछा हुआ है। दीवार के साथ तकिया लगा है। दादा आराम से तकिये के सहारे बैठे हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। उनका मँझला लड़का कर्मचन्द पास बैठा उनके पैर दबा रहा है। हुक्का पीते–पीते दादा बच्चों को बाहर अहाते में खेलते देख रहे हैं। गुसलखाने से हैंड–पंप के जल्दी–जल्दी चलने की आवाज आ रही है। शायद कोई बच्चा उसे चला रहा है। क्योंकि कर्मचन्द की भृकुटी तन गई है।) (पर्दा उठने के कुछ क्षण बाद तक नल के चलने और हुक्के के गुड़गुड़ाने की आवाज आती रहती है। फिर–)

कर्मचन्द : (क्रोध से) बस करो जगदीश! क्या खट–खट लगा रखी है ? जरा आराम करने दो। अभी–अभी खाना खाकर बैठे हैं कि तुम।

दादा : (हुक्के की नली को हटाकर उधर देखते हुए) नहीं नहीं। खेलने दो बच्चों को। (फिर हुक्का गुड़गुड़ाते हैं) बच्चे (हँसते हैं) बरगद की टूटी डाली लाकर आँगन में लगा दी और उसे पानी दे रहे हैं–(हँसते हैं) नहीं जानते कि पेड़ से टूटी डाली महज पानी देने से नहीं पनपती। (हुक्का गुड़गुड़ाते हैं, फिर नली छोड़कर कर्मचन्द से) मैं कहा करता हूँ न बेटा कि एक बार पेड़ से जो डाली टूट गई, टूट गई। उसे लाख पानी दो, उनमें वह ताजगी न आयेगी और हमारा यह परिवार बरगद के इस महान पेड़ की तरह है।

कर्मचन्द : लेकिन शायद अब इस पेड़ से एक डाली टूट कर अलग हो जाये।

दादा : (चिन्ता से) क्या कहते हो ! कौन अलग हो रहा है ?

कर्मचन्द : शायद छोटा अलग हो जाए।

दादा : परेश! पर क्यों उसे क्या तकलीफ है।

कर्मचन्द : उसे तो नहीं, तकलीफ छोटी बहू को है।

दादा : लेकिन मुझे किसी ने बताया तक नहीं। कोई शिकायत थी तो उसे वहीं मिटा देना चाहिए था। हल्की–सी खरोंच भी, अगर उस पर फौरन दवाई न लगा दी जाये, तो वह बढ़ कर एक बड़ा घाव बन जाती है और वही घाव नासूर हो जाता है, फिर लाख मरहम लगाओ, ठीक नहीं होता।

कर्मचन्द : मैं ठीक तो नहीं जानता, पर जहाँ तक मेरा ख्याल है, छोटी बहू के मन में घमंड की मात्रा जरूरत से कुछ ज्यादा है। मैंने वे मलमल के थान और रजाई के अबरे–लाकर दिये थे न। और सब ने तो रख लिए, पर सुना है कि छोटी बहू को पसंद नहीं आए। अपने मायके के घराने को शायद वह इस घराने से बड़ा समझती है और इस घर को नफरत की नजर से देखती है।

दादा : बेटा बड़प्पन बाहर की चीज नहीं–बड़प्पन तो मन का होना चाहिए। फिर घृणा को बेटा, घृणा से नहीं मिटाया जा सकता। बहू तभी अलग होना चाहेगी जब उसे नफरत के बदले नफरत दी जाएगी, लेकिन यदि उसे घृणा के बदले स्नेह मिले तो उसकी सारी नफरत धुँधली पड़कर एकदम मिट ही जायेगी। (हुक्का गुड़ गुड़ाते हैं) और बड़प्पन भी बेटा, किसी से मनवाया नहीं जा सकता। अपने व्यवहार से अनुभव कराया जा सकता है। ठूँठ पेड़ आकाश को छूने पर भी अपने बड़प्पन का सिक्का हमारे दिलों पर उस वक्त तक नहीं बैठा सकता जब तक वह अपनी शाखाओं में वह ऐसे पत्ते नहीं लाता, जिनकी ठंडी–ठंडी छाया मन से सारे ताप को न हर ले और जिसके फूलों की भीनी–भीनी खुशबू हमारे मन–प्राण को हरा न कर दे।

भाषी : दादाजी, मल्लू और जगदीश ने मेरा बरगद का पेड़ उखाड़ दिया (मल्लू से लड़ते हुए चीख–चीख कर) क्यों उखाड़ा तूने मेरा पेड़–क्यों उखाड़ा.......?

दादा : पेड़ ! (हँसते हैं) बच्चे ! (हँसते हैं) ठहरो, लड़ो मत बेटा। जाना कर्मचन्द जरा हटाना इन दोनों को...... ।(कर्मचन्द जाता है। दादा फिर हुक्के की नली मुँह से लगा लेते हैं–परेश नीची नजर किए प्रवेश करता है।)

दादा : आओ बेटा परेश वो मैंने एक दो कपड़े भेजे थे न, जरा देखना बहू ने उन्हें धो डाला है या नहीं। धो डाले हों तो ले आओ जरा। फिर तुमसे बात करूँगा।

परेश : मैं शर्मिन्दा हूँ....... ।

दादा : नहीं धुले तो फिर धुल जाएँगे बेटा ! आओ, इधर बैठो मेरे पास। मैं तो तुम्हें बुलाने ही वाला था। आओ–आओ इधर आकर बैठो। (फिर हुक्का गुड़गुड़ाने लगते हैं। परेश चुपचाप दादा के पास बैठ जाता है।)

दादा : (फिर हुक्का गुड़गुड़ाना छोड़कर) मुझे कर्मचन्द से अभी पता चला है कि तुम्हारी बहू को रजाई अबरे और मलमल का थान पसंद नहीं आया। देखो बेटा, तुम उसे शहर ले जाओ और उसकी पसंद की चीजें ले दों।

परेश : मैं......मैं......लेकिन समझा था कि और सबने थान और अबरे रख लिए हैं।

दादा : हाँ और तो सब ने रख लिए हैं, पर छोटी बहू को शायद ये डिजाइन पसंद नहीं आए। तुम्हारे ताऊ ठहरे पुराने जमाने के आदमी। वो नये फैशन की चीजें खरीदना क्या जानें। तभी तो मैं कहता हूँ कि छोटी बहू को बाजार ले जाओ। वह खुद अपने पसंद की चीजें ले आएगी।

परेश : जी......।

दादा : (हुक्के का कश लगाकर) और मैं सोचता था कि अब बहू आ गई है तो इन्दु का दहेज तैयार करने में भी मदद देगी।

परेश : जी, मैं इसीलिए आया था........।

दादा : हाँ, हाँ कहो झिझकते क्यों हो।

परेश : जी, बात यह है कि इस घर में बेला का मन नहीं लगता।

दादा : इतनी जल्दी उसका मन कैसे लग सकता है बेटा! अभी कै दिन हुए हैं, उसे यहाँ आए और फिर बेटा, मन लगता नहीं, लगाया जाता है।

परेश : वह मन लगाती ही नहीं।

दादा : तो हमें उसका मन लगाना चाहिए। वह भी एक बड़े घर से आई है। अपने पिता की इकलौती लड़की है। कभी नाते–रिश्तेदारों में रही नहीं। इस भीड़–भाड़ से घबराती होगी। इतने शोर–शराबे से परेशान होती होगी। हम सब मिलकर इस घर में उसका मन लगायेंगे।

परेश : उसे कोई भी पसंद नहीं करता। सब उसकी निन्दा करते हैं। अभी मेरे पास माँ, बड़ी ताई, मँझली भाभी, बड़ी भाभी, इन्दु, रजवा–सब आयीं थीं, सब उसकी शिकायत करती थीं, ताने देती थीं कि तू उनके हाथ बिक गया है, तू उसे कुछ नहीं समझाता और इधर वह उन सबसे दुखी है, कहती है सब मेरा अपमान करती हैं, सब मेरी हँसी उड़ाती हैं, मेरा समय नष्ट करती हैं। मैं ऐसा महसूस करती हूँ जैसे मैं परायों में आ गई हूँ। अपनापन एक भी मुझे नहीं देता... .....आप मेरी मानें तो...........।

दादा : हाँ, हाँ, कहो.......।

परेश : बात यह है दादाजी कि वह आजादी चाहती है। दूसरों का हस्तक्षेप, दूसरों की आलोचना उसे पसंद नहीं...........।[दादा सिर्फ हुक्का गुड़गुड़ाते हैं।]

और वह अपनी अलग गृहस्थी बसाना चाहती है। जहाँ उसे कोई टोकने वाला न हो, जहाँ वह अपनी मर्जी से अपना जीवन बिता सके। वह चाहती है कि यदि बाग वाला मकान उसे मिल जाये तो वह सुख और शांति से रहे। मैं तो सदा यहाँ बना न रहूँगा, कुछ ही दिनों की बात है। मेरी तब्दीली हो जाएगी। उतने दिन में अगर बाग वाले मकान का प्रबंध कर दें। उसकी सारी बेचैनी, सारी तिलमिलाहट की तह में यही इच्छा काम करती है। अब मैं उसे कैसे समझाऊँ....।

दादा : (कुछ क्षण चुपचाप गुड़गुड़ाते है, फिर) हूँ। (खाँसते है) यों तो इस झंझट से छुटकारा पाने का यही सरल उपाय है कि तुम्हें बाग वाला मकान दे दिया जाय–वह पड़ा भी बेकार है और अभी मैं उससे किसी तरह का काम भी लेने का इरादा नहीं रखता, पर तुम जानते हो बेटा, मेरे जीते–जी यह संभव नहीं। (फिर हुक्का गुड़गुड़ाते हैं) मैं जब अपने परिवार की कल्पना करता हूँ, तो मेरे सामने बरगद का महान पेड़ घूम जाता है (खासकर) शाखाओं, पत्तों, फूलों से, फलों से, भरा हुआ! (हुक्के के एक दो कश लगाते हैं) और फिर मेरी आँखों के सामने उस महान पेड़ की डालियाँ टूटने लगती हैं और वह केवल एक ठूँठ रह जाता है (स्वर धीमा, जैसे अपने–आप से कह रहे हों) और मैं सिहर उठता हूँ। न बेटा मैं अपने जीते–जी यह सब न होने दूँगा। तुम चिंता न करो। मैं सबको समझा दूँगा–घर में किसी को तुम्हारी पत्नी का तिरस्कार करने का साहस न होगा। कोई उसका समय नष्ट न करेगा। ईश्वर की अपार कृपा से हमारे घर सुशिक्षित सुसंस्कृत बहू आई है तो क्या हम अपनी मूर्खता से उसे परेशान करेंगे ? तुम जाओ बेटा किसी तरह की चिंता को मन में जगह न दो। मैं कोई उपाय ढूँढ निकालूँगा। तुम विश्वास रखो, वह अपने आपको परायों से घिरी अनुभव न करेगी। उसे वही आदर–सत्कार मिलेगा, जो उसे अपने घर में हासिल था।

परेश : जैसा आप ठीक समझें।

दादा : और देखो, तुम खुद भी इस बात का ध्यान रखना, तुम्हारी किसी बात से उसका मन न दुखे। कोई भी ऐसी बात न करो, जिसे वह अपना अपमान समझें।(परेश चलने को होता है)

दादा : और तुम उसे साथ ले जाकर, शहर से सब चीजें खरीद लाओ बाकी किसी बात की चिंता तुम न करो, मैं कोई न कोई रास्ता जरूर निकाल लूँगा।

परेश : जैसी आपकी इच्छा।

: (चला जाता है। दादा फिर हुक्का गुड़गुड़ाने लगते हैं। हुक्के के कश लंबे हैं, जो इस बात के साक्षी हैं कि दादा हुक्का पीने के साथ–साथ सोच भी रहे हैं।)

दादा : (जैसे अचानक उन्हें कुछ सूझ गया हो) रजवा......रजवा.......(फिर हुक्का गुड़गुड़ाते हैं) रजवा नहीं आती फिर आवाज देते हैं रजवा.....रजवा।

रजवा : (दूर से) जी–आई।

(भागती हुई–सी प्रवेश करती है।)

दादा : छोटी बहू के अलावा सबको मेरे पास भेज दो। कहो कि सब काम छोड़कर यहाँ आएँ। (रजवा जाने लगती है) और सुनो कोई न रहे सबसे कहना, कुछ देर के लिए सभी यहाँ आ जाएँ।

रजवा : जी मैं अभी जाकर सबसे कहे देती हूँ। [चली जाती है। दादा फिर हुक्का गुड़गुड़ाने लगते हैं। नल से किसी के कपड़े धोने की आवाज आने लगती है। दादा और लंबे–लंबे कश लेते हैं। धीरे–धीरे परिवार के सभी लोग आने लगते हैं। बालक और युवक तख्त और चारपाइयों पर बैठते हैं और स्त्रियाँ बरामदे के फर्श पर। रजवा उनके बैठने के लिए मोढ़े और चटाइयाँ लाकर बिछा देती हैं।]

दादा : (हुक्का पीना छोड़कर) इन्दु कहाँ है, वह नहीं दिखती ? (फिर हुक्का गुड़गुड़ाने लगते हैं और एक नजर सबको देखते हैं। रजवा स्नान–गृह को जाने वाले दरवाजे में जाकर इन्दु को आवाज देती है। कपड़े धोने का स्वर जो इस बीच निरंतर आता रहा था, सहसा बंद हो जाता है।)

इन्दु : (बाहर से) जी आयी! (अन्दर आकर) मैं नल पर थी। कपड़े धोने में लगी थी।

दादा : (एक कश खींचकर) बैठो बेटा। (दो क्षण तक हुक्का गुड़गुड़ाते हैं) मैंने तुम सबको एक खास काम से बुलाया है। मुझे यह सुनकर बड़ा दुख हुआ कि छोटी बहू का मन यहाँ नहीं लगा।

इन्दु : दादा जी.........।

दादा : इन्दु बेटा, मुझे अपनी बात कह लेने दो। मुझे यह जानकर बड़ा दुख हुआ है कि छोटी बहू का मन यहाँ नहीं लगा। दोष उसका नहीं, दोष हमारा है। वह एक बड़े घर की बेटी है, बहुत पढ़ी–लिखी है। सबसे आदर पाती और राज करती आई है। यहाँ वह सिर्फ छोटी बहू है। यहाँ उसे हर एक का आदर करना पड़ता है। हर एक से दबना पड़ता है। हर एक का हुक्म मानना पड़ता है। यहाँ उसका व्यक्तित्व दबकर रह गया है। मुझे यह बात पसंद नहीं। (कुछ क्षण हुक्का गुड़गुड़ाते हैं।) बेटा, बड़ा असल में कोई उम्र से या दर्जे से नहीं होता। बड़ा तो बुद्धि से होता है, योग्यता से होता है। छोटी बहू उम्र में न सही, अक्ल में हम सबसे निश्चय ही बड़ी है। हमें चाहिए कि उसकी बुद्धि से उसकी काबिलियत का लाभ उठाएँ। मैं चाहता हूँ कि उसे यहाँ वही आदर सत्कार मिले, जो उसे अपने घर में हासिल था। सब उसका कहना मानें, उसे सलाह दें तब मैं खुश रहूँगा। अगर उसका काम भी तुम लोग आपस में बाँट लो और उसे पढ़ने–लिखने का ज्यादा मौका दो। उसे महसूस ही न हो कि वह किसी दूसरे घर में, किसी दूसरे वातावरण में आ गयी है। [फिर कुछ क्षण हुक्का गुड़गुड़ाते हैं।]

दादा : बेटा, यह परिवार एक महान् पेड़

है। हम सब इसकी डालियाँ हैं। डालियों से ही पेड़ हैं और डालियाँ छोटी हों चाहे बड़ी, सब उसकी छाया को बढ़ाती हैं। मैं नहीं चाहता, कोई डाली इससे टूटकर अलग हो जाये। तुम हमेशा मेरा कहना मानते रहे हो। बस यही बात मैं कहना चाहता हूँ......अगर मैंने सुन लिया–किसी ने छोटी बहू का निरादर किया है उसकी हँसी उड़ायी है या उसका समय नष्ट किया है, तो इस घर में मेरा नाता सदा के लिए टूट जायेगा। अब तुम सब जा सकते हो।[फिर हुक्का गुड़गुड़ाते हैं। सब धीरे–धीरे जाने लगते हैं।]

दादा : इन्दु बेटा और मँझली बहू, तुम जरा बैठो। [दोनों के अतिरिक्त बाकी सब चले जाते हैं।]

दादा : मँझली बहू तुम अपनी हँसी को उन लोगों तक ही सीमित रखो बेटा, जो उसे सहन कर सकते हैं। बाहर के लोगों पर घर में बैठ कर हँसा जा सकता है, लेकिन घर के लोगों को तब तक हँसी का निशाना बनाना ठीक नहीं, जब तक वो पूरी तरह घर का अंग न बन जाएँ और इन्दु बेटा, तेरी छोटी भाभी बड़ी बुद्धिमती, सुशिक्षित और सुसंस्कृत है, तुझे उसकी हँसी उड़ाने, उससे लड़ने–झगड़ने के बदले उसका आदर करना चाहिए, उससे कुछ सीखना चाहिए। तुम दोनों को इस मामले में खास तौर पर सावधान रहना चाहिए। (फिर हुक्का गुड़गुड़ाने लगते हैं, क्षण भर बाद।)

दादा : अब तुम जाओ और देखो फिर मुझे शिकायत का मौका न मिले। (गला भर आता है) यही मेरी इच्छा है कि सब डालियाँ साथ–साथ बढ़े, फलें, फूलें और जिंदगी की छुअन से झूमें और सरसायें। पेड़ से अलग होने वाली डाली की कल्पना ही मुझे सिहरा देती है।

इन्दु : माफ कर दीजिए दादाजी, हमारी तरफ से आपको कभी शिकायत का मौका न मिलेगा। [दोनों चली जाती हैं। दादा कुछ देर हुक्का गुड़गुड़ाते हैं, फिर बाहर खेलते हुए बच्चों को आवाज देते हैं।]

दादा : भाषी, मल्लू, जगदीश! आओ, आज तुम्हें एक कहानी सुनाऊँ बरगद के पेड़ और उसके बच्चों की।

भाषी : (दरवाजे से झाँककर) हम सुन चुके हैं। हम नहीं आते। हम नहीं आते। हर बार वही कहानी।

मल्लू : चाँद राजा, तारा राजा की सुनाओ तो आएँ। हर बार वही कहानी–(नकल उतार कर) एक था बरगद का पेड़।
[हँसते हुए भाग जाते हैं।]

दादा : (हँसते हैं) यही कहानी, यही कहानी तो परिवार का, समाज का, राष्ट्र का निर्माण करती है।

यही तो जिंदगी को सुदृढ़ विशाल और महान बनाती है।

[हुक्का गुड़गुड़ाने लगते हैं–पर्दा गिरता है।]

तीसरा दृश्य

(वही बरामदा–दोनों तख्त पूर्ववत खिड़कियों के बराबर रखे हुए हैं और दो चारपाइयाँ वैसे ही दीवार के साथ लगी खड़ी हैं। हाँ कुर्सी बीच में आ गई है लगता है कि इस पर छोटी बहू–बेला बैठी धूप ले रही थी। लेकिन पर्दा उठने पर वह आकुलता से बरामदे में घूमती हुई दिखाई देती है। एक हाथ में पुस्तक है। जैसे पढ़ते–पढ़ते ख्याल आ जाने से उठके घूमने लगती है।)

बेला : [अपने आपसे] मैं किन लोगों में आ गई हूँ। ये कैसे लोग हैं कुछ भी तो समझ नहीं सकी। आज कुछ हैं कल कुछ। पल में तोला पल में माशा। इनका कुछ भी तो पता नहीं चलता।

[फिर सोचती हुई धीरे–धीरे घूमती है।]

बेला : गर्म होते हैं तो आग बन जाते हैं, नर्म होते हैं तो मोम से भी कोमल दिखाई देते हैं।[जाकर फिर कुर्सी पर बैठ जाती है और पुस्तक खोल लेती है। अंदर गैलरी से उसकी सास, छोटी भाभी आती हैं।]

छोटी भाभी : तुम ठीक कहती थी बेटी–इस रद्दी सामान से बैठक, बैठक नहीं कबाड़ी का गोदाम दिखाई देता था। सोचती थी कि यह सामान इतने दिनों इस कमरे में पड़ा है, कुछ ऐसा बुरा भी नहीं आखिर इस पर इतने दिनों से सब बैठते आ रहे हैं, कहीं दादाजी बुरा न मानें पर अच्छा किया तुमने वह सब उठा दिया। मैंने परेश से कह दिया है, तुम उसके साथ जाकर अपनी पसंद का खरीद लाओ। यह सब मैं रजवा से कहकर सुरेश के कमरे में भिजवा देती हूँ। कई बार निगोड़ी इन्हीं कुर्सियों के लिये, वह मुझसे रूठ चुकी है।

बेला : आप बैठिए माँ जी।

छोटी भाभी : बस तुम बैठो बेटी! मैं तो यों ही इधर बैठे देखकर चली आयी। अनाज पड़ा है, उसे फटकना है मिर्चें पड़ी हैं, उन्हें कूटना है मक्खन कई दिनों का इकट्ठा हो गया है, उसका घी बनाना है। बीसों दूसरे काम हैं और दिन ढल रहा है। मैं सोचती थी, तुमने मेरी बात का बुरा न माना हो। असल में बेटी, रजवा मेरे पास आकर फूट–फूट कर रो दी। नौकरानी समझदार, भरोसे–वाली और आज्ञाकारी है, लेकिन जो काम उसने कभी किया ही न हो, वह उससे किस तरह हो सकता है।

बेला : (उठती हुई) आप बैठिए तो........।

छोटी भाभी : (उसके कंधों पर हाथ रखकर

उसे बैठाते हुए) बैठो–बैठो कष्ट न करो। मैं तुम्हारा ज्यादा समय नष्ट न करूँगी। मैं तो सिर्फ तुमसे उसकी सिफारिश करने आई थी। पुरानी औरत है, जल्दी ही बात का बुरा मान जाती है। तुम यों करना कि ज्यों ही नया फर्नीचर आ जाए, अपने सामने लगवाकर रजवा को एक बार झाड़ना बुहारना सिखा देना। फिर वह गलती नहीं करेगी। न हो तो कभी बता देना मैं उसे समझा दूँगी।

बेला : नहीं, नहीं आप........।

छोटी भाभी : तुम पढ़ी–लिखी समझदार हो बेटी, इसलिए तुमसे इतना कह दिया है। यों तुम चाहो तो कोई दूसरा प्रबंध हो जायेगा। तुम इस बात की जरा भी चिंता न करो। चलने को उद्यत होती है।

बेला : आप दो पल बैठिए तो सही......।

छोटी भाभी : नहीं–नहीं तुम अपना पढ़ो। मैं बेकार तुम्हारा वक्त खराब न करूँगी। [चली जाती है।]

बेला : (पुस्तक बंद कर लंबी साँस लेती हुई जैसे अपने–आप) इन लोगों के कुछ भी तो समझ नहीं आती। ये माँ जी एकदम।

बड़ी बहू : बैठिए–बैठिए मँझली भाभी, आप भाभी, आप भी बैठिए।

बेला : मैं चलती हूँ.........।

[रूलाई को रोककर आँखों पर रूमाल रखे, जल्दी–जल्दी चली जाती है।]

म. भाभी : (जैसे अपने आपसे) परायों का सा...........।

[बाहर से मँझली बहू के ठहाके की आवाज आती है–दूसरे क्षण वह इन्दु और पारो के कंधे पर झूलती हुई बाहर के दरवाजे से आती है।]

इन्दु : सच........।

म. बहू : (हँसी रोककर) और क्या मैं झूठ कह रही हूँ। मैंने अपनी इन दो आँखों से देखा है! (हँसती है) मलावी ने सारी–की सारी छत फावड़े से खोद डाली और बंशीलाल महाशय मुँह देखते रह गए।

[सब ठहाका मार हँस पड़ती हैं।]

बड़ी बहू : भई मुझे भी बताना–क्या किया मलावी ने.......सच।

[मँझली बहू चारपाई बिछाकर उसमें धँस जाती है। उसकी एक ओर इन्दु और दूसरी ओर पारो बैठ जाती है। मँझली भाभी कुर्सी पर बैठती है और बड़ी बहू खड़ी रहती है।]

म.भाभी : (कुर्सी को जरा खिसका कर समीप होते हुए) बंशीलाल के सामने उखाड़–कर फेंक दी छत मलावी ने ?

म. बहू : मैं कहती हूँ मुँह देखते रह गए बंशीलाल महाशय, ताका किए मुटुर–मुटुर........।

[सब ठहाका लगाते हैं।]

बड़ी बहू : अरे कौन–सी छत खोद डाली,

यह तो बताओ।

म. बहू : रसोई की और कौन–सी। अभी दो घंटे हुए राज मजदूर छत डालकर गये थे और बंशीलाल कारीगरों और मजदूरों से निबटकर अभी दुकान को गया था कि आ गई उधर से मलावी मारामार करती। जाने किसने उसे जाकर बताया तुम्हारे देवर ने अपने रसोई पर छत डाल ली है। लेके फावड़ा बस सारी की सारी छत उसने खोद डाली। बंशीलाल तब पहुँचे जब आखिरी कड़ी भी उखड़ चुकी थी, तब क्या करते बस ताका किए मुटुर–मुटुर ....।

[मझली भाभी को छोड़कर सब हँसती हैं] । अभी परसों मुझे इसी रजवा के लिये डाँट रही थी। इनका कुछ भी पता नहीं चलता।

[फिर पढ़ने लगती है बड़ी बहू और मँझली भाभी बाहर के दरवाजे से प्रवेश करती हैं।]

म. भाभी : क्यों बेटी अब रजवा कुछ काम सीख गई या नहीं ? (जरा हँसती है) बुढ़िया है तो सियानी. ....।

बड़ी बहू : आपने इन्दु से ठीक ही कहा था। हमें असल में काम की परख नहीं, पर अब।

बेला : आइए, इधर बैठिए चारपाई सरका लीजिए।

म. भाभी : (वैसे ही खड़े–खड़े) मैंने एक दूसरी नौकरानी खोज लाने के लिए कह दिया है, जो नये फैशन के बड़े घरों में काम कर चुकी हो। असल में बहू दादा जी पुराने नौकरों के हक में हैं– ईमानदार होते हैं और भरोसे वाले। हमारे पास पीढ़ी दर पीढ़ी काम करते आ रहे हैं। इस रजवा की सास भी यहीं काम करती थीं अब रजवा की बहू भी यहीं काम करती है..........।

बड़ी बहू : मैं कहती हूँ बहनजी आप रजवा की बहू को ही अपने पास क्यों नहीं रख लेतीं, उसकी उम्र भी कम है और काम भी वह जल्दी सीख जाएगी।

बेला : (अन्यमनस्क सी) नहीं, नए नौकर की जरूरत नहीं। रजवा काम सीख जाएगी। (कुछ चिढ़कर) पर आप खड़ी क्यों हैं?

म. भाभी : हम तुम्हारा हर्ज न करेंगी......।

बेला : (और भी चिढ़कर) मेरा कुछ हर्ज नहीं होता।

बड़ी बहू : हम आपसे छोटी हैं, दर्जे में भी और समझ में भी।

बेला : (रूआँसी आवाज में) आप मुझे क्यों काँटों में घसीटती हैं, आप मेरे साथ क्यों परायों का सा व्यवहार करती हैं........।

[उठ खड़ी होती है।]

म. भाभी : बंशीलाल का लड़का.............।

म. बहू : गली के सिरे पर खड़ा ताल ठोंक रहा है।

[जाँघ पर हाथ मारकर बताती है कि कैसे ताल ठोंक रहा है।]

इन्दु : ताल ठोंक रहा है।

म. बहू : (ठहाका लगाती है) सच, ताल ठोंक रहा है और हवा ही में ललकार रहा है कि मैं ड्योढ़ी की छत खोद डालूँगा मैं मकान को खंडहर बना दूँगा। मैं ये करूँगा, मैं वो करूँगा और इधर मलावी कमर कसे खड़ी है कि आए जो माई का लाल है रक्खे पाँव घर के भी........।

[सब हँसती हैं।]

इन्दु : (उँगली होठों पर रखकर) शशं–श–श, भाभी आ रही हैं।

[हँसी एकदम बंद हो जाती है, सन्नाटा छा जाता है–बेला एक हाथ में बंद किताब थामे धीरे–धीरे सीढ़ियाँ उतरती हैं।]

बेला : क्यों जीजी, आप चुप हो गईं। (जरा हँसकर) किस बात पर ठहाके लगाए जा रहे हैं ?

म. भाभी : (कुर्सी से उठकर) यों ही हँस रही थी। आओ इधर कुर्सी पर बैठो।

बेला : नहीं–नहीं आप बैठिए। मैं इधर तख्त पर बैठ जाती हूँ।

म. बहू : (जल्दी से उठकर) आइए–आइए, आप इधर बैठिए।

इन्दु और पारो : (दोनों चारपाई से उठ जाती हैं) आइए–आइए, आप इधर बैठिए। [फिर खामोशी छा जाती है, जिसमें एक तरह की घुटन है। बेला बाहर की ओर चल पड़ती है।]

इन्दु : बैठिए भाभीजी, आप चलीं क्यों ?

बेला : (मुड़कर थके भारी स्वर में) मैं तो उधर ही जा रही थी। यों ही जाते–जाते खड़ी हो गई। मैं आपकी हँसी में बाधा नहीं डालना चाहती। (खिन्न हँसी के साथ) आप हँसिए, ठहाके लगाइए।

[चुपचाप अहाते के दरवाजे से निकल जाती है।]

म. बहू : मैं कहती थी न कि इस ओर न आओ। मेरी मुई आदत हुई हँसने की।

इन्दु : अब एक यही जगह थी बैठने की..........।

म. बहू : हम हँसती हैं, हँसती हैं दिल से और छोटी बहू की पढ़ाई में बाधा पड़ती है। मैं कहती हूँ दादा जी को अगर पता चल गया कि हमारे यहाँ बैठने से छोटी बहू के पढ़ने में खलल आता है, तो।

इन्दु : लेकिन यही एक जगह थी पर्देवाली...........।

म. बहू : तुम भूल गई हमें तो दादा जी ने खास तौर पर खबरदार किया था। (ठहाका लगाकर हँस पड़ती हैं।) मैं कहती हूँ चलो मेरे कमरे में....।

इन्दु : मुझे तो दादाजी के कपड़े धोने हैं, मैं चली।

[जल्दी–जल्दी बाहर की ओर

चली जाती है।]

म. बहू : ठीक है! तुम लोग अब यहाँ इतना न बैठा करो। (बड़ी बहू से) हम तो बहू गोदाम में जा रही थीं, चलो गेहूँ छँटवा लें। छोटी बहन तो कब की गई है। फिर तो ढल जाएगा दिन और महरियाँ चली जायेंगी।

बड़ी बहू : मैं तो फँस गई मँझली की बातों में.........चलो.........चलो।

[दोनों चली जाती हैं।]

म. बहू : मैं कहती हूँ, पारो, चल मेरे कमरे में। वहाँ चल कर बैठें।

पारो : मुझे तो जाना है भाभी। लल्ला आ गया होगा। न मिली तो चिल्लाएगा।

म. बहू : (अपने आप से) यह छोटी बहू तो बाज–सी आकर सबको डरा गई। [हँसती है। बाहर से बड़ी भाभी आती हुई दिखाई देती है, भागकर उसके पास जाती है।]

म. बहू : बड़ी भाभी सुनी तुमने मलावी की बात ? खोद डाली उसने सारी की सारी छत। (ठहाका लगाती है।)

बड़ी भाभी : मलावी ने छत खोद डाली.......।

म. बहू : (उसे अपने साथ लेकर कमरे की ओर जाती हुई) हाँ, हाँ, अभी राज–मजदूर छत बनाकर गए थे कि आ गई मलावी मारामार करती.......।

बड़ी भाभी : लेकिन........।

म. बहू : चलो मेरे कमरे में। वहाँ चलकर सब बताती हूँ। यहाँ तो छोटी बहू की पढ़ाई में खलल पड़ता है। [उसे साथ ले अपने कमरे की ओर जाती है। बाहर से परेश और बेला बातें करते प्रवेश करते हैं।]

बेला : (आर्द्र कण्ठ से) आप मुझे मेरे मायके भेज दीजिए। मुझे लगता है, जैसे मैं परायों में आ गई हूँ, कोई मुझे नहीं समझता, किसी को मैं नहीं समझती।

परेश : आखिर बात क्या है ? कुछ कहो भी।

बेला : मैं जाती हूँ तो सब खड़ी हो जाती हैं। बड़ी भाभी, मँझली भाभी और माँ जी तक। मेरे सामने कोई हँसता नहीं। कोई मुझसे ज्यादा देर बात नहीं करना चाहता। सब मुझसे ऐसे डरती हैं, जैसे मुर्गी के बच्चे चील से। अभी–अभी सब हँस रही थीं, ठहाके–पर–ठहाके मार रही थीं, मैं आयी तो सब ऐसे सन्न रह गईं, जैसे भरी सभा में किसी ने चुप की सीटी बजा दी हो।

परेश : पर इसमें........।

बेला : और कोई मुझे किसी काम को हाथ नहीं लगाने देता। जरा सा भी काम करने लगूँ तो सब भागी आती हैं। सब मेरा इस तरह आदर करती हैं, जैसे मैं ही इस घर में सबसे बड़ी हूँ।

परेश : मैं नहीं समझता तुम क्या चाहती हो। तुम्हें शिकायत थी, कोई तुम्हारा आदर नहीं करता, अब

सब तुम्हारा आदर करते हैं। तुम्हें शिकायत थी तुम्हें सबसे दबना पड़ता है। अब सब तुमसे दबते हैं। तुम्हें शिकायत थी, तुम सबका काम करती हो, सब तुम्हारा काम करते हैं। आदर–सत्कार, आराम न जाने तुम और क्या चाहती हो? [तेजी से सीढ़ियाँ चढ़ जाता है।]

बेला : (निढाल होकर कुर्सी में धँस जाती है) न जाने मैं क्या चाहती (सिसकने लगती है) हूँ? न जाने मैं क्या चाहती हूँ, पर मैं इतना जानती हूँ कि मैं यह सब आदर–सत्कार, सुख–आराम नहीं चाहती हूँ । [बाहों में मुँह छिपाकर सिसकती है। इन्दु हाथ में कुछ मैले कपड़े लिये बाहर के दरवाजे से प्रवेश करती है।]

इन्दु : (बेला के कंधे को हिलाकर) भाभी जी..........भाभी जी।

[बेला मुँह ऊपर उठाती है।]

–हैं, भाभी जी, आप तो रो रही हैं।

बेला : (आँखे पोंछकर) नहीं, मैं रो नहीं रही, पर इन्दु, भगवान के लिए मुझे 'जी' करके न बुलाया करो।

इन्दु : लो भला यह कैसे हो सकता है? आप मुझसे बड़ी हैं और फिर आप मुझसे कहीं ज्यादा पढ़ी–लिखी हैं।

बेला : पहले तो तू मुझे यों ही 'जी' करके न बुलाती थी।

इन्दु : मैं तो मूर्ख ठहरी भाभी जी। दादा जी ने कहा था.........।

बेला : (सहसा चौंककर) दादा जी ने क्या कहा था ?

इन्दु : उन्होंने सबको समझाया था कि घर में सबको आपका आदर करना चाहिए।

बेला : लेकिन यह सब क्यों कहा ? मैंने तो कभी उनसे इस बात की शिकायत नहीं की ?

इन्दु : शायद छोटे भैया ने उनसे यह कहा था कि आपका जी यहाँ नहीं लगता, आप बाग वाले.......।

बेला : ओह! यह बात है।

इन्दु : दादाजी और सब कुछ सह सकते हैं–किसी का अलग होना नहीं सह सकते–'हम सब एक महान पेड़ की डालियाँ हैं' वे कहा करते हैं और इससे पहले कि कोई डाली टूटकर अलग हो, मैं ही इस घर से अलग हो, जाऊँगा।' और उन्होंने हम सबको समझाया कि हम आपका आदर करें, काम करें और आपको पढ़ने–पढ़ाने का समय दें।

बेला : पर मैं तो आदर नहीं चाहती और मैं तो तुम सबके साथ मिलकर काम करना चाहती हूँ।

इन्दु : यह कैसे हो सकता है भाभी जी.........।

बेला : (लंबी साँस छोड़ती हैं) आप लोगों ने मुझे कितना गलत समझा और मैंने आप लोगों को कितना.........

इन्दु : आप कैसी बातें करती हैं। लाइए, कपड़े लाइए। मैं दादा जी के

कपड़े धोने जा रही हूँ, साथ ही आपके भी फटक लाऊँ।

बेला : (चुप सोचती है)

इन्दु : भाभी जी........।

बेला : (जैसे मन–ही मन उसने किसी बात का निश्चय कर लिया हो) मैं भी तुम्हारे साथ जाऊँगी, मैं भी तुम्हारे साथ कपड़े धोऊँगी।

इन्दु : दादा जी नाराज न होंगे.......।

बेला : मैं दादा जी से कह दूँगी।

बेला : मुझे केवल भाभी कहा कर, मेरी प्यारी इन्दु!

इन्दु : (प्यार से, भरे हुए गले के साथ) भाभी..........।

बेला : चल कपड़े धोएँ। धूप निकली जा रही है।

इन्दु : पर कपड़े........।

बेला : मेरे कपड़े आज रजवा ने धो दिये थे, सलवार–कमीज ही तो थी। चल मैं तेरा हाथ बटाऊँगी।

: (दोनों चली जाती हैं, कुछ क्षण बाद बरामदे में कपड़े धोने की आवाज आने लगती है। दादा गैलरी की ओर हुक्का गुड़गुड़ाते–गुड़गुड़ाते, मल्लू की उँगली थामे प्रवेश करते हैं।)

दादा : हाँ, बेटा तुझे मेले में ले चलेंगे। जो तू कहेगा, वही खिलौना ले देंगे।

मल्लू : मैं तो उड़न–खटोला लूँगा।

(सहसा बाहर के दरवाजे के पास जाकर ठिठक जाते हैं।)

दादा : (आश्चर्य से) हैं! छोटी बहू.......।

इन्दु : (बाहर से) मैंने तो बहुतेरा कहा, पर भाभी मानी नहीं।

दादा : छोटी बहू, इधर आ बेटी.......।

[शरमाई हुई बेला दरवाजे के पास आ खड़ी होती है।]

इन्दु : (जो अपनी भाभी के साथ ही आ खड़ी हुई) मैंने बहुतेरा कहा, पर भाभी मानी नहीं।

दादा : (जिन्हें इन्दु के स्वर का अनादर अच्छा नहीं लगता) इन्दु तुझे कतनी बार कहा आदर से........।

बेला : (भावावेश के कारण रूँधे हुए कण्ठ से) दादाजी, आप पेड़ से किसी डाली का टूटकर अलग होना पसंद नहीं करते, पर क्या आप यह चाहेंगे कि पेड़ से लगी–लगी वह डाल सूखकर मुरझा जाए... ।(सिसक उठती है। हुक्के की गुड़गुड़ाहट एकदम बंद हो जाती है) (परदा सहसा गिर पड़ता है।)

अभ्यास के प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) 'सूखी डाली' एकांकी में दादा जी का नाम क्या है ?

(2) ''जी बात यह है कि इस घर में बेला का मन नहीं लगता'' किसने किससे कहा ?

(3) इस एकांकी में 'सूखी डाली'' का आशय क्या है ?

(4) ''यही कहानी तो परिवार का, समाज का, राष्ट्र का निर्माण करती है''। दादाजी का यह कथन किस बात की ओर संकेत करता है ?

(5) बचपन में आपने अपने दादा–दादी से कौन–सी कहानियाँ सुनीं?उनमें से कुछ कहानियों के नाम लिखिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) सूखी डाली एकांकी के अनुसार 'बेला' दुःखी क्यों हैं ? लिखिए।

(2) 'बेला यह समझती है कि कोई उसे अपना नहीं समझता, क्या आप का भी यही मत है ?

(3) ''दादाजी की सहायता से परिवार टूटने से बचा'', इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं ?

(4) ''संयुक्त परिवार का सुख'', इस पर अपने विचार लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) ''प्रस्तुत एकांकी पुरातन एवं आधुनिक जीवन शैलियों के टकराव एवं सामंजस्य को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करती है।'' अपने विचार लिखें।

(2) दादा मूलराज और बेला का चरित्र–चित्रण कीजिए।

(3) एकांकी के तत्वों के आधार पर सूखी डाली की समीक्षा कीजिए।

योग्यता विस्तार–

''मैंने एक परिवार को टूटने से बचाया'' अपनी कल्पना के आधार पर दस वाक्य लिखिए।

शब्दार्थ

स्तम्भित = चकित।
सलीका = ढंग।
बिफरी = नाराज।
गजभर = लम्बी।
अबरे = खोल।
मुलजिमों = अपराधियों।
उद्यत = तैयार।
मुटुर–मुटुर = टुकुर–टुकुर।
महरियाँ = नौकरानियाँ।
आर्द्र = गीले।
ठिठक = रुककर।
सिर फिरना = पागल होना।
मिश्रानी = रसोई बनाने वाली

मुहावरे व लोकोक्तियाँ

ऐसा वाक्यांश जो सामान्य अर्थ का बोध न कराकर, किसी विलक्षण अर्थ की प्रतीति कराए, 'मुहावरा' कहलाता है। मुहावरा वाक्यांश होता है और कहावत पूरा वाक्य। मुहावरे के अन्त में कोई न कोई धातु अपने मूल रूप में अवश्य होती है। जैसेः–आँख चुराना। कहावत को लोकोक्ति भी कहते हैं। लोकोक्ति अर्थात् लोक की उक्ति।

मुहावरों का प्रयोग

(1) **अंधे की लाठी** = (एकमात्र आश्रय) श्रवण कुमार अपने बूढ़े माँ–बाप की **अंधे की लाठी** था।

(2) **आँखों का तारा** = (अत्यन्त प्रिय होना) कृष्ण अपनी माँ यशोदा की **आँखों का तारा** था।

(3) **उड़ती चिड़िया पहचानना** =(मन की बात जानना) शास्त्री जी के पास जाओ तो भैय्या वे **उड़ती चिड़िया पहचान** लेते हैं।

(4) **हाथों के तोते उड़ना** = (होश उड़ना) विष्णु घर से क्या गया, राम के **हाथों के तोते उड़** गए।

(5) **ईद का चाँद होना** = (बहुत दिनों में दिखना) अपने मित्र को बहुत दिनों बाद देखकर मोहन बोला–अरे यार। तुम तो **ईद के चाँद हो** गए।

(6) **गुदड़ी का लाल** = (गरीब के घर गुण वान पैदा होना) लाल बहादुर शास्त्री **गुदड़ी के लाल** थे।

(7) **देवी–देवता मनाना** = (ईश्वर से प्रार्थना करना) परीक्षा में सफल होने के लिए विद्यार्थी **देवी–देवता मनाते** हैं।

(8) **कलम तोड़ना** = (अच्छी रचना करना) प्रेमा जब कविता लिखती है; बस **कलम तोड़** देती है।

लोकोक्तियों का अर्थ

(1) **एक अनार सौ बीमार** = (कम चीज और चाहने वाले अधिक)

(2) **अपना हाथ जगन्नाथ** = अपने हाथ से काम करने में ईश्वरीय शक्ति है।

(3) **अधजल गगरी छलकत जाय** = थोड़ी योग्यता में अधिक प्रदर्शन ।

(4) **उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे** = अनुचित काम करके भी न दबना।

(5) **उँची दुकान फीका पकवान** = प्रसिद्धि तो बहुत पर माल कुछ नहीं।

(6) **एक हाथ से ताली नहीं बजती** = लड़ाई या मित्रता अकेले संभव नही।

(7) **काला अक्षर भैंस बराबर** = निरक्षर व्यक्ति।

(8) **मुँह में राम बगल में छूरी** = ऊपर से कुछ और अन्दर से कुछ।

वाक्य में प्रयोग

1. **एक पंथ दो काज** = (एक साथ दो फायदे) मैं बारात में प्रयाग गया था, तो ब्याह में शामिल भी हुआ और गंगा स्नान भी कर आया। इसे ही कहते हैं **एक पंथ दो काज** ।

2. **एक अनार सौ बीमार** = (कम चीज और चाहने वाले अधिक) माँ ने थोड़ी सी मिठाई बनाई थी और मिठाई खाते समय मेहमान भी आ गए। खाते समय वही स्थिति बन गई जैसे **एक अनार सौ बीमार** वाली।

इकाई – 3

पाठ –7
विश्व मंदिर
वियोगी छरि

1. जीवन परिचयः–

वियोगी हरि का जन्म छतरपुर (म. प्र.) में हुआ था। उनका मूल नाम हरी प्रसाद द्विवेदी था। उनकी हिन्दी और संस्कृत की प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। सन् 1915 में छतरपुर के हाई स्कूल से उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की।

2. रचनाएँः–

प्रेम शतक, प्रेमांजलि, प्रेम पथिक, मेवाड़ केसरी, वीर–सतसई, तरंगी, अंतर्नाद, प्रार्थना, श्रद्धाकण, पगली, बीर हरदौल, छद्मयोगिनी (नाटक) मेरा जीवन प्रवाह (आत्मकथा) आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

3. साहित्यिक विशेषताएँः–

1. वियोगी जी गाँधीवादी विचार धारा के समर्थक माने जाते हैं।
2. मानवीय भावनाओं को अपने निबंधों के माध्यम से व्यक्त कर समाज में सम–भाव का रूप लाना चाहते थे।
3. साम्प्रदायिकतावाद से वियोगी जी पृथक रहते थे।
4. सामाजिक छुआ–छूत एवं ऊँच–नीच की भावना को समाप्त कर, वे समाज में नवीनता लाने का प्रयास करते थे।
5. दलित वर्ग के उद्धार एवं कल्याण से संबंधित कार्य को अपने जीवन का संकल्प इन्होंने बनाया।

4. भाषा शैलीः– वियोगी जी की भाषा शुद्ध एवं परिष्कृत है, इनके निबंधों में हिन्दी भाषा के साथ–साथ अंग्रेजी एवं संस्कृत भाषा का समावेश है। वैचारिक मनोभावों को भाषा के माध्यम से कहने में वियोगी जी ? हैं। इनकी भाषा में मुहावरों तथा लोकोक्तियों का भी सुन्दर प्रयोग हुआ है। छोटे–छोटे वाक्यों के द्वारा भावों को व्यक्त करने में ये निपुण थे।

वियोगी जी के निबंधों में प्रमुखतः विवेचनात्मक एवं व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग हुआ है। इसके अतिरिक्त ये उद्धरण शैली का भी प्रयोग अपने निबंधों में करते हैं। वियोगी जी ने ब्रजभाषा एवं खड़ी बोली दोनों में ही साहित्य–रचना की है।

5. साहित्य में स्थानः– वियोगी हरि जी आधुनिक काल के निबंधकार हैं। दलित एवं शोषित वर्ग के उद्धार हेतु किए गये प्रयास के कारण साहित्य में इनका स्थान सर्वोपरि है।

केन्द्रीय भाव –(इस निबन्ध के लेखक ने विश्व बन्धुत्व की धारणा पुष्ट की है। उनकी कल्पना के अनुसार सारा विश्व एक मन्दिर की तरह ही पावन और पवित्र है। यहाँ समरसता और सर्व–धर्म समभाव की भावना मूर्त होगी।)

विश्व–मंदिर

वियोगी हरि

परमेश्वर का यह समस्त विश्व ही महामंदिर है। इतना सारा यह पसारा उसी घट घट–व्यापी प्रभु का घर है, उसी लामकाँ का मकान है। पहले उस मनमोहन को अपने अंदर के मंदिर में दिलभर देख लो, फिर दुनिया के एक–एक जर्रे में उस प्यारे को खोजते चलो। सर्वत्र उसी प्रभु का सुंदर मंदिर मिलेगा, जहाँ–तहाँ उसी का सलोना घर दिखेगा। तब अविद्या की अँधेरी रात बीत गई होगी। प्रेम के आलोक में तब हर कहीं भगवान के मंदिर–ही–मंदिर दिखाई देंगे। यह बहस ही न रहेगी कि उस राम का वास इस घर में है या उसमें। हमारी आँखों में लगन की सच्ची पीर होगी, तो उसका नूर हर सूरत में नजर आएगा, कोने–कोने से साँवले गोपाल की मोहिनी बाँसुरी सुनाई देगीं। हाँ, ऐसा ही होगा, बस आँखों पर से मजहबी तबस्सुम का चश्मा उतारने भर की देर है।

यों तो ऐसा सुंदर मंदिर कोई भी भावुक भक्त एक आनंदमयी प्रेमकल्पना के सहारे अपने हृदय–स्थल पर खड़ा कर सकता है या अपने प्रेमपूर्ण हृदय को ही विश्व–मंदिर का रूप दे सकता है पर क्या यही अच्छा हैं यदि सर्वसाधारण के हितार्थ सचमुच ही एक ऐसा विशाल विश्व–मंदिर खड़ा किया जाए। क्यों न कुछ सनकी सत्यप्रेमी नौजवान इस निर्माण कार्य में जुट जाएँ। इससे निस्संदेह संशय, अविश्वास और अनीश्वरता का दूषित वायुमंडल हट जाएगा और सूखे दिलों से भी फिर एक बार प्रेम–रस का स्रोत फूट पड़ेगा।

यह विश्व–मंदिर होगा कैसा? एक अजीब–सा मकान होगा। वह देखते ही हर दर्शक की तबियत हरी हो जाएगी। रुचि वैचित्र्य का पूरा ख्याल रखा जाएगा। भिन्नताओं में अभिन्नता दिखाने की चेष्टा की जाएगी। नक्शा कुछ ऐसा रहेगा, जो हर एक की आँखों में बस जाए। किसी एक खास धर्म–संप्रदाय का न होकर वह मंदिर सर्व धर्म संप्रदायों का समन्वय–मंदिर होगा। वह सबके लिए होगा, सबका होगा। वहाँ बैठकर सभी सबके मनोभावों की रक्षा कर सकेंगे, तभी–सबको सत्य, प्रेम और करूणा का भाग दे सकेंगे।

चित्र उस मंदिर में ऐसे–ऐसे भावपूर्ण अंकित किए जाएँगे कि पाषाण–हृदय दर्शक को भी उनसे सत्य और प्रेम का कुछ न कुछ संदेश मिला करेगा। किसी चित्र में राज–राजेश्वर राम गरीब गुह को गले लगाए हुए दिखाई देंगे, तो कहीं वे भीलनी के हाथ से उसके जूठे बेर चखते मिलेंगे। कहीं सत्यवीर हरिश्चंद्र, रानी शैव्या से वत्स रोहिताश्व का आधा कफन दृढ़ता से माँगता होगा। कहीं त्रिलोकेश्वर कृष्ण एक दीन दरिद्र अतिथि के धूल–भरे पैरों को अपने प्रेम अश्रुओं से पखारते मिलेंगे और कहीं वही योगेश्वर वासुदेव घबराए हुए पार्थ को अनासक्तियोग का संदेश दे रहे होंगे और भी वहाँ ऐसे ही अनेक चित्र देखने को मिलेंगे। भगवान बुद्ध एक वेश्या के हाथ से भिक्षा ग्रहण कर रहे होंगे। कहीं घिनौने कोढ़ियों के घाव धोते हुए दयालु ईसा का सुंदर चित्र देखने को मिलेगा और किसी चित्र में वही महात्मा संसार के पापों को अपने रक्त से धोने के लिये सूली पर चढ़ता हुआ दिखाई देगा। प्रियतमा सूली

को चूमने वाला मस्त मंसूर भी वहीं मुसकुराता हुआ नजर आएगा। कहीं दर्द दीवानी मीरा अपने प्यारे सजन का चरणोदक समझ कर जहर का प्याला प्रेम से पी रही होगी और किसी चित्र में निर्बल सूर की बाँह झटक कर वह नटखट नंदनंदन वहीं कहीं लुका–छिपा खड़ा होगा।

एक और चित्र वहाँ आप देखेंगे, खादी की लंगोटी धारण किए गाँधी एक तरफ चर्खा चला रहे होंगे। उसकी गोद में अछूतों के नंग धड़ंग बच्चे खेलते होंगे और वह अपने मोहन–मंत्र से विपक्षियों के भी हृदय में प्रेम और सत्य को जागृत कर रहा होगा और भी कितने ही सजीव चित्र उस मंदिर में खिंचे होंगे। हिमालय, गंगा, काशी, अयोध्या के दृश्य आप देखेंगे। वहीं बौद्धों के स्तूप और विहार भी दिखाई देंगे। काबा और येरूसलम के तीर्थ भी वहाँ अंकित होंगे। बड़े–बड़े ऋषियों के मस्त औलियों के और प्रेम–पीर का मर्म बतलाने वाले संतों और सूफियों के आकर्षक चित्र देखकर आप आनंद के आकाश में उड़ने लगेंगे।

वहाँ अनेक धर्म–ग्रंथों के समन्वयसूचक महावाक्य भी दीवारों पर खुदे होंगे। वेद के मंत्र, कुरान की आयतें, अवेस्ता की गाथाएँ, बौद्धों के सुत्त, इंजील के सरमन, कन्फ्यूशियस के सुवचन, कबीर के सबद और सूर के भजन आप उस मंदिर की पवित्र दीवारों पर पढ़ेंगे। किसी भी धर्मवाक्य में भेद न दिखाई देगा। सबका एक ही लक्ष्य, एक ही मतलब होगा। सब एक ही प्यारे प्रभु की तरफ इशारा कर रहे होंगे। उस विश्व–मंदिर की दीवारों पर खुदे हुए वे प्रेम मंत्र संशय और भ्रम का काला पर्दा उठा देंगे, अनेकता में एकता की झलक दिखा देंगे।

वहाँ की उपासना में पूर्व–पश्चिम का झगड़ा न रहेगा। सिरजनहार किस तरफ नहीं है ? यह सारी दिशाएँ उसी की तो हैं। सारी भूमि गोपाल की तो है। वहाँ के एक–एक पत्थर में और एक–एक ईंट में प्यार ही प्यार भरा होगा। उन पत्थरों को चूमने में बेहद मजा आएगा और उन्हें दंडवत् प्रणाम करने में भी अपार आनंद मिलेगा। वहाँ एक साथ प्रेम का प्रसाद बाँटा जाएगा और वहीं खुदी की कुर्बानी भी की जाएगी।

सभी बेरोक–टोक उस विश्व–मंदिर के अंदर जा सकेंगे। वहाँ प्रवेश निषेध की तख्ती न होगी। विद्वान भी वहाँ जाएँगे और मूर्ख भी जाएँगे, पुण्यात्मा जिस द्वार से जाएँगे, उसी द्वार से पापात्मा भी जाकर प्रार्थना में शामिल होंगे। पतित से पतित मानव को भी वहाँ प्यार की पाक जगह मिलेगी। दलित और दंडित, दीन और दुखी, पतित और पापी सभी वहीं परमपिता का दर्शन ले सकेंगे, सभी गोविंद का गुणगान कर सकेंगे। पश्चाताप के आँसुओं से सुबह–शाम मंदिर का आँगन पखारा जाएगा और प्रायश्चित की धूप से उसका कोना–कोना सुवासित किया जायेगा।

उस महान समन्वय मंदिर में ही साधकजन लोक–सेवा और विश्व–प्रेम का आदेश प्राप्त कर सकेंगे। धार्मिक झगड़ों से ऊबे हुए और मजहबी खूँरेजों से घबराये हुए शांति प्रिय साधक वहाँ जाकर बैठ कर दिव्य प्रेम की साधना किया करेंगे। अपनी–अपनी दिली राह से हर कोई वहाँ अपने राम को रिझाएगा। उस मंदिर में मैं–तू न होगा। वही वही होगा।

क्या ऐसा सुंदर विश्व–मंदिर किसी दिन खड़ा किया जा सकेगा ? क्यों नहीं ? पागल क्या नहीं कर सकते ? उनके दिल में बात उतर भर जाए, फिर ऐसा कौन–सा काम है जिसे वे पूरा न कर सकें ? वह शुभ दिन जल्द आ जाए, जब इस कल्पना का विश्व–मंदिर हमारे वृद्ध भारत की तपोभूमि पर निर्मित हो जाए और उस पर किसी धर्म–मजहब का नहीं बल्कि सत्य और ईमान का ऊँचा सफेद झंडा लहरा उठे।

–वियोगी हरि

अभ्यास के प्रश्न

1. अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. श्रद्धालु मंदिर क्यों जाते हैं ?
2. लेखक ने मंदिर की क्या उपयोगिता बताई है ?
3. मंदिर परिसर को स्वच्छ क्यों रखना चाहिए?
4. मंदिर में बैठकर साधक शाँति का अनुभव क्यों करता है ?
5. लेखक विश्व–मंदिर निर्माण की कल्पना क्यों करते हैं ?

2. लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. लेखक सर्वहारा के लिए एक विश्व–मंदिर बनाये जाने की अभिलाषा क्यों करते हैं ?
2. विश्व–मंदिर की उपासना पद्धति की क्या विशेषताएँ होगीं ?
3. विश्व–मंदिर में लेखक किन चित्रों को रखने का सुझाव देता है ?
4. लेखक ने विश्व–मंदिर में कौन–कौन से महावाक्य खुदवाने की बात कही है ?
5. कल्पित विश्व–मंदिर में लेखक ने किन चित्रों को रखने का सुझाव दिया है ?

3. दीर्घ उत्तरीय प्रश्नः–

1. लेखक ने विश्व–मंदिर में ईश्वर के सम्बन्ध में सगुण और निर्गुण दोनों प्रकार के मतों को उकेरने की कल्पना की है, यह कैसे संभव होगा ?
2. लेखक ने सर्व साधारण के लिए कैसे विश्व–मंदिर की कल्पना की है ? स्पष्ट कीजिए।
3. विश्व–मंदिर पाठ के माध्यम से लेखक किन उद्देश्यों को प्रकट करना चाहते हैं ?
4. सर्वधर्म सम्प्रदाय का क्या स्वरूप होना चाहिए ? संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
5. निम्न मुहावरों के अर्थ लिखकर वाक्यों में प्रयोग कीजिए–

1. चश्मा उतारना,	2. तबियत हरी होना,
3. आँखों में बस जाना,	4. गले लगाना,
5. बाँह झटकना	6. आकाश में उड़ना।

6. धर्म का क्या स्वरूप होना चाहिए ? पठित निबंध के आधार पर लिखिए।

शब्दार्थ

पसरा हुआ	=	फैला हुआ।
अविद्या	=	अज्ञान।
आलोक	=	प्रकाश।
मजहबी	=	धार्मिक।
हितार्थ	=	हित के लिए।
स्त्रोत	=	झरना।
चेष्टा	=	प्रयास।
गुह	=	बनवासी जाति का व्यक्ति।
औलियों	=	फकीरों।
अवेस्ता	=	पारासियो का धर्मग्रंथ।
सरमन	=	उपदेश।
सिरजनहार	=	सृजनहार, निर्माण करने वाला।
कुर्बानी	=	बलिदान।
खूरेंजी	=	खून–खराबा।

पाठ – 8
मृत्तिका
नरेश मेहता

1. जीवन परिचयः–

मेहता जी का जन्म मालवा (म. प्र.) के शाजापुर नामक कस्बे में सन् 1922 में हुआ था। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से एम. ए. करने के पश्चात् उन्होंने ने आल इंडिया रेडियो इलाहाबाद में कार्यक्रम अधिकारी के रूप में कार्य प्रारंभ किया। विभिन्न महत्वपूर्ण पदों पर कार्य करते हुए उन्होंने अनेक साहित्यिक पत्रों का सम्पादन भी किया। सन् 2000 में इनका निधन हो गया।

2. रचनाएँः–इनकी प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं

काव्य संग्रहः– बनपाखी सुनो; बोलने दो चीड़ को; मेरा समर्पित एकांत।

उपन्यासः– वह पथ बंधु था।

खण्डकाव्यः– संशय की एक रात,

3. काव्यगत विशेषताएँः–

1. मेहता जी आधुनिक युग के प्रसिद्ध काव्य साहित्यकार माने जाते हैं।
2. कवि के रूप में आरंभ में वे साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित थे।
3. इनकी रचनाओं में वैष्णवी विचारों का स्वरूप परिलक्षित होता है।
4. सनातन मानव–मूल्यों में मेहता जी की अटूट आस्था थी।
5. मानव के भविष्य के प्रति उनका विश्वास उनकी हर रचना में विद्यमान है।

4. भावपक्ष एवं कलापक्षः–

नए कवि के रूप में नरेश मेहता जी की रचनाओं में दो बातें उभरकर सामने आती हैं मानव–मूल्य और अस्तित्व की खोज। मानव मूल्य को वे स्थापित करना चाहते हैं। आधुनिक संकट से उत्पन्न आशंका और भय की अभिव्यक्ति इनकी रचनाओं में मिलती है।

मेहता जी ने 'मुक्त छन्द' में कविता लिखकर अपनी मार्मिकता का परिचय दिया है। उनकी कविताओं में सर्वत्र आधुनिकता का स्वर बोलता है तथा शिल्प और अभिव्यंजना के स्तर पर उनमें ताजगी और नयापन है। इनकी भाषा में लाक्षणिकता व माधुर्य का गुण विद्यमान है। शांत रस एवं वीर रस का परिपाक इनकी रचनाओं में है। आवश्यकतानुसार इन्होंने अनुप्रास, उपमा एवं रूपक अलंकारों का प्रयोग किया है।

5. साहित्य में स्थानः– प्रयोगवादी रचनाकारों में मेहता जी का स्थान सराहनीय है।

मृत्तिका

केन्द्रीय भाव–

इस कविता में सीधे–सरल बिबों के सहारे पुरुषार्थी मनुष्य और मिट्टी के सम्बन्धों पर प्रकाश डाला गया है। मनुष्य के पुरूषार्थ के बदलते रूपों के अनुरूप मिट्टी कभी माँ, कभी प्रिया, कभी पूजा और कभी चिन्मयी शक्ति के रूप में ढल जाती है।

मृत्तिका

मैं तो मात्र मृत्तिका हूँ–
जब तुम
मुझे पैरों से रौंदते हो
तथा हल के फाल से विदीर्ण करते हो
तब मैं –
धन–धान्य बनकर मातृरूपा हो जाती हूँ।
जब तुम
मुझे हाथों से स्पर्श करते हो
तथा चाक पर चढ़ाकर घुमाने लगते हो
तब मैं –
कुंभ और कलश बनकर
जल लाती तुम्हारी अंतरंग प्रिया हो जाती हूँ।
जब तुम मेले में मेरे खिलौने रूप पर
आकर्षित होकर मचलने लगते हो
तब मैं –
तुम्हारे शिशु–हाथों में पहुँच प्रजारूपा हो जाती हूँ।
पर जब भी तुम
अपने पुरुषार्थ–पराजित स्वत्व से मुझे पुकारते हो
तब मैं –
अपने ग्राम्य देवत्व के साथ चिन्मयी शक्ति हो
जाती हूँ
(प्रतिमा बन तुम्हारी आराध्या हो जाती हूँ)
विश्वास करो
यह सबसे बड़ा देवत्व है, कि
तुम पुरुषार्थ करते मनुष्य हो
और मैं स्वरूप पाती मृत्तिका।

अभ्यास के प्रश्न–

1. अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. मिट्टी के '' मातृरूपा '' होने का क्या आशय है ?
2. मिट्टी का क्या महत्व है ?
3. कुंभकार मिट्टी से क्या–क्या बनाता है ?
4. पुरूषार्थ क्या है ?
5. रौंदे और जोते जाने पर मिट्टी किस रूप में बदल जाती है ?

2. लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. मृत्तिका कविता में पुरुषार्थी मनुष्य के हाथों आकार पाती मिट्टी के किन–किन स्वरूपों का उल्लेख किया गया है ?
2. मिट्टी प्रजारूपा कैसे हो जाती है ?
3. मिट्टी के किस रूप को ' प्रिया रूप ' माना गया है ?

3. दीर्घ उत्तरीय प्रश्नः–

1. जब मनुष्य उद्यमशील रहकर अपने अहं–कार को पराजित करता है, तो मिट्टी उसके लिए क्या बन जाती है?
2. पुरुषार्थ को सबसे बड़ा देवत्व क्यों कहा गया है ?
3. मिट्टी और मनुष्य में आप किसकी भूमिका को अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं और क्यों ?
4. निम्नलिखित पंक्तियों का भाव स्पष्ट कीजिएः–
   'क'–पर जब भी तुम ''अपने पुरुषार्थ–पराजित स्वत्व से मुझे पुकारते हो, तब मैं–अपने ग्राम्य देवत्व के साथ चिन्मयी शक्ति हो जाती हूँ ।''
   'ख' – यह सबसे बड़ा देवत्व हैं, कि–
   तुम पुरुषार्थ करते मनुष्य हो
   और मैं स्वरूप पाती मृत्तिका।
5. मिट्टी और मनुष्य के अटूट सम्बन्ध के विषय में आप अपना विचार व्यक्त कीजिए।

शब्दार्थ

मात्र	=	केवल।
मृत्तिका	=	मिट्टी।
अंतरंग	=	घनिष्ठ।
प्रजारूपा	=	संतान–जैसी।
ग्राम्यदेव	=	लोक देवता, ग्रामवा–सियों के देवता।
चिन्मयी शक्ति	=	ईश्वर की सत्ता, चेतना–मयी शक्ति
आराध्य	=	आराधना के योग्य।
कुंभ–कलश	=	घड़ा, कलसा।
विदीर्ण करना	=	चीरना, फाड़ना।
मातृरूपा	=	माँ जैसी।
स्वत्व	=	अधिकार।

संकलनकर्ता
आई0पी0 गुप्ता

पाठ – 9
मानसरोवर खण्ड
'मलिक मुहम्मद जायसी'

1. जीवन परिचयः–

जायसी जी का जन्म उ. प्र. के रायबरेली जनपद के ''जायस'' नामक स्थान पर सन् 1492 के आस–पास हुआ था। 'मलिक' इनकी उपाधि थी। 'जायस' नामक स्थान में जन्म होने के कारण इनको ' जायसी ' के नाम से पुकारा गया! 'जायसी' प्रसिद्ध सूफी संत शेख ''मोइनुउद्दीन चिश्ती'' के शिष्य थे! सन् 1542 में इनका निधन हो गया।

2. रचनाएँः–

जायसी द्वारा रचित बारह ग्रंथ बताए जाते हैं, किन्तु अभी तक केवल सात ही उपलब्ध हैं–

1. पद्मावत,
2. अखरावट,
3. आखिरी कलाम,
3. चित्ररेखा,
5. कहरनामा,
6. मसलानामा,
7. कान्हावत।

3. साहित्यिक विशेषताएँः–

1. जायसी प्रेममार्गी शाखा के प्रमुख सूफी कवि माने जाते हैं।
2. लौकिक प्रेम का वर्णन कर अलौकिकता का रूप–प्रदर्शन करने में जायसी अद्वितीय कहे जाते हैं।
3. इनकी रचनाओं में रहस्यवाद के दर्शन होते हैं।
4. प्रकृति का चित्रण उद्दीपन रूप में मिलता है।
5. श्रृंगार वर्णन एवं भक्ति का मणिकांचन प्रयोग इनकी रचनाओं में मिलता है।
6. श्रृंगार रस का परिपाक इनकी प्रसिद्ध रचना 'पद्मावत' में देखते ही बनता है।

4. भावपक्ष एवं कलापक्षः–

लौकिक प्रेम के माध्यम से अलौकिक प्रेम का वर्णन करके जायसी ने आत्मा और परमात्मा के बीच की प्रगाढ़ता को स्पष्ट किया है। राजा रत्नसेन को आत्मा और पद्मावती को परमात्मा और हीरामन तोते को गुरू के रूप में चित्रित किया गया है। इनके काव्य में भक्ति–भावना की प्रधानता है।

श्रृंगारिक वर्णन प्रस्तुत कर काव्य–कला के क्षेत्र में जायसी ने अनोखा उदाहरण प्रस्तुत किया है। श्रृंगार रस का परिपाक इनके काव्य में मिलता है। शांत रस का प्रयोग भी इनकी रचनाओं में मिलता है। अनुप्रास, उपमा एवं रूपक अलंकार का प्रयोग इन्होंने ज्यादा किया है। छंदों के क्षेत्र में दोहा और चौपाई प्रमुख छन्द रहे हैं।

इनकी काव्य–शैली प्रौढ़ और गंभीर है। जायसी जी की भाषा बोलचाल की अवधी है।

5. साहित्य में स्थानः–

'जायसी' भक्तिकाल के प्रेमाश्रयी शाखा के कवि के रूप में हमेशा प्रतिष्ठित बने रहेंगे।

केन्द्रीय भाव–

(इस खण्ड में, महाकवि जायसी ने नायिका पद्मावती के अलौकिक सौन्दर्य का अत्यंत मनोरम चित्र प्रस्तुत किया है। फुलवारी के रूप में पद्मावती की सखियों का रूपक प्रभावशाली है। इसका प्रभाव मानसरोवर पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहा है।)

मानसरोवर खंड

एक दिवस पून्यो तिथि आई। मानसरोवर चली नहाई।।
पद्मावती सब सखी बुलाई। जनु फुलवारि सबै चलि आई।।
कोइ चंपा कोइ कुंद सहेली। कोइ सु केत, करना रस वेली।।
कोइ सु गुलाल सुदरसन राती। कोइ सो बकावरि–बकुचन भाँती।।
कोइ सो मौलसिरि, पुहपावती। कोइ जाही जूही सेवती।।
कोई सोनजरद, कोइ केसर। कोई सिगार–हार नागेसर।।
कोई कूजा सरबरग चमेली। कोई कदम सुरस रस वेली।।
चली सबै मालति संग, फूली कवँल कुमोद।
बेधि रहे गन गँधरस, बास–परमदामोद।।1।।

खेलत मानसरोवर गई। जाइ पाल पर ठाढ़ी भई।।
देखि सरोवर हँसे कुलेली। पद्मावती सौं कहहिं सहेली।।
ऐ रानी ! मन देखु बिचारी। एहि नैहर रहना दिन चारी।।
जो लगि अहै पिता कर राज। खेलि लेहु जो खेलहु आज।।
पुनि सासुर हम गवनब काली। कित हम, कित यह सरवर–पाली।।
कित आवन पुनि अपने हाथा। कित मिलि कै खेलब एक साथा।।
सास ननद बोलिन्ह जिउ लेहीं। दारून ससुर न निसरै देहीं।।
पिउ पियार सिर ऊपर, पुनि सो करै दहुँ काह।
दहुँ सुख राखै की दुख, दहुँ कस जनम निबाह।।2।।

लागी केलि करै मझ नीरा। हंस लजाइ बैठ ओहि तीरा।।
पद्मावती कौतुक कहँ राखी। तुम ससि होहू तराइन्ह साखी।।
बाद मेलि कै खेल पसारा। हार देइ जो खेलत हारा।।
सँवरिहि साँवरि, गोरिहि गोरी। आपनि–आपनि लीन्ह सो जोरी।।
बूझि खेल खेलहु एक साथा। हार न होइ पराए हाथा।।
आजुहि खेल, बहुरि कित होई। खेल गए कित खेलै कोई ?।।
धनि सो खेल खेल सह पेमा। रउताई औ कूसल खेमा ?।।
मुहमद बाजी पैम कै, ज्यों भावै त्यों खेल।
तिल फूलहि के सँग ज्यों, होई फुलायल तेल।।3।।

कहा मानसर चाह सो पाई। पारस रूप इहाँ लगि आई।।
भा निरमल तिन्ह पायँन्ह परसे। पावा रूप रूप के दरसे।।
मलय–समीर बास तन आई। भा सीतल, गै तपनि बुझाई ।।
न जनौं कौन पौन लेइ आवा। पुन्य–दसा भै पाप गँवावा।।
बिगसा कुमुद देखि ससि–रेखा। भई तहँ ओप जहाँ जोई देखा।।
पावा रूप रूप जस चहा। ससि–मुख जनु दरपन होई रहा।।
नयन जो देखा कवँल भा, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखा हंस भा, दसन–जोति नग हीर।।4।।

अभ्यास के प्रश्न

1. अति लघु उत्तरीय प्रश्नः–

1. पद्मावती मानसरोवर में नहाने कब जाती है?
2. पद्मावती की सखियों को फुलवारी क्यों कहा गया है ?
3. चकोर पक्षी एक टक किसके मुख को देख रहा था ?
4. सरोवर की क्या इच्छा थी ?
5. मानसरोवर निर्मल कैसे हो गया ?
6. जायसी किस धारा के कवि थे ?

2. लघु उत्तरीय प्रश्नः–

1. पद्मावती के सौंदर्य का सरोवर पर क्या प्रभाव पड़ा ?
2. यह काव्यांश किस महाकाव्य से लिया गया है ? इसका नाम 'मानसरोवर खण्ड' क्यों रखा गया है ?
3. पद्मावती के जूड़ा खोलने पर प्रकृति में क्या–क्या परिवर्तन दिखाई दिए ?
4. मानसरोवर की इच्छा पूरी होने पर मानसर ने क्या भाव व्यक्त किया ?
5. 'मानसर' किसके सौंदर्य को देखकर मोहित हुआ था और क्यों ?

3. दीर्घ उत्तरीय प्रश्नः–

1. ''जायसी सूफी काव्य–परम्परा के कवि थे।'' इस कथन को स्पष्ट कीजिए।
2. मानसरोवर खण्ड के आधार पर जायसी की भाषा–शैली की सामान्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
3. सूफी मत, हिन्दू–मुस्लिम एकता के जरिये उदार मानवता का संदेश देता है। इस विचार पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
4. जायसी कवि 'अतिशयोक्तिपूर्ण' वर्णन करने में पारंगत हैं। स्पष्ट कीजिए ।
5. सूफियों के रहस्यवाद पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

शब्दार्थ

पून्यो	=	पूर्णिमा।	**हीर**	=	हीरा।
नेहर	=	मायका।	**हार**	=	आभूषण।
पौन	=	पवन।	**हारा**	=	पराजित।
दसन	=	दांत।	**मझ**	=	मध्य, बीच।

इकाई–4

पाठ–10
बेजुबान
डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा

जीवन परिचय–

समाज सेवी एवं भारतीय जन आन्दोलन के अध्यक्ष डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा का जन्म 1931 को हुआ। उनकी शिक्षा विक्टोरिया कॉलेज ग्वालियर और बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में हुई। उन्होंने राजस्थान विश्वविद्यालय से पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की । उनके शोध का विषय गणित था। प्रारंभ में डॉ. शर्मा ने बिड़ला कॉलेज, पिपलानी में व्याख्याता के पद पर कार्य किया। सन् 1956 से वे भारतीय प्रशासनिक सेवा में आए। बहुत दिनों तक वे बस्तर में कलेक्टर के पद पर भी कार्य करते रहे। वहाँ वे आदिवासियों के संपर्क में आए। उन्होंने उनके जीवन का गहराई से अध्ययन किया। उन्होंने आदिवासियों के जीवन की विषमताओं और विसंगतियों को दूर करने के लिए अनेक योजनाएँ बनाईं और उनका क्रियान्वयन किया। तब से वे निरन्तर आदिवासी विकास कार्यक्रमों के साथ जुड़े हुए हैं। प्रशासनिक सेवा से मुक्त होने के बाद उन्होंने नार्थ–ईस्टर्न हिल यूनिवर्सिटी शिलाँग में कुलपति के पद का दायित्व संभाला। वे कुछ समय अनुसूचित जाति एवं जनजाति के आयुक्त पद पर भी रहे। तब उन्होंने आदिवासियों के जीवन पर आधारित विलक्षण रिपोर्ट, राष्ट्रपति महोदय को सौंपी। इस समय डॉ. शर्मा भारत जन–आदन्दोलन के अध्यक्ष हैं और आदिवासी अंचल के लोगों के जीवन में सहभागी बन कर संघर्षरत हैं।

रचनाएँ:–

डॉ. शर्मा लेखन के क्षेत्र में भी निरन्तर सृजनरत रहे हैं। गणित, लोक प्रशासन और आदिवासी जीवन आपके प्रिय विषय रहे हैं। विभिन्न विषयों पर उनकी पाँच पुस्तकें और सौ से अधिक निबन्ध प्रकाशित हो चुके हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ:–

भावपक्ष– डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा एक सफल निबंधकार हैं। उनके निबंध चिन्तन प्रधान हैं। वे पाठकों को सोचने के लिए नई दिशा देते हैं। उनकी रचनाओं में दीन–हीनों के शोषण के प्रति आक्रोश झलकता है।

कलापक्ष– (1) उनकी भाषा, सरल, सुबोध एवं प्रांजल हैं। उन्होंने बोलचाल में प्रचलित खड़ी बोली को अपनी अभिव्यक्ति का आधार बनाया है।

(2) उनकी भाषा में तद्‌भव शब्दों की प्रधानता है। कहीं–कहीं वे लोक प्रचलित उर्दू, और क्षेत्रीय बोली के शब्दों का भी प्रयोग करते चलते हैं।

(3) उनकी शैली व्याख्यात्मक एवं संवादात्मक है। कहीं–कहीं उन्होंने आत्मकथात्मक शैली का भी उपयोग किया है।

(4) रोचकता और कौतूहल बनाए रखने की प्रवृत्ति उनकी शैली की एक प्रमुख विशेषता है इसलिए उनकी रचनाओं की संप्रेषणीयता में कहीं कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती।

(5) शर्मा जी का हिन्दी और अंग्रेजी, दोनों भाषाओं पर समान अधिकार है। इसीलिए उनकी गिनती इन दोनों भाषाओं के अग्रणी लेखकों में की जाती हैं।

(6) अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने कही प्रतीकात्मकता और सांकेतिकता का भी सहारा लिया है।

(7) उनके वाक्य छोटे, चुटीले और प्रभावपूर्ण है। उन वाक्यों के माध्यम से वे कहीं–कहीं स्वयं ही प्रश्न करते और उसका उत्तर भी स्वयं ही देते चलते हैं। किस्सागोई की प्रधानता के कारण उनके निबन्ध रोचक और सरस हो गए हैं।

साहित्य में स्थानः–

डॉ. बह्मदेव शर्मा एक संघर्षशील, जुझारू लेखक हैं। वे लेखन को सामाजिक परिवर्तन के लिए एक हथियार के रूप में प्रयोग करते हैं। अपने विचार प्रधान आलेखों के कारण एक चिन्तनशील निबन्धकार के रूप में हिन्दी साहित्य में उनका स्थान महत्वपूर्ण है।

बेजुबान

डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा

केन्द्रीय भाव— यह आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया निबन्ध है। इस निबन्ध में लेखक ने सुदूर अंचल में रहने वाले आदिवासी के माध्यम से उसकी व्यथा कथा का चित्रण किया है। इसके साथ ही यह बतलाया गया है कि आदिवासी संस्कृति क्या है ? यह अपने मूल रूप में कितनी सुरक्षित रह गई है और हमारी प्रगति वहाँ किस रूप में पहुँच रही है ? हमारे तथाकथित सभ्य समाज के जीवन मूल्य, आदिवासियों के जीवन मूल्य से भिन्न हैं। इसलिए वह वर्तमान परिस्थितियों में स्वयं को एकाकी पाता है।

बेजुबान

नहीं, ऐसा नहीं कि हम कभी बोलना ही नहीं जानते थे, पर हाँ आज हम बेजुबान हैं।

कहीं आप बेजुबान का यह मतलब न लगा लीजिए कि हम बेबस हैं, हमारा कोई सुनने वाला नहीं है। बहुत लोग आते हैं, हमें अजीब–अजीब बातें बताते हैं– मुझे तो एक बहुत बड़ी जगह भी ले गये थे। कौन–सा शहर था, नाम भूल गया, वहाँ आदमी ही आदमी थे। मुझे तो चलना ही मुश्किल था। हाँ, बड़े–बड़े मकान थे। बिजली, रोशनी और न जाने क्या–क्या था ! मैं तो घबरा गया था। एक दिन एक साहब पूछ रहे थे कि क्या तुम भी बड़े–बड़े मकान बनाओगे ? मैंने तो सीधे से कहा कि किसलिए ? पर मालूम नहीं उन्होंने क्या समझा, कुछ बुरा मान गये ! हाँ और फिर तो वे गुमसुम ही हो गये।

एक दिन साहब एक बात और पूछ रहे थे–' तुम्हारे यहाँ धान क्या भाव बिकता है ?' मैंने कह दिया कि ' धान कोई बेचने के लिए होता है!' इस पर तो वे बहुत हँसे। पर आप ही बताइए, इसमें हँसने की कोई बात थी क्या ? खैर......... अपनी–अपनी मर्जी, हमने तो फिर उनकी बातों का जवाब देना ही छोड़ दिया। हम बिन पढ़े–लिखे जंगल के आदमी ठहरे, बात करने का तरीका भी नहीं मालूम। न मालूम किस बात पर आप लोग नाराज हो जाओ। अच्छा यही है चाहे समझ में आये न आये, हम हाँ करते रहें। इसमें कोई नाराज नहीं होगा। भगवान जाने आप नाराज हो जाओ और हम किस चक्कर में फँस जायें उस दिन तो जब तक साहब टिके रहे बस हमने किसी तरह राम–राम करके अपनी खैर मनायी। माटी माता ! ऐसी मुसीबत फिर कभी न देना–हम अपने जंगल में ही भले हैं।

अच्छा हुआ, आप आये हैं। आप कहते हैं कि हम अपनी बात क्यों नहीं कहते ? बात असल में यह है कि हम गँवार हैं, अपनी बात किसी को समझा नहीं पाते हैं। हमारे यहाँ एक गुरूजी आये थे। खूबे (बहुत) दिन रहे यहाँ। अभी भी शाला है, कभी–कभी आते हैं। पर वे भी हमारी बात नहीं समझते हैं। स्कूल में मेरा नाम लिखाया था मेरे बाबा ने, न जाने कितना रटा था पहली किताब को। एक पाठ था–'हरे रंग का है यह तोता।' हमारी तो समझ में कुछ नहीं आया। मेरा भाई, हाँ यही मगडू वह तो कभी स्कूल गया ही नहीं। एक दिन उसने पूछा कि आज क्या पढ़ा था तो हमने बताया था कि ' हरे रंग का है यह तोता ' पढ़ा था। उसने कहा 'क्या होता है यह तोता ?' मैंने कहा, 'क्या मालूम ?'

मैंने उससे पूछा कि 'तुमने क्या किया ?'

बोला– ओह, आज तो खूब मजा आया–खूब नाचे थे–रेलों रे रेलों गाया था और हाँ, एक मूसा देखा तो वह खरगी की जड़ के पास बिल में घुस गया। टँगिया लेकर पेड़ काटा। अरे वह तो अलग मैं दबते–दबते बच गया। गड्ढा खोदा, पकड़ ही तो लिया और फिर उसे भून कर......... अरे देख क्या रहा है ? हाँ, और फिर नाचे, खूबे नाचे, इतना नाचे कि गिर ही गये। खूब देर बरिया घूमर (प्रपात) के पास बैठे रहे। पाको भी खूब हँस

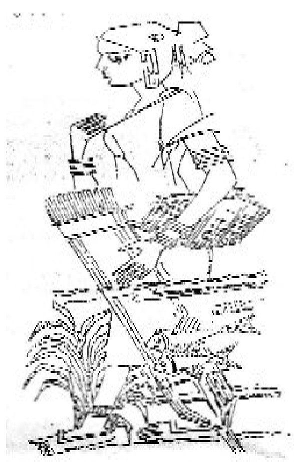

रही थी। हम तो बातें करते–करते भूल ही गये थे। वह सुधरी, बड़ी शैतान है। चुपचाप आकर मेरे पीछे बैठ गयी और पाग लेकर भाग गयी। मैं उसके पीछे भागा। सामने देखा। केव–केव–केव–केव करते हुए रूपा (तोता, गोंड़ी बोली में) का झुंड निकला। कितने भले थे। इतने रूपा एक साथ कभी नहीं देखे होंगे। अपने घर जा रहे थे। पाको ने भी कहा घर चलो न......... हँसते–खेलते भाग आये। आज तो बहुत ही मजा आया और तू यह क्या पढ़ रहा था 'हरे रंग का है यह तोता।' भगवान, मैं तो उस दिन से स्कूल गया ही नहीं और आप कहते हो कि स्कूल जाते तो बोलना सीख जाते। आप ज्यादा जानते हैं। हम क्या जानें ?

आप हमारी कहानी सुनना चाहते हैं । यदि मैं यह पूछूँ कि 'किसलिए?' तो बुरा मत मानना। हमारा गाँव तो सड़क से बहुत दूर है इसलिए बहुत कम लोग आते–जाते हैं। हाँ, आप सरीखे एकाध अगर पैदल चलने की हिम्मत करें तो यहाँ पहुँच पाते हैं। ये आप जो सड़क देखते हैं न, वह बहुत पुरानी नहीं है। अभी अंकाल (अकाल)की साल में बनी है। हमें पेट भरने को मजदूरी मिल गयी। पहले हमारा गाँव वहीं था। साहब लोग आये थे। कहा था कि हमको मजदूरी भी मिल जायेगी और सड़क भी आ जायेगी। हमारे गाँव के पास से सड़क निकाली गयी। एक दिन, उसको क्या कहते हैं, हाँ उद्घाटन, उद्घाटन हुआ, खूब लोग जमा हुए। कोई लोग तो खूब बोले–सड़क आ गयी है, तुम लोगों के भाग खुल गये, अब तरक्की होगी, सब लोग अब आगे बढ़ेंगे। सबने तालियाँ बजायीं, उनको देख कर हमने भी तालियाँ बजायीं। मुझसे बोलने को कहा गया तो मैंने भी कहा कि 'हम मन चो भाग आसे कि तुइ सब मन एता इलस' (हम लोगों के भाग्य हैं कि आप सब लोग यहाँ आये हैं।) भइया, ज्यादा तो नहीं बोल पाया, मैं तो इतनी बात कह कर वहीं ताली बजाने लगा–मालूम नहीं कुछ लोग हँसने लगे। मैं भी हँसा और ताली और भी जोर से बजाता रहा।

हाँ, तो उसके कुछ दिन बाद हमारे गाँव वाले नहीं माने और वहाँ से अपनी बस्ती यहाँ ले आये। सड़क क्या आयी, हमारी तो मुसीबत ही आ गयी। जो देखो सो हमारे यहाँ आने लगा। कभी कोई साहब, तो कभी कोई ठेकेदार और बाबू हम तो किसी को चीन्हत नाहीं। आमचे बाट सप्पाय बरिया साहब आसत (हमारे लिए तो सभी बड़े साहब हैं।)। हमारे गाँव माँ आप दसठन हों दसठन तो घर है, किस की बात मानें और

किसकी न मानें । साहब लोग आते हैं, कोई कुछ माँगता है, और कोई कुछ। किसी की गाड़ी खराब हो जाती है, तो रात को ही गाँव के गाँव को उठना पड़ता है। रूपये तो देते हैं, पर हम क्या करेंगे रूपये का ? और एक बात हमें अच्छी नहीं लगती। जो देखो सो हमारे गाँव में इधर–उधर घूमता है। बाबू आप के यहाँ भी ऐसा ही होता है क्या ? मैं जगदलपुर गया था, वहाँ तो हमें अपने घर कोई घुसने नहीं देता पर हमारे घर में कोई दरवाजे तो हैं नहीं। सब खुले ही हैं।

हमारे यहाँ तो शाम हुई और लड़के–लड़की अपने खेत में निकल गये। खूब रात गये तक नाचते हैं, गाते हैं। बाबू हमारे यहाँ सब लोग मद पीते हैं–शादी–ब्याह, मरनी कभी–कभी बाजार जाकर भी पीते हैं पर आजकल का रिवाज हमें कुछ भी अच्छा नहीं लगता। उस दिन हम बिरंगपाल गये थे ,वह है न सड़क के किनारे का गाँव। वहाँ तो खूब बाहर से लोग आते हैं। नाच देखते हैं और वहाँ के लोगों को तो जगदलपुर भी नाचने के लिए बुलाते हैं। हमारे यहाँ लड़के हमारे सामने मद नहीं पीते, पर वहाँ तो उस दिन लड़कों ने हद ही कर दी। अब तो किसी का लिहाज ही नहीं रहा। एक और बात हुई है। नये छोकरे तो वहाँ अब नाचने से ही पैसा कमा लेते हैं। आप ही बताओ, यह भी कोई तरीका है, खेती सब बूढ़ों के पल्ले हो गयी। हमने तो उस दिन कह दिया कि अभी नाच लो और हमारी बात मत मानो, पर आना खेती पर ही होगा। जिन्दगी भर थोड़े ही नाचते रहोगे। जब समय होता है तब सब नाचते हैं। मड़ई जाते हैं तो रात–रात भर नाचते हैं, चाँदनी रात में भी नाचते हैं पर ऐसा तो नहीं होता कि मौके बेमौके जब भी कोई बाहर वाला आ जाये तो नाचो और फिर वह पैसा और मदे, हमें तो अच्छा नहीं लगता।

हमें तो सड़क पसंद नहीं आयी। हम जंगल के आदमी ठहरे। गाँव में कोई रहता है, नहीं भी रहता है। खेती के दिनों में महिलाएँ, सुअर, मुर्गी रखाने के लिए अकेली ही रहती हैं । उस दिन पंचायत हुई कि हम सड़क पर नहीं रहेंगे। हम यहीं दो साल हुए चले आये। वह रास्ते में जो एक झोपड़ी है न, जिसमें बहुत से केले के पेड़ हैं, वह मेरी झोपड़ी थी। आपने देखा होगा झोपड़ी तो अब टूट गयी। पर इस साल केले खूब आये......... छोडो भी उस बात को, इस जगह आराम है। किसी की बेगार का कोई डर नहीं।

अब आप कहें तो एक बात मैं भी पूछूँ। साहब, आप क्या करते हो यह सब पूछ कर? पहले साहब आये थे, कोई बहुत बड़ा काम कर रहे थे। हमारी तो कुछ समझ में नहीं आता। आप लोगों के यहाँ बड़े–बड़े काम क्या होते हैं ? हमने तो एक साहब को देखा घन्टों कुछ लिखते थे। जाने क्या करते रहते हैं। हम तो एक मिनट बैठ नहीं सकते। अरे, बात करो, हँसो, खेलो–कूदो, नाचो–गाओ। यह क्या कि चुपचाप बैठे हैं! आप लोगों की बात हमारी तो समझ में नहीं आती।

अरे, मैं इधर–उधर की बात करने लग जाता हूँ तो जो साहब आये थे न, उन्होंने कहा था कि खूब बड़ी किताब लिखेंगे। हमारे छापे (फोटो) उतारे थे। मेरी तो तभी शादी हुई थी। बड़े अच्छे आदमी थे। उस दिन शाम को सबके लिए खूब मद मँगा दिया था। मद पीने के बाद तो फिर रात भर ही हम लोग नाचे थे। रेलों रे रेलों रेलों बाबू पूनी (पूर्णिमा) थी उस दिन और मनकू का ढोल। बाबू उस ढोल की आवाज कान में पड़े तो रुका ही नहीं जाता। आप कहते हो कि क्या जादू है ? वह हम नहीं जानते, परन्तु कुछ ऐसा होता है कि सब छोड़ कर हम उसी की ओर भागते हैं। उस

दिन भी खूब ही छापा लिये हम मनके। मालूम नहीं क्या किया उनका फिर साहब ने। सबेरे हमको रूपये भी दिये। हमने फिर भूमिकाल (सामूहिक कार्य) में खर्च किये। एक बड़ा सुअर मँगाया था। मेरी पत्नी का छापा आयेगा तो यहाँ इसी लकड़ी पर लगा दूँगा। मालूम नहीं, साहब भूल गये होंगे.......... पर नहीं, बड़े अच्छे थे साहब। छापा भेजेंगे वे जरूर।

पीढ़ी दर पीढ़ी से यही जंगल हमारा घर है। बाप–दादों के जमाने से यह जंगल हमारा ही है। बहुत दिन की बात है हमारे पिता के जमाने की। खूबेझन (बहुत लोग) यहाँ आये थे। उन्होंने कहा था कि यहाँ बड़े अच्छे पेड़ हैं, कटवाकर बाहर भेजेंगे। उन्होंने यह भी बताया था कि यह जंगल महाराज का है। पहली बार सुनी थी यह बात। सरकार की बात हमें क्या मालूम महाराज तो थे ही, हम पट्टी भी पटाते रहे। दशहरा पर टीका भी देते रहे। पर यह नहीं मालूम था ? कि जंगल हमारा नहीं है......... हमारा नहीं तो महाराज तो थे ही, हम पट्टी भी पटाते रहे। दशहरा पर टीका भी देते रहे। पर यह नहीं मालूम किसका है ? हमारे दादा ने कहा था कि अगर जंगल महाराज का है, तो वे आकर यहाँ रहें, खेती करें। हमारे यहाँ तो कोई भी आकर रह सकता है। पर साहब ने बताया रहने के लिए नहीं , अरे यह लकड़ी बहुत अच्छी है, उसे वे कटवायेंगे। बाबा ने कहा था, बहुत जंगल है कटवा लो उसमें क्या है। पर साहब बता रहे थे कि हम लोग जंगल जलाएँ नहीं। पर यह नहीं बताया खाने को क्या होगा? और यहाँ तो ऊँची–ऊँची बागड़ नहीं लगाए तो जानवर एक पौधा भी नहीं छोड़ेंगे। और जानवर सुअर–मुर्गी को भी उठा ले जायेंगे। आजकल भी साहब लोग आते हैं, बताते हैं, यह लकड़ी बड़ी कीमती है। पर हम रुपये का क्या करेंगे? हम अपने लिये वंजी (धान), सरसों, तंबाकू इसी खेत में पैदा करेंगे ? उस दिन मैंने इस सगौना (सागौन) के पेड़ को काटा था, एक बाड़ी के लिए। कितना लम्बा और मोटा था। एक कुल्हाड़ी मारने से ही फट जाता है और पट्टियाँ लम्बी–लम्बी निकलती हैं। बीजा (एक पेड़) में तो दिन भर काटो तो भी वह बाड़ी नहीं लगती। हम तो अपने खेत में सगौना की ही बाड़ी लगाते हैं।

हाँ, तो बाबा बताते हैं कि साहब ने कहा कि सगौना के झाड़ कटवा कर भेजना है, बाहर और फिर सगौना के पेड़ भी लगवाने हैं, बाबा ने तो मना कर दिया कि हमारे तो माटी देव यहीं हैं और हम तो दूसरी जगह नहीं जायेंगे। पर साहब नहीं माने। साहब चले गये तो बड़ी पंचायत हुई। पूरे परगना के मांझी आये थे। सबने कहा कि सरकार को सगौना चाहिए काट लें, पर हम अपने देव को कैसे छोड़ेंगे। और अगर सरकार नहीं मानती है तो हम सब उड़ियान (उड़ीसा राज्य) चले जायेंगे। (कहते हैं कि साहब लोग कई बार आये और हमारे गाँव भी रिजर (रिजर्व फारेस्ट–आरक्षित वन) हो गया था। आस–पास के गाँव तो हट गये, पर हमारे बाबा ने कह दिया कि हम तो यहीं मरेंगे, नहीं हटेंगे। सब मांझियों ने सलाह की। इसी गाँव के पास एक चौकी थी। सबने मिलकर सब सरकारी लोगों को वहाँ से भगा दिया) पहले तो बाबा ने उनसे अच्छी तरह कहा तुम लोग चले जाओ, पर वे नहीं माने और एक ने तो बाबा को गाली दे दी। बाबा कहते थे कि फिर उनको मार के भगा दिया। उसके बाद एक साहब आये, कहते हैं कि बरिया साहब थे। उन्होंने मांझीमन से बात की। कहते थे कि तुमने बलवा क्यों कर दिया, कोई बात थी तो हमसे तो कहते?

आपने भी अच्छी बात कहीं–जंगल में हमें डर नहीं लगता ? हम अभी यही पूछ रहे थे कि

बाबू आपको इतनी बड़ी मोटर, इतने बड़े–बड़े टरक कोई इधर से आया पों पों, कोई उधर से आया खर्र........... आपको डर नहीं लगता ? हम तो दो दिन में तंग आ गये थे और मुझे तो कोई हांडी भर के भी मद रोजाना दे तो भी वहाँ एक मिनट नहीं ठहरूँ। कल देखा था न आपकी दूर से मोटर आ रही थी–कैसी भगदड़ मच गयी थी पेका–पेकीमन में (लड़के–लड़कियों में)। सब कैसी लेन से जा रहे थे। जब एकदम आवाज सुनी जंगल में भाग गये थे और आपके यहाँ तो लोग निडर ऐसे हैं कि सड़क पर खड़े रहेंगे। सुनते ही नहीं, मानो जिन्दगी का कोई डर नहीं।

ये पेड़ आप देख रहे हैं, हमारे बाबा का लगाया हुआ था और मैं तो इस जंगल में हर पेड़ को पहचानता हूँ, हर एक पेड़ को। इस आम का फल कितना मीठा होता है कि बच्चे उन्हें कच्चे ही तोड़ कर खा जाते हैं और यह आम, यह भादो तक फल देता है और उस पेड़ को देखो, कितनी बड़ी स्याही की लता चढ़ी है। जब मैं छोटा था, तो बड़ा नटखट था। बन्दर की तरह चढ़ जाता था। एक दिन इस स्याही पर से पैर फिसला, मर ही गया होता। पांडू गुनिया ने जान बचायी और यह महुआ का पेड़, इसी महुआ के पेड़ के नीचे ककसाड़ के नाच में ये सुधरी मेरा कंघा छीन कर भाग गयी थी और जाकर पेड़ के पीछे छिप गयी। फिर वहीं बैठ कर खूब देर तक खूब बात की। उसी दिन तो वह पहली बार हमारे गाँव में नाचने आयी थी!

आप नहीं समझेंगे बाबू, आप नहीं समझेंगे नहीं समझेंगे। ये पेड़ हमारे दुःख में रोते हैं। हमारे सुख में हँसते हैं। चाँदनी रात, ककसाड़ नाच में पेड़ भी झूमते हैं और ये बाँस के कुंज मस्ती में आकर हमारे साथ गाते हैं–के के रो के रो........।

देखो वह लड़की कैसे पेड़ के पीछे खड़ी झाँक रही है आपको ? लाख समझाने पर इसकी समझ में आता ही नहीं। बाहर का आदमी देखा और भागी जंगल में। अरे, कोई सभी एक से थोड़ी होते हैं, पर नहीं वह तो कहती है कि हमें डर लगता है। आदमी से डर लगता है कैसे समझाऊँ। आदमी से डर लगता है, जंगल से नहीं। आप चुप क्यों हो गये ? जंगल की बात आपको अच्छी नहीं लगी ? चलिए तो फिर कहीं और घूम आयें–चलिए.........।

ये रास्ता बेड़मा पदर को जाता है। फूल पदर के पहले हमारे बाप–दादे बेडमा पदर में ही रहते थे। शेरखोरी के कारण वहाँ से हट गये थे। अभी भी माटी देव की पूजा करने वहीं जाते हैं।

ये हमारे गाँव के गाता कल्क (पत्थर के बने मृतकों के स्मृति चिन्ह) हैं। ये सबसे बड़ा पत्थर हमारे बाबा के बाबा बोड़ा का था। दस कौड़ी (दो सौ) लोग लगे थे। चार दिन खोजने के बाद तो वह पत्थर मिला था। बताते हैं कि मांझीपन तो और भी बड़ा पत्थर चाहते थे, इससे दूना, सत्तर के बलवे में बोड़ा ही तो मुखिया थे।

आपको नहीं मालूम। बाबा बताते थे कि पूरा जगदलपुर घेर लिया था, तीस हजार मुरिया थे। भला मजाल कि कोई बाहर चला जाये या अन्दर आ जाये। हाँ, उनसे पूछकर दारु (लकड़ी), चाउर और जरूरत की चीजें ले जा सकते थे। कोई दुश्मनी तो थी ही नहीं कि भूखों मारते। हमारा ही तो राजा था। उनका तो यह कहना कि दीवान को हटा दो। उसके लिए राजा माने नहीं। हमारे परदादा बोड़ा ने मिर्च और आम की डगाल घुमा दी थी। तीन दिन में सब मुरिया इकट्ठे हो गये थे।

दीवान ने तो हद ही कर दी थी। राजकाज तो चलाना ही होता है। अब हम लोग तो कुछ पढ़े–लिखे हैं नहीं, ठेकेदार तो बाहर से लाना ही पड़ता था राजा को। हमारे यहाँ के ठेकेदार,

कौन–सी जगह है वह, हाँ बिहार, बिहार से आये थे।

उनकी खेती–पाती मुरिया नहीं करते तो कौन करता? अब भी तो पटवारी, गारद सब बाहर से ही आते हैं। अब हम पढ़े ही नहीं तो क्या करेंगे? साहब लोग आयेंगे तो उनका काम तो करना ही पड़ेगा सरकारी हुकुम तो सरकारी हुकुम है। लेकिन उस समय तो अरे, कुछ मत पूछिए। बाबा कहते थे कि किसी से घर का क्या काम है ? उसका खेत खराब हो रहा है, कुछ भी हो रहा हो तो दीवान का हुकुम है तो सब छोड़ कर जाओ। शिकार के लिए दस–दस कौड़ी (दो सौ) आदमी। अरे एक सांबर मिल गया तो उससे साल तो नहीं कटती। अपना पेट तो यही धरती माता ही भरती है।

हाँ, कहते हैं कि यह दीवान महाराज को भी बस्तर के बाहर भेज रहा था। बोड़ा को खबर लगी तो वहीं कोहकामेंटा के पास रास्ता रोक लिया। महाराज पालकी में थे। बोड़ा ने कहा हमें छोड़ कर मत जाओ। दो मुरिया तो वहीं मर गये, पर फिर बोड़ा भी अपनी पर आ गया, जाने नहीं दिया। दीवान को भी पकड़ लिया और.......... और जगदलपुर का घेरा........

न मालूम कौन जासूस खबर भेज दिया। अंग्रेजी फौज आयी इधर उड़ीसा–जयपुर की तरफ से बताते हैं कि बड़ा अच्छा साहब था। उनकी फौज बाहर खड़ी रही और बाबा ने राजा से मिलने जाने दिया। बोड़ा ने कह दिया कि हमारी किसी से लड़ाई नहीं है पर हम दीवान को नहीं चाहते हमारे राजा तो अच्छे हैं। अंग्रेज साहब आठ–दस दिन रहे, कोई झगड़ा नहीं हुआ–बहुत मुरियों से बात की। फिर अंग्रेज साहब दीवान को अपने साथ ले गये। बाबा ने भी घेरा तोड़ दिया। सब मुरिया जहाँ के तहाँ चले गये।

प्रश्न और अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

(1) 'बेजुबान' शब्द का प्रयोग लेखक ने किसके लिए किया है ?

(2) खेती के दिनों में स्त्रियाँ घर में अकेली क्यों रहती हैं ?

(3) आदिवासी लोग कौन–सी खेती करना पसंद करते हैं ?

(4) आदिवासी ऊँची बागड़ क्यों लगाते हैं ?

(5) बोड़ा ने मिर्च और आम की डंगाल क्यों घुमाई थी ?

(6) गाता कल्क किसे कहते हैं ?

(7) आदिवासी अपने देवता को क्या कहते हैं ?

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(1) बस्तर के वनवासी चुप क्यों रहते हैं ?

(2) मनकू के ढोल की आवाज का जादू कैसा था ?

(3) आदिवासियों को बाहर के साहब लोगों का गाँव में आना अच्छा क्यों नहीं लगता ?

(4) आदिवासी दीवान से क्यों नाराज थे ?

(5) बोड़ा ने बस्तर के महाराज को बाहर जाने से कैसे रोका ?

(6) राजा के दीवान को वनवासियों ने कैसे

हटवाया ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. इस निबन्ध में जंगल का महत्व क्या बताया गया है ? जंगल नहीं हो तो आदिवासियों का जीवन कैसा बीतेगा ?
2. मुरिया आदिवासियों ने किसके खिलाफ विद्रोह किया और क्यों ? कारण स्पष्ट कीजिए।
3. सागौन के जंगल को लेकर मांझी पंचायत में क्या–क्या विचार हुआ ?
4. आदिवासी को जंगल से गहरा लगाव क्यों होता है ? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
5. अंग्रेज साहब ने मुरिया जाति के लोगों के क्रोध को किस प्रकार शान्त किया ?
6. आदिवासियों के रीति–रिवाज पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

1. इन पंक्तियों की संदर्भ प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए–

''पीढ़ी दर पीढ़ी से यही जंगल हमारा घर है। बाप–दादों के जमाने से यह जंगल ही हमारा घर है। बाप–दादों के जमाने से यह जंगल हमारा ही है।''

2. इस कथन का आशय समझाइए–

''आप नहीं समझेंगे बाबू, आप नहीं समझेंगे। ये पेड़ हमारे दुःख में रोते हैं। हमारे सुख में हँसते है। चाँदनी रात, ककसाड़ नाच में पेड़ भी झूमते हैं और ये बाँस के कुंज मस्ती में आकर हमारे साथ गाते हैं।''

शब्दार्थ

बेजुबान = चुप रहने वाला, मूक, गूंगा।
बेबस = विवश, लाचार।
गुमसुम होना = खोया–खोया सा रहना।
खैर = कुशल।
मूसा = चूहा।
बरिया घूमर = जल प्रपात।
पाग = पगड़ी।
हिम्मत = साहस।
भाग = भाग्य।
तरक्की = उन्नति, प्रगति।
मुसीबत = परेशानी।
चिन्हना = पहचानना।
मद = मदिरा, शराब।
मड़ई = गाँव में लगने वाला मेला।
महिला = स्त्री, नारी।
बागड़ = घेरा, चार दीवारी।
रिजर = रिजर्व (आरक्षित)।
शेरखोरी = शेर के उत्पात।
रूपा = तोता।
पल्ले = सुपुर्द।
छापा = तस्वीर।
गारद = पुलिस गार्ड।

पाठ – 11
प्रेम को मंत्र
घनानन्द

जीवन परिचय–

रीति काल के रीतिमुक्त कवि घनानन्द का जन्म संवत् 1746 अर्थात् सन् 1689 को, उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर नामक नगर में हुआ। ये भटनागर कायस्थ कुल के थे। इनकी नियुक्ति दिल्ली के बादशाह मुहम्मद शाह रंगीले के दरबार में मीर मुंशी के पद पर हुई थी। ये दरबार की नर्तकी सुजान से प्रेम करते थे। ये बहुत अच्छे गायक भी थे पर तभी गाते थे, जब इनका मन होता था। बादशाह के दरबारी इनसे बहुत जलते थे। एक बार दरबारियों ने इन्हें नीचा दिखाने के लिए षड्यंत्र रचा। उन्होंने बादशाह से कहा कि घनानन्द, राज–नर्तकी सुजान के कहने पर ही गायेंगे, आपके कहने पर नहीं। बादशाह मुहम्मद शाह ने तब राज–नर्तकी सुजान को बुलवाया और उससे कहा कि वह घनानन्द से गाने के लिए अनुरोध करे। तब सुजान के कहने पर घनानन्द ने तन्मय होकर गाया। तब दरबारियों ने बादशाह के कान भरे। उन्हें यह समझाया गया कि घनानन्द ने आपकी ओर पीठ करके गाकर, एक नर्तकी के मुकाबले में आपका अपमान किया है। तब बादशाह ने क्रोधित होकर घनानन्द को दरबार से निकाल दिया। उन्होंने सुजान से भी साथ चलने के लिए कहा। पर जिस सुजान के कारण ये अपमानित हुए थे। उसने इनके साथ चलने से साफ मना कर दिया। तब सुजान के व्यवहार से मर्माहत होकर, इन्हें वैराग्य हो गया। घनानन्द अन्ततः वृन्दावन चले गए। वहाँ निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षा लेकर, श्रीकृष्ण की भक्ति में लीन हो गए।

ईसवी सन् 1760 में अहमदशाह अब्दाली ने वृन्दावन पर भीषण आक्रमण किया। अब्दाली के सैनिकों ने घनानन्द का क्रूरतापूर्वक वध कर दिया।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में इनके तीन नाम मिलते हैं–घनानन्द, घन आनन्द और आनन्द घन। पर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनका नाम घनानन्द या घन आनन्द ही स्वीकार किया है।

रचनाएँ–

घनानन्द की कुल कृतियों की संख्या बयालीस हैं। पर इनमें से उपलब्ध कृतियाँ निम्नांकित हैं–

(i) सुजानहित, (ii) इश्कलता, (iii) प्रीति पावस, (iv) प्रेम सरोवर, (v) ब्रज विलास, (vi) कृष्णा कौमुदी, (vii) गोकुल गीत, (viii) रस केलिवल्ली, (ix) सुजान सागर, (x) घनानन्द कवित्त।

काव्यगत विशेषताएँ–

भावपक्ष–(i) घनानन्द रीतियुग की अनुभूतिपरक स्वच्छन्द काव्यधारा के मुख्य कवि हैं।

(ii) इनकी सभी रचनाएँ मुक्तकों के रूप में हैं।

(iii) घनानन्द प्रेम के कवि हैं पर उनकी प्रेम संवेदना सर्वथा निजी है।

(iv) उनका आलम्बन यद्यपि भारतीय प्रेम रहा है पर उसकी परिणति ईश्वरीय प्रेम में हुई है।

(v) घनानन्द की रचनाओं में मस्ती, तन्मयता और उमंग के दर्शन होते हैं।

(vi) वे यथास्थान प्रकृति का नैसर्गिक चित्रण भी करते जाते हैं।

कलापक्ष– (i) घनानन्द की काव्यकला सहजता से पूर्ण है।
(ii) उसमें उक्तियों की लाक्षणिकता और व्यंजकता है।
(iii) घनानन्द के काव्य शिल्प में सौम्य वक्रता है।
(iv) रस की दृष्टि से घनानन्द का सारा काव्य श्रृंगार प्रधान है।
(v) श्रृंगार के साथ–साथ भक्ति का भी अच्छा परिपाक हुआ है।

भाषा–शैली–

घनानन्द के काल में ब्रजभाषा की प्रांजल छटा देखने को मिलती है। उनकी भाषा में स्वच्छता, सुघड़ता, नाद सौन्दर्य और आत्मीयता के दर्शन होते हैं। उनका सारा काव्य छंद की रस माधुरी से ओत–प्रोत है। उन्होंने अपनी रचनाओं में कवित्त, सवैया और घनाक्षरी छन्दों का अधिक प्रयोग किया है।

साहित्य में स्थान–

भावनात्मकता, लाक्षणिकता, रहस्यात्मकता एवं वैयक्तिकता का एक साथ संतुलित रूप से प्रयोग यदि रीतिकाल के किसी कवि में हुआ है, तो वे घनानंद हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल उनके काव्य का मूल्यांकन करते हुए लिखते हैं–अपनी भावनाओं के अनूठे रूप रंग की व्यंजना के लिए भाषा का ऐसा बेधड़क प्रयोग करने वाला हिन्दी के पुराने कवियों में दूसरा नहीं हैं। उनकी विरह व्यंजना, मौलिक, अनूठी और अद्वितीय है। वे रीतिकाल के अनुभूति परक स्वच्छन्द काव्य धारा के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं।

घनानन्द : प्रेम को मंत्र

केन्द्रीय भाव – [घनानन्द का प्रेम केवल समर्पण की भाषा जानता है। सौदेबाजी या चालाकी की इसमें कोई गुंजाइश नहीं है। कविता उनकी प्रेमाभिव्यक्ति का माध्यम है। प्रेम की संवेदना सर्वथा निजी है। नारी सौन्दर्य की रूपासक्ति, श्रृंगार का आलम्बन लेकर लौकिक प्रेम से आत्मा के स्तर तक पहुँच जाती है।]

अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं।
तहाँ साँचे चलै तजि आपनपौ झझकैं कपटी जे निसाँक नहीं।
घनआनंद प्यारे सुजान सुनौ यहाँ एक तें दूसरों आँक नहीं।
तुम कौन धौं पाटी पढ़े हौ कहौं मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।।1।।

पूरन प्रेम को मंत्र महापन, जा मधि सोधि सुधारि है लेख्यौ।
ताही के चारू चरित्र विचित्रनि यौं पचि कै रचि राखि बिसेख्यौ।
ऐसो हियो हित पत्र पवित्र जु आन–कथा न कहूँ अवरेख्यो।
सो घनआनंद जान, अजान लौं टूक कियौ पर बांचि न देख्यौ।।2।।

चंदहि चकोर करै, सोऊ ससि–देह धरै,
मनसा हू ररै, एक देखिये को रहै द्वै।
ज्ञान हूँ तें आगे जाकी पदवी परम ऊँची,
रस उपजावै तामैं भोगी भोग जात ग्वै।
जान घनआनंद अनोखों यह प्रेम–पंथ,
भूले ते चलत, रहै सुधि के थकित ह्वै।
बुरो जिन मानौ जौ न जानौ कहूँ सीखि लेहु,
रसना के छाले परैं प्यारे नेह–नाव छ्वै।।3।।

एरे बीर पौन, तेरो सबै ओर, गौन, बीरी
तो सो और कौन, मनैं दरकौंही बानि दै।
जगत के प्रान, ओछे बड़े सों समान घन–
आनंद–निधान, सुखदान दुखियानि दै।

जान उजियारे गुन–मारे अत मोही प्यारे
अब हवै अमोही बैठे, पीठि पहचानि दै।
बिरह–बिथाहि मूरि आँखिन मैं राखों पूरि
धूरि तिन पायन की हाहा। नेकु आनि दै।।4।।

प्रश्न और अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न

1. घनानन्द के काव्य का प्रमुख रस क्या है ?
2. घनानन्द हिन्दी साहित्य के इतिहास में किस काल के कवि माने जाते हैं ?
3. घनानंद के काव्य की भाषा है– (क) ब्रज, (ख) अवधी, (ग) खड़ी बोली।
4. घनानंद किस काव्यधारा के कवि थे ?
5. घनानंद ने किस नारी को संबोधित करके रचनाएँ लिखी हैं ?
6. चंदहिं चकोर में अलंकार है–
   (क) उत्प्रेक्षा, (ख) उपमा, (ग) अनुप्रास।

लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. घनानन्द जी ने प्रेम के मार्ग की क्या विशेषता बतलाई है ?
2. नायक ने, नायिका द्वारा भेजे गए पत्र के साथ क्या व्यवहार किया ?
3. विरही प्रियतम के लिए कवि ने चकोर का उपमान क्यों चुना है ?
4. कवि ने संदेश भेजने के लिए पवन को ही दूत क्यों बनाया है ?
5. घनानन्द के समकालीन पाँच कवियों के नाम लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. घनानन्द ने यह क्यों कहा है–तहाँ साँचै चलै तजि आपनपौ झझकैं कपटी जै निसाँक नहीं।
2. प्रेमिका द्वारा अपने प्रियतम को लिखे गए पत्र की क्या विशेषताएँ थीं ?
3. ''रसना के छाले परैं, प्यारे नेह नाँव छ्वै'' का क्या आशय है? इसे घनानन्द की विरह वेदना के संदर्भ में समझाइए।
4. घनानन्द जी पवन को क्या–क्या करने और लाने के लिए अनुरोध करते हैं ?
5. घनानंद के काव्य की पाँच विशेषताएँ लिखिए।

व्याख्या के प्रश्न–

1. इन पंक्तियों की संदर्भ प्रसंग सहित व्याख्या कीजिए–

(क) तुम कौन धौं पाटी पढ़े हो कहौं,
    मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।।

2. इस पंक्ति का आशय बताइए–
   विरह–बिथाहि मूरि आँखिन मैं राखों पूरि।
   धूरि तिन पायन की हाहा। नेकु आनि दै।।

शब्दार्थ

सूधो = सीधा।
सनेह = प्रेम।
सयानप = सयानापन।
बाँक = टेढ़ा।
निसांक = संशय रहित।
पन = प्रतिज्ञा, संकल्प।
जा मधि = जिस हृदय में।
सोधि = शुद्ध करना।
सुधारि = अच्छी विधि से।
है लेख्यो = लिखा है।
पचि कै = परेशान होकर।
ताहि = उसी प्रिय की।
हियो हित पत्र = हृदय रूपी प्रेम पत्र।
आन = अन्य।
न अवरेख्यौ = नहीं अंकित किया।
अप कथा = दूसरे की बात।
चंदहि = चन्द्रमा।
चकोर = एक पक्षी।
ससि = चन्द्रमा।
द्वै = दो।
सुधि = स्मृति।
रसना = जिह्वा।
छ्वै = छा जाना।
वीर = भाई।
पौन = पवन।
गौन = गमन।
बार = बीड़ा उठाने वाला, कार्य पूरा करने में उत्साह दिखाने वाला।
मनै = अपना मन दूसरों पर द्रवित करना।
जगत = संसार।
ओछे = छोटे, आनन्द।
आनंद निधान = आनन्द का कोश।
सुखदान = दुखियों को सुखी कर।
जान = सुजान।
उजियारे = दीप्तिमान, यशस्वी
गुन = गुण
अत = अन्यत्र, विदेश में।
पीठि = पहचान कर लेने पर भी पीठ फेरकर बैठ गए हैं।
विरह–बिथाहि मूरि = विरह की वेदना को दूर करने वाली जड़ी।
आँखिन मैं राखो पूरि = आँखों में भली–भाँति लगाऊँ।
धूरि तिन पायन की = प्रियतम के पावों की धूल।
नेकु आनि दै = थोड़ा सा लाकर मुझे दे दो।

अलंकार

अलंकार का सामान्य अर्थ होता है–आभूषण, जो किसी वस्तु को अलंकृत करे वह अलंकार है। कहा भी गया है– अलंकृतिलंकार। अलंकार के विषय में यह भी कहा गया है–चमत्कृतिरलंकार, अर्थात् काव्य में रमणीयता या चमत्कार उत्पन्न करने वाले तत्व को ही अलंकार कहते हैं। यह चमत्कार काव्य में शब्द और अर्थ के विशेष प्रयोग के कारण उत्पन्न होता है।

अलंकार के दो मुख्य प्रकार हैं– शब्दालंकार और अर्थालंकार। तीसरा भेद उभयालंकार हैं ।

शब्दालंकार–

जिस रचना में शब्दों के कारण चमत्कार उत्पन्न हो, उसे शब्दालंकार कहते हैं। शब्दालंकार में सौन्दर्य शब्द विन्यास में निहित होता है– शब्दालंकार के मुख्य उदाहरण हैं–अनुप्रास, यमक, वक्रोक्ति आदि।

अर्थालंकार–

जिस रचना में अर्थ के कारण चमत्कार होता है, वहाँ अर्थालंकार माना जाता है। अर्थालंकार में सौन्दर्य अर्थगत होता है, शब्दगत नहीं। व्यतिरेक, विरोधाभास, संदेह आदि अर्थालंकार के उदाहरण हैं।

उभयालंकार–

जिस रचना में शब्द और अर्थ दोनों में चमत्कार होता है, उसे उभयालंकार कहते हैं।

यहाँ पर कुछ अलंकारों का उदाहरण सहित विवरण प्रस्तुत है–

1. व्यतिरेक अलंकार–

जहाँ उपमेय को उपमान से बड़ा बताया जाये या श्रेष्ठ बताया जाय, वहाँ व्यतिरेक अलंकार होता है।

उदाहरण–

जन्म सिंधु पुनि बंधु विष,
दिन मलीन सकलंक।
सिय मुख समता पाव किमि
चन्द्र बापुरो रंक।।

इस उदाहरण में सीता का मुख उपमेय है और चन्द्रमा उपमान है। इस उपमान को सीता के मुख के सामने हीन बताया गया है, अतः यहाँ व्यतिरेक अलंकार है।

2. विरोधाभास–

जहाँ किसी पदार्थ, गुण या क्रिया में वास्तविक विरोध न होने पर भी विरोध का वर्णन हो, वहाँ विरोधाभास अलंकार होता है–

उदाहरण–

तंत्रीनाद, कवित्त रस, सरस राग, रति–रंग।
अनबूड़े बूड़े तरे, जै बूड़े सब अंग।

यहाँ पर न डूबने वाला डूब जाता है और डूबने वाला तर जाता है, क्रियाओं का परस्पर विरोध का आभास होता है पर वास्तव में विरोध है नहीं, अतः यहाँ पर विरोधाभास अलंकार है।

3. संदेह–

साम्य के कारण किसी वस्तु को देखकर, उसमें अनेक वस्तुओं का संदेह हो, वहाँ सन्देह अलंकार होता है। सामान्यतः या अथवा धौं, किंधौ किया, कै आदि शब्द संदेह अलंकार के वाचक होते हैं। जहाँ इन शब्दों का प्रयोग होता है, वहाँ सन्देह अलंकार होता है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं–

सारी बीच नारी है कि नारी बीच सारी है।
सारी ही कि नारी है कि नारी ही कि सारी है।।

इस उदाहरण में द्रौपदी की बढ़ती हुई साड़ी को देखकर अनेक सन्देह प्रकट किए गए हैं।

दूसरा उदाहरण है–

इन दूबों के टुनगों पर किसने मोती बिखराये।
या तारे नील गगन के, स्वच्छन्द विचरने आये ?

कई बार भ्रॉंतिमान और सन्देह अलंकारों में भ्रम होने लगता है, अतः इनमें अंतर समझ लेना चाहिए।

(1) भ्रॉंतिमान अलंकार में भ्रम के वाचक शब्द हैं– भ्रम, भरम या भ्रॉंति। सन्देह के वाचक शब्द हैं– कि, किंधों, या, अथवा, शायद, किया आदि।

(2) भ्रान्तिमान में झूठा निश्चय हो जाता है। जबकि सन्देह में दुविधा या अनिश्चय की स्थिति बनी रहती है।

(3) भ्रॉंतिमान का उदाहरण है–वह चन्द्रमा है (झूठा निश्चय) सन्देह का उदाहरण है–
मुख है कि चन्द्रमा (अनिश्चय की स्थिति)

4. विभावना–

जहाँ कारण के बिना कार्य हो या कारण के विपरीत कार्य का वर्णन हो, वहाँ विभावना अलंकार होता है।

उदाहरण के लिए–

बिनु पद चलै, सुनै बिनु काना।
कर बिनु कर्म, करै विधि नाना।।
आनन रहित सकल रस भोगी।
बिनु बानी, बेकता बड़ जोगी।।

5. दृष्टान्त–

जहाँ उपमेय और उपमान का धर्म सादृश्य दिखाया जाता है, वहाँ दृष्टांत अलंकार होता है। दृष्टांत अलंकार का उदाहरण प्रस्तुत है–

रहिमन अँसुवा नयन ढरि,
जिय दुःख प्रकट करेइ।
जाहि निकारो गेह ते,
कस न भेद कहि देइ।।

यहाँ आँसुओं और घर से निकाले जाने वाले व्यक्ति में कोई धर्म सादृश्य नहीं है, किन्तु भाव साम्य से ही यह कल्पना सार्थक हो गई है। जैसे घर से निकाला व्यक्ति, घर का भेद बता देता है, वैसे ही नयनों से बहने वाले आँसू हृदय की व्यथा–कथा कह देते हैं।

6. अन्योक्ति–

अन्योक्ति का तात्पर्य है अन्यउक्ति। वास्तविकता का लक्ष्य रख, किसी अन्य व्यक्ति या वस्तु का वर्णन जहाँ किया जाता है, वहाँ अन्योक्ति अलंकार होता है, अर्थात् जब किसी व्यक्ति या वस्तु का सीधा वर्णन न करके उसे लक्ष्य में रखकर किसी अन्य व्यक्ति या वस्तु का वर्णन किया जाये, तब अन्योक्ति अलंकार होता है। कुछ

उदाहरण इस प्रकार हैं–

(1) माली आवत देखकर, कलियन करी पुकार।
फूले फूले चुन लिए, काल्हि हमारी बार।।

(2) स्वारथु सुकृतु न श्रम वृथा, देखि विहंग विचारि।
बाज पराए पानि परि तू पच्छीनु न मारि।।

इकाई – 5

पाठ – 12
मैं तुम लोगों से दूर हूँ

गजानन माधव 'मुक्तिबोध'

परिचय–

जन्म– 13 नवम्बर 1917 ई. में जिला मुरैना के अंतर्गत श्योरपुर स्थान में।

शिक्षा–प्रारंभिक शिक्षा उज्जैन में, तत्पश्चात् बी. ए. इन्दौर में। एम. ए. नागपुर विश्वविद्यालय से किया। वे अध्यापन कार्य करते थे, साथ ही काव्य सृजन भी। देश के सभी प्रमुख पत्र–पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ छपती थीं। जीवन भर वे आर्थिक विपन्नता से जूझते रहे, परंतु अनवरत् साहित्य साधना करते रहे।

निधन– 11 सितम्बर 1964 ई.।

प्रमुख रचनाएँ–

गद्य – कामायनी एक पुनर्विचार, भारतीय इतिहास और संस्कृति, नई कविता का आत्मसंघर्ष, साहित्य का सौंदर्य।

पद्य– चाँद का मुंह टेढ़ा है, काठ का सपना, सतह से उठता हुआ आदमी, विपात्र, एक साहित्यिक की डायरी।

साहित्यिक विशेषताएँ–

(1) इन्होंनें अपनी रचनाओं में सामाजिक रूढ़ियों, अन्याय एवं शोषण का विद्रोह किया।

(2) मुक्तिबोध ने अपनी सृजन क्षमता एवं साहसिक लेखनी के सहारे अपनी अभिव्यक्ति को जो स्वरूप दिया है, वह सहज होते हुए भी विशिष्ट है।

(3) उन्होंने छायावाद की काल्पनिकता से एवं प्रगतिवाद के कोरे आदर्शवादी नारों से ऊपर उठकर तथा प्रयोगवाद की केवल प्रयोगिनी परंपरा की सीमाओं को तोड़कर, एक स्वतंत्र कवि के रूप में कविता की।

(4) उन्होंने निराला की मानवतावादी, परम्परा को आगे बढ़ाते हुए समाज के शोषण का तीव्र विरोध अपनी रचनाओं में किया।

(5) उनका काव्य शब्द भंडार से परिपूर्ण है।

(6) उनकी भाषा की शक्ति इनके द्वारा लिखित साहित्य को विशेष अर्थपूर्ण एवं चित्रमय बना देती है।

(7) उनके द्वारा किए गए चित्रण में स्पष्टता एवं नूतन शिल्प विधान का साक्षात्कार होता है।

भाषाशैली – इनकी भाषा में तत्सम एवं तद्भव शब्द चित्रण को स्पष्ट करते हैं। आवश्यकतानुसार स्पष्टता हेतु अंग्रेजी, फारसी, उर्दू शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। भाषा पर उनका पूर्ण अधिकार था।

बिम्ब विधान और प्रतीक योजना में नूतन शिल्पविधान का साक्षात्कार होता है। शैली सबसे अलग, नए प्रतीकों एवं नए संदर्भों से युक्त है।

साहित्य में स्थान – आधुनिक युग के नए कवियों में मुक्तिबोध का स्थान प्रथम पंक्ति में है। जीवन में उनकी अद्भुत सहनशीलता एवं रचनाओं में उत्कृष्ट कोटि की सृजनशीलता अत्यंत प्रशंसनीय है। उनका साहित्य पथ प्रदर्शक रहेगा, उन जीवन मूल्यों के लिए, जिनके लिए मुक्तिबोध सदैव संघर्ष करते रहे।

केन्द्रीय भाव – इस रचना में कवि ने सामाजिक व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य किया है। प्रतीकात्मकता के माध्यम से पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति आक्रोश व्यक्त किया है। आर्थिक विषमता का चित्रण किया है।

कविता–

मैं तुम लोगों से दूर हूँ

–गजानन माधव ''मुक्तिबोध''

मैं तुम लोगों से इतना दूर हूँ
तुम्हारी प्रेरणाओं से मेरी प्रेरणा इतनी भिन्न है
कि जो तुम्हारे लिए विष है, मेरे लिए अन्न है।
मेरी असंग स्थिति में चलता–फिरता साथ है,
अकेले में साहचर्य का हाथ है,
उनका जो तुम्हारे द्वारा गर्हित है
किंतु वे मेरी व्याकुल आत्मा से बिम्बित हैं, पुरस्कृत है
इसलिए तुम्हारा मुझ पर सतत् आघात है।।
सबके सामने और अकेले में
(मेरे रक्त भरे महाकाव्यों के पन्ने उड़ते हैं
तुम्हारे–हमारे इस सारे झमेले में)
असफलता का धूल–कचरा ओढ़े हूँ
इसलिए कि वह चक्करदार जीनों पर मिलती है
छल–छद्म धन की
किंतु मैं सीधी–सादी पटरी–पटरी पर दौड़ा हूँ
जीवन की।
फिर भी मैं अपनी सार्थकता से खिन्न हूँ
विष से अप्रसन्न हूँ
इसलिए कि जो है उससे बेहतर चाहिए
पूरी दुनिया साफ करने के लिए मेहतर चाहिए
वह मेहतर मैं हो नहीं पाता
पर रोज कोई भीतर चिल्लाता है
कि कोई काम बुरा नहीं
बशर्तें कि आदमी खरा हो।
फिर भी मैं उस ओर अपने को ढो नहीं पाता।
रेफ्रिजरेटरों, विटैमिनों, रेडियोग्रैमों के बाहर की
गतियों की दुनिया में
मेरी वह भूखी बच्ची मुनिया है, शून्यों में
पेटों की आँतों में न्यूनों की पीड़ा है
छाती के कोषों में रहितों की व्रीड़ा है।
शून्यों से घिरी हुई पीड़ा ही सत्य है
शेष सब अवास्तव, अयथार्थ मिथ्या है, भ्रम है
सत्य केवल एक है जो कि
दुखों का क्रम है
मैं कनफटा हूँ बैठा हूँ
सेब्रेलेट–डॉज के नीचे मैं लेटा हूँ
तेलिया लिवास में पुरजे सुधारता हूँ
तुम्हारी आज्ञाएँ ढोता हूँ।

शब्दार्थ

असंग स्थिति	=	अकेलापन।
विष	=	जहर।
साहचर्य	=	साथ।
गर्हित	=	निंदित।
आघात	=	चोट।
सतत	=	लगातार।
जीनों	=	सीढ़ियों।
छल–छद्म	=	धोखा।
खिन्न	=	दुखी।
बेहतर	=	अच्छा।
खरा	=	सच्चा।
पीड़ा	=	कष्ट।
मिथ्या	=	झूठ।

अभ्यास के प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. मुक्तिबोध किस धारा के कवि हैं ?
2. कवि के अनुसार पूरी दुनिया साफ करने के लिए किसकी आवश्यकता है ?
3. कवि ने किस पीड़ा को सत्य माना है ?
4. कवि के अनुसार तेलिया लिबास पहनकर क्या काम किया जाता है ?
5. कवि ने किस क्रम को सत्य माना है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. 'तुम्हारी प्रेरणाओं से मेरी प्रेरणा इतनी भिन्न है' से कवि का क्या तात्पर्य है ?
2. 'असफलता' के धूल कचरे से कवि का क्या आशय है ?
3. 'पूरी दुनिया साफ करने के लिए मेहतर चाहिए' कथन में कवि क्या कहना चाहते हैं ?
4. 'कोई काम बुरा नहीं बशर्तें कि आदमी खरा' हो से कवि का क्या अभिप्राय है ?
5. 'रहितों की व्रीड़ा है।' में कवि की कौन–सी भावना परिलक्षित हो रही है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

1. इस कविता में ''मैं तुम लोगों'' एवं ''इतना दूर'' से कवि का क्या अभिप्राय है?
2. 'मैं सीधी–सादी पटरी–पटरी दौड़ा हूँ' में कवि क्या कहना चाहते हैं ?
3. 'पेटों की आँतों में न्यूनों की पीड़ा है।' में समाज के किस वर्ग की ओर संकेत किया है? समझाइए।
4. ''दुखों के क्रम'' को ही क्यों सत्य माना है ?
5. प्रतीकों से आप क्या समझते हैं? इस कविता के प्रतीक विधान पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

(अ) फिर भी मैं अपनी ....विष से अप्रसन्न हूँ।

(ब) मेरी असंग स्थिति.........सतत् आघात है।

पाठ – 13
चीनी फेरी वाला

महादेवी वर्मा

परिचय–

जन्म– उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद में, 1907 में हुआ। **शिक्षा–** 1933 में प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की।

संगीत, दर्शन, चित्रकला में अत्यधिक रुचि। विविध साहित्यिक, शैक्षिक एवं सामाजिक सेवाओं के लिए भारत सरकार ने 'पद्मभूषण' से अलंकृत किया।

निधन – 11 सितम्बर, सन् 1987।

गद्य और पद्य दोनों क्षेत्रों में महादेवी जी का समान अधिकार था।

कविता संग्रह – नीहार, रश्मि, नीरजा, यामा, सांध्यगीत, दीपशिखा।

गद्य रचनाएँ – अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएँ, श्रृंखला की कड़ियाँ आदि।

साहित्यिक विशेषताएँ –

1. इनके संस्मरणों में कल्पना की मात्रा कम, अनुभूतियों की मात्रा अधिक है।
2. संस्मरणों में समाज की स्वार्थपरता पर आक्रोश अभिव्यंजित है।
3. श्रृंखला की कड़ियों में आधुनिक नारी समस्याओं को प्रभावपूर्ण भाषा में प्रस्तुत कर, उन्हें सुलझाने का मार्ग निर्दिष्ट किया है।
4. महादेवी जी ने रहस्यवाद की मूल–प्रवृत्ति वेदना भाव के माध्यम से असीम और ससीम तथा आत्मा और परमात्मा के संबंध को जिस कलात्मक ढंग से व्यक्त किया है, वह अद्वितीय है और इस कारण वे आधुनिक युग की सर्वश्रेष्ठ, रहस्यवादी कवयित्री हैं।

भाषा शैली– महादेवी जी की भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है। उनके गद्य की भाषा संस्कृतनिष्ठ होते हुए भी सरस एवं प्रवाहपूर्ण है। उनका शब्द चयन प्रभावी एवं चित्रात्मक है। उनकी गद्यशैली के दो रूप हैं, विचारात्मक एवं भावात्मक। विचारात्मक गद्य में तर्क, विश्लेषण एवं भावात्मक गद्य में कल्पना और अलंकृत वर्णनों की प्रधानता है।

हिन्दी गद्य साहित्य में संस्मरण और रेखाचित्र लेखन परंपरा को प्रारंभ करने का श्रेय महादेवी जी को है।

साहित्य में स्थान –

महादेवी जी छायावादी युग की प्रसिद्ध कवयित्री हैं, उन्होंने अपने छायावादी काव्य में प्रकृति का मानवीकरण कर, उसे एक विशेष भाव–समृद्धि और गीति–सौष्ठव से विभूषित किया है। हिन्दी गद्य साहित्य में संस्मरण और रेखाचित्र लेखन परंपरा प्रारंभ करने का श्रेय महादेवी जी को है। साहित्य के सनातन उद्देश्य सत्यं शिवं सुंदरम् का निरूपण जिस परिमार्जित, सुबोध एवं स्पष्ट शैली में महादेवी जी के साहित्य में हुआ है, वह अत्यंत दुर्लभ है। उनकी कृतियाँ कालजयी हैं।

केन्द्रीय भाव –

प्रस्तुत रेखाचित्र में महादेवी जी ने विधाता द्वारा प्रताड़ित और सभी स्नेह से वंचित एक चीनी यात्री की करुण कथा को अत्यंत मार्मिक ढंग से चित्रित किया है। इस कथा के साथ लेखिका का करुणामय एवं स्नेहात्मक व्यक्तित्व भी प्रतिबिम्बित हो उठा है।

चीनी फेरीवाला

महादेवी वर्मा

मुझे चीनियों में पहचान कर स्मरण रखने योग्य विभिन्नता कम मिलती है। कुछ समतल मुख एक ही साँचे में ढले से जान पड़ते हैं और उनकी एकरसता दूर करने वाली, वस्त्र पर पड़ी हुई सिकुड़ने जैसी नाक के गठन में भी विशेष अंतर नहीं दिखाई देता। कुछ तिरछी, अधखुली और विरल भूरी बरौनियों वाली आँखों की तरल रेखाकृति देखकर भ्रांति होती है, कि सब एक नाप के अनुसार किसी तेजधार से चीरकर बनाई गई हैं। स्वाभाविक पीत–वर्ण धूप के चरण–चिन्ह पर पड़े हुए धूल के आवरण के कारण कुछ ललछहे सूखे पत्ते की समानता पा लेता है। आकार–प्रकार, वेश–भूषा सब मिलकर इन दूर–देशियों को यंत्रचालित पुतलों की भूमिका दे देते हैं, इसी से अनेक बार देखने पर एक फेरीवाले चीनी को दूसरे से भिन्न करके पहचानना कठिन है।

पर आज मुखों की एकरूप समष्टि में मुझे एक मुख आर्द्र नीलिमामयी आँखों के साथ स्मरण आता है, जिसकी मौन भंगिमा कहती है– हम कार्बन की कॉपियाँ नहीं हैं। हमारी भी एक कथा हैं। यदि जीवन की वर्णमाला के संबंध में तुम्हारी आँखें निरक्षर नहीं, तो तुम पढ़कर देखो न।

कई वर्ष पहले की बात है। मैं ताँगे से उतरकर भीतर आ रही थी और भरे कपड़े का गट्ठर बाँयें कंधे के सहारे पीठ पर लटकाये हुए और दाहिने हाथ में लोहे का गज घुमाता हुआ चीनी फेरीवाला फाटक से बाहर निकल रहा था। संभवतः मेरे घर को बंद पाकर वह लौटा जा रहा था। 'कुछ लेगा मेमसाब' दुर्भाग्य का मारा चीनी। उसे क्या पता कि यह संबोधन मेरे मन में रोष की सबसे तुंग तरंग उठा देता है। मइया, माता, जीजी, दिदिया, बिटिया आदि न जाने कितने संबोधनों से मेरा परिचय है और सब मुझे प्रिय हैं, पर यह विजातीय संबोधन मानो सारा परिचय छीनकर मुझे गाउन में खड़ा कर देता है। इस संबोधन के उपरांत मेरे पास से निराश होकर न लौटना, असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है।

मैंने अवज्ञा से उत्तर दिया – 'मैं विदेशी फॉरेन नहीं खरीदती'। हम फॉरेन हैं ? 'हम तो चाइना से आता है' कहने वाले के कंठ में सरल विस्मय के साथ उपेक्षा की चोट से उत्पन्न चोट भी थी। इस बार रुक कर उत्तर देने वाले को ठीक से देखने की इच्छा हुई। धूल से मटमैले सफेद किरमिच के जूते में छोटे पैर छिपाए पतलून और पैजामे का संमिश्रित परिणाम जैसा पैजामा और कुरते तथा कोट की एकता के आधार पर सिला कोट पहने, उधड़े हुए किनारों से पुरानेपन की घोषणा करते हुए हैट से आधा माथा ढके, दाढ़ी–मूँछ–विहीन, दुबली, नाटी जो मूर्ति खड़ी थी, वह तो शाश्वत चीनी है। उसे सबसे अलग करके देखने का प्रश्न जीवन में पहली बार उठा।

मेरी उपेक्षा से उस विदेशी को चोट पहुँची, यह सोचकर मैंने अपनी 'नहीं' को और अधिक कोमल बनाने का प्रयास किया, 'मुझे कुछ नहीं चाहिए भाई।' चीनी भी विचित्र निकला, 'हमको भाय बोला है तब जरूर लेगा–जरूर हाँ ?' 'होम करते हाथ जला' वाली कहावत हो गयी। विवश होकर कहना पड़ा–'देखूँ तुम्हारे पास है क्या ? चीनी बरामदे में कपड़े का गट्ठर उतारता हुआ कह चला–'भोत अच्छा सिल्क लाता है सिस्तर ! चाइना सिल्क, क्रेप'......बहुत कहने–सुनने के उपरांत दो मेजपोश खरीदना आवश्यक हो गया। सोचा–चलो छुट्टी हुई। इतनी कम बिक्री होने के कारण चीनी अब कभी इस ओर आने की भूल न करेगा।

पर कोई पन्द्रह दिन बाद बरामदे में अपनी गठरी पर बैठकर गज को फर्श पर बजा–बजाकर गुनगुनाता हुआ मिला। मैंने उसे बोलने का अवसर देकर व्यस्त भाव से कहा– 'अब तो मैं कुछ न लूँगी।' समझे, चीनी खड़ा होकर जेब से कुछ निकालता हुआ प्रफुल्ल मुद्रा से बोला–सिस्तर का वास्ते हैंकी लाता है– 'भोत बेस्त, सब सेल हो गया है। हम इसको पाकेत में छिपा के लाता है।'

देखा, कुछ रूमाल थे। ऊदी रंग के डोरे से भरे हुए किनारों का हर घुमाव और कोनों में उसी रंग से बने नन्हें फूलों की प्रत्येक पंखुड़ी चीनी, नारी की कोमल ऊँगलियों की कलात्मकता ही नहीं जीवन के अभाव की करुण कहानी भी कह रही थी। मेरे मुख के निषेधात्मक भाव को लक्ष्य कर अपनी नीली रेखाकृति आँखों को जल्दी–जल्दी बंद करते और खोलते हुए वह एक साँस में 'सिस्तर का वास्ते लाता है, सिस्तर के वास्ते लाता है' दोहराने तिहराने लगा।

मन में सोचा–अच्छा भाई मिला है। बचपन में मुझे लोग चीनी कहकर चिढ़ाया करते थे। संदेह होने लगा, उस चिढ़ाने में कोई तत्व भी रहा होगा। अन्यथा आज यह सचमुच का चीनी, सारे इलाहाबाद को छोड़कर मुझसे बहिन का संबंध क्यों जोड़ने आता। पर उस दिन से चीनी को मेरे यहाँ जब–तब आने का विशेष अधिकार प्राप्त हो गया। चीन का साधारण श्रेणी का व्यक्ति भी कला के संबंध में विशेष अभिरुचि रखता है, इसका पता भी उसी चीनी की परिष्कृत रुचि में मिला।

नीली दीवार पर किस रंग के चित्र सुंदर जान पड़ते हैं, हरे कुशन पर किस प्रकार के पक्षी अच्छे लगते हैं, सफेद पर्दे के कोनों में किस बनावट के फूल–पत्ते खिलेंगे आदि के विषय में चीनी उतनी ही जानकारी रखता था, जितनी किसी अच्छे कलाकार में मिलेगी। रंग से उसका अति परिचय यह विश्वास उत्पन्न कर देता था कि वह आँखों पर पट्टी बाँध देने पर भी स्पर्श से रंग पहचान लेगा।

चीन के वस्त्र, चीन के चित्र आदि की रंगमयता देखकर भ्रम होने लगता है कि वहाँ मिट्टी का हर कण भी इन्ही रंगों से रंगा हुआ न हो। चीन देखने की इच्छा प्रकट करते ही 'सिस्तर का वास्ते हम चलेगा।' कहते–कहते चीनी की आँखों की नीली रेखा प्रसन्नता से उजली हो उठती थी।

अपनी कथा सुनाने के लिये भी वह विशेष उत्सुक रहा करता था, पर कहने–सुनने वाले के बीच की खाई बहुत गहरी थी। उसे चीनी और बर्मी भाषाएँ आती थीं, जिनके संबंध में अपनी सारी विद्या–बुद्धि के साथ 'मैं आँखों के अंधे नाम नैनसुख' की कहावत चरितार्थ करती थी। अंग्रेजी की क्रियाहीन संज्ञाएँ और हिन्दुस्तानी की संज्ञाहीन क्रियाओं के संमिश्रण से जो विचित्र भाषा बनती थी, उसमें कथा का सारा मर्म बंध नहीं पाता था, पर जो कथाएँ ह्रदय का बाँध तोड़कर दूसरों को अपना परिचय देने के लिए बह निकलती हैं, वे प्रायः करुण होती हैं और करुणा की भाषा शब्दहीन रहकर भी बोलने में समर्थ है। चीनी फेरीवाले की कथा भी इसका अपवाद नहीं।

जब उसके माता–पिता ने मांडले आकर चाय की दुकान खोली तब उसका जन्म नहीं हुआ था। उसे जन्म देकर और सात वर्ष की बहिन के संरक्षण में छोड़कर जो परलोक सिधारी, उस अनदेखी माँ के प्रति चीनी की श्रद्धा अटूट थी।

संभवतः माँ ही ऐसा प्राणी है, जिसे कभी न देख पाने पर भी मनुष्य ऐसे स्मरण करता है, जैसे उसके संबंध में कुछ जानना बाकी नहीं। यह स्वाभाविक भी है। मनुष्य को संसार से बाँधनेवाला विधाता माँ ही है। इसी से उसे न मानकर संसार को न मानना सहज है, पर संसार

को मानकर उसे न मानना असंभव ही रहता है।

पिता ने जब दूसरी बर्मी चीनी स्त्री को गृहणी पद पर अभिषिक्त किया, तब उन मातृहीनों की यातना की कठोर कहानी आरंभ हुई। दुर्भाग्य इतने से ही संतुष्ट नहीं हो सका, क्योंकि उसके पाँचवें वर्ष में पैर रखते न रखते एक दुर्घटना में पिता ने भी प्राण खोए।

अन्य अबोध बालकों के समान उसने सहज ही अपनी परिस्थितियों से समझौता कर लिया, पर बहिन और विमाता में किसी प्रस्ताव को लेकर जो वैमनस्य बढ़ रहा था, वह इस समझौते को उत्तरोत्तर विषाक्त बनाने लगा। किशोरी बालिका की अवज्ञा का बदला उसी को नहीं, उसके अबोध भाई को कष्ट देकर भी चुकाया जाता था। अनेक बार उसने ठिठुरती हुई बहिन की कंपित उँगलियों में अपना हाथ रख, उसके मलिन वस्त्रों में अपना आँसुओं से धुला मुख छिपा और उसकी छोटी–सी गोद में सिमटकर भूख भुलाई थी। कितनी ही बार सबेरे, आँख मूँदकर बंद द्वार के बाहर दीवार से टिकी हुई बहिन की ओर से गीले बालों में, अपनी ठिठुरी हुई उँगलियों को गर्म करने का व्यर्थ प्रयास करते हुए, उसने पिता के पास जाने का रास्ता पूछा था। उत्तर में बहिन के फीके गाल पर चुपचाप ढलक आने वाले आँसू की बड़ी बूँद देखकर वह घबराकर बोल उठा था–उसे कहना नहीं चाहिए, वह तो पिता को देखना भर चाहता है।

कई बार पड़ोसियों के यहाँ रकाबियाँ धोकर और काम के बदले भात माँगकर बहिन ने भाई को खिलाया था। व्यथा की कौन–सी अंतिम यात्रा ने बहिन के नन्हें हृदय का बाँध तोड़ डाला, इसे अबोध बालक क्या जाने। पर एक रात उसने बिछौने पर लेटकर बहिन की प्रतीक्षा करते–करते आधी आँख खोली और विमाता को कुशल बाजीगर की तरह, मैली कुचैली बहिन का कायापलट करते देखा। उसके सूखे ओठों पर विमाता की मोटी उँगली ने दौड़–दौड़कर लाली फेरी, उसके फीके गालों पर चौड़ी हथेली ने घूम–घूम सँवारा और तब नए रंगीन वस्त्रों से सजी हुई उस मूर्ति को एक प्रकार से ठेलती हुई विमाता रात के अंधकार में बाहर अंतर्निहित हो गई।

बालक का विस्मय भय में बदल गया और भय ने रोने में शरण पाई। कब वह रोते–रोते सो गया, इसका पता नहीं, पर जब वह किसी के स्पर्श से जागा, तो बहिन उस गठरी बने भाई के मस्तक पर मुख रखकर सिसकियाँ रोक रही थीं। उस दिन उसे अच्छा भोजन मिला, दूसरे दिन कपड़े, तीसरे दिन खिलौने पर बहिन के दिनों–दिन विवर्ण होने वाले होठों पर अधिक गहरे रंग की आवश्यकता पड़ने लगी, उसके उत्तरोत्तर फीके पड़ने वाले गालों पर देर रात तक पाउडर मला जाने लगा।

बहिन के छीजते शरीर और घटती शक्ति का अनुभव बालक करता था, पर किससे कहे, क्या कहे। यह उसकी समझ से बाहर की बात थी। बार–बार सोचता था, पिता का पता मिला जाता, तो सब ठीक हो जाता। उसके स्मृति–पट पर माँ की कोई रेखा नहीं, परन्तु पिता का जो अस्पष्ट चित्र अंकित था, उससे उनके स्नेहशील होने में संदेह नहीं रह जाता। प्रतिदिन निश्चय करता कि दुकान में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति से पिता का नाम पूछेगा और एक दिन चुपचाप उनके पास पहुँचकर और उसी तरह चुपचाप उन्हें घर लाकर खड़ा कर देगा, तब यह विमाता कितनी डर जाएगी और बहिन कितनी प्रसन्न होगी।

चाय की दुकान का मालिक अब दूसरा था, परन्तु मालिक के पुत्र के साथ उसके व्यवहार में सहृदयता कम नहीं रही, इसी से बालक एक

कोने में सिकुड़कर खड़ा हो गया और आने वालों से हकला–हकला कर पिता का पता पूछने लगा। कुछ ने उसे आश्चर्य से देखा, कुछ मुस्करा दिए, पर दो–एक ने दुकानदार से कुछ ऐसी बात की, जिससे वह बालक को ही हाथ पकड़कर बाहर ही नहीं छोड़ आया, इस भूल की पुनरावृत्ति होने पर विमाता से दण्ड दिलाने की धमकी भी दे गया। इस प्रकार उसकी खोज का अंत हुआ।

बहिन का संध्या होते ही कायापलट, फिर उसका आधी रात बीत जाने पर भारी पैरों से लौटना, विशाल शरीर वाली विमाता जंगली बिल्ली की तरह हल्के पैरों से बिछौने से उछलकर उतर आना, बहिन के शिथिल हाथों से बटुए का छिन जाना और उसका भाई के मस्तक पर मुख रखकर स्तब्ध भाव से पड़े रहना आदि क्रम ज्यों के त्यों चलते रहे।

पर एक दिन बहिन लौटी ही नहीं। सबेरे विमाता को कुछ चिंतित भाव से खोजते देख बालक सहसा किसी अज्ञात भय से सिहर उठा। उसकी एक मात्र आधार बहिन थी। पिता का पता न पा सका और अब बहिन भी खो गई। वह जैसा था, वैसा ही बहिन को खोजने के लिए गली–गली में मारा–मारा फिरने लगा। रात में वह जिस रूप में परिवर्तित हो जाती थी, उसमें दिन को पहिचान सकना कठिन था, इसी से वह जिसे अच्छे कपड़े पहने हुए जाता देखता, उसके पास पहुँचने के लिए सड़क के एक ओर से दूसरी ओर दौड़ पड़ता। कभी किसी से टकराकर गिरते–गिरते बचता, कभी किसी से गाली खाता, कभी कोई दया से प्रश्न कर बैठता–क्या इतना जरा सा लड़का भी पागल हो गया ?

इसी प्रकार भटकता हुआ वह गिरहकटों के हाथ लगा और तब उसकी दूसरी शिक्षा आरंभ हुई। जैसे लोग कुत्ते को दो पैरों से बैठना, गर्दन ऊँची कर खड़ा होना, मुँह पर पंजे रखकर सलाम करना आदि करतब सिखाते हैं, उसी प्रकार वे सब उसे तम्बाकू के धुएँ और दुर्गन्धित साँस से भरे और चिथड़े, टूटे बरतन और मैले शरीरों से बसे हुए कमरे में बंद कर कुछ विशेष संकेतों और हँसने रोने के अभिनय में पारंगत बनाने लगे।

कुत्ते के पिल्ले के समान ही वह घुटनों के बल खड़ा रहता और हँसने–रोने की विविध मुद्राओं का अभ्यास करता। हँसी का स्रोत इस प्रकार सूख चुका था कि अभिनय में भी वह बार–बार भूल करता और मार खाता। पर क्रन्दन उसके भीतर इतना अधिक उमड़ा रहता था कि जरा मुँह बनाते ही दोनों आँखों से दो गोल–गोल बूँदें नाक के दोनों ओर निकल आतीं और पतली सामानांतर रेखा बनाती और मुँह के दोनों सिरों को छूती हुई ठुट्डी के नीचे फैल जातीं। इसे अपनी दुर्लभ शिक्षा का फल समझकर, रोओं से काले उदर पर पीला सा रंग बाँधने वाला उसका शिक्षक प्रसन्नता से उछलकर एक लात जमाकर पुरस्कार देता।

वह दल, बर्मी, चीनी, श्यामी आदि का संमिश्रण था, इसी से चोरों की बारात में अपनी–अपनी होशियारी के सिद्धांत का पालन बड़ी सतर्कता से हुआ करता । जो उस पर कृपा रखते थे, उनके विरोधियों का संदेहपात्र होकर पिटना भी उसका परम कर्तव्य हो जाता था। किसी की कोई वस्तु खोते ही उस पर संदेह की ऐसी दृष्टि आरंभ होती कि बिना चुराए ही वह चोर समान काँपने लगता और तब उस 'चोर के घर छिछोरे' की जो मरम्मत होती थी, उसका स्मरण करके चीनी की आँखें आज भी व्यथा और अपमान से धक–धक जलने लगती थीं।

सबके खाने के पात्र में बचा उच्छिष्ट एक तामचीनी के टेढ़े–मेढ़े बरतन में, सिगार से जगह–जगह जले हुए कागज से ढँककर रख

दिया जाता था, जिसे वह हरी आँखों वाली काली बिल्ली के साथ मिलकर खाता था।

बहुत रात गये तब उनके नरक के साथी एक–एक कर आते रहते और अँगीठी के पास सिकुड़कर लेटे हुए बालक को ठुकराते हुए निकल जाते। उनके पैरों की आहट को पढ़ने का उसे अच्छा अभ्यास हो चला था,। जो हल्के पैरों को जल्दी–जल्दी रखता हुआ आता है, उसे बहुत कुछ मिल गया है, जो शिथिल पैरों को घसीटता हुआ लौटता है, वह खाली हाथ है जो दीवार को टटोलता हुआ लड़खड़ाते पैरों से बढ़ता है, वह शराब में सब खोकर बेसुध आया है, जो देहली से ठोकर खाकर धम–धम पैर रखता हुआ घुसता है, उसने किसी से झगड़ा मोल ले लिया है आदि का ज्ञान उसे अनजाने में ही प्राप्त हो गया था।

यदि दीक्षांत संस्कार के उपरांत विद्या के उपयोग का श्री गणेश होते ही उसकी भेंट पिता के परिचित एक चीनी व्यापारी से न हो जाती तो इस साधना से प्राप्त विद्वता का क्या अंत होता, यह बताना कठिन है। पर संयोग ने उसके जीवन की दिशा को इस प्रकार बदल दिया कि वह कपड़े की दुकान पर व्यापारी की विद्या सीखने लगा।

प्रशंसा के पुल बाँधते–बाँधते वर्षों पुराना कपड़ा सबसे पहले उठा लाता, गज से इस तरह नापता कि जो बराबर भी आगे न बढ़े चाहे अंगुल भर पीछे रह जाय, रुपये से लेकर पाई तक को खूब देखभाल कर लेना और लौटते समय पुराने खोटे पैसे विशेष रूप से खनका–खनकाकर दे डालना आदि का ज्ञान कम रहस्मय नहीं था। पर मालिक के साथ भोजन मिलने के कारण, बिल्ली के संग उच्छिष्ट सहभोग की आवश्यकता नहीं रही और दुकान में सोने की व्यवस्था होने से अँगीठी के पास ठोकरों से पुरस्कृत होने की विवशता जाती रही। चीनी छोटी अवस्था में ही समझ गया था कि धन संचय से संबध रखने वाली सभी विद्याएँ एक सी हैं पर मनुष्य किसी का प्रयोग प्रतिष्ठापूर्वक कर सकता है और किसी का छिपाकर।

कुछ अधिक समझदार होने पर उसने अपनी अभागी बहन को ढूँढने का बहुत प्रयत्न किया, पर उसका पता न पा सका। ऐसी बालिकाओं का जीवन खतरे से खाली नहीं रहता। कभी वे मूल्य देकर खरीदी जाती हैं और कभी बिना मूल्य के गायब कर दी जाती हैं। कभी वे निराश होकर आत्महत्या कर लेती हैं और कभी शराबी ही नशे में उन्हें जीवन से मुक्त कर देते हैं। उस रहस्य सूत्रधारिणी विमाता भी संभवतः पुनर्विवाह कर किसी और को सुखी बनाने के लिए कहीं दूर चली गई थी। इस प्रकार उस दिशा में खोज का मार्ग ही बंद हो गया।

इसी बीच मालिक के काम से चीनी रंगून आया, फिर दो वर्ष कलकत्ते में रहा और तब अन्य साथियों के साथ उसे इस ओर आने का आदेश मिला। यहाँ शहर में एक चीनी जूतेवाले के घर ठहरा है और सबेरे आठ से बारह और दो से छह बजे तक फेरी लगाकर बेचता रहता है।

चीनी की दो इच्छाएँ हैं, ईमानदार बनने की और बहिन को ढूँढ लेने की। जिसमें से एक की पूर्ति तो स्वयं उसी के हाथ में और दूसरी के लिए वह प्रतिदिन भगवान बुद्ध से प्रार्थना करता है।

बीच–बीच में वह महीनों के लिए बाहर चला जाता था पर लौटते ही 'सिस्तर का वास्ते ई लाता है' – कहता हुआ कुछ लेकर उपस्थित हो जाता। इस प्रकार उसे देखते–देखते मैं इतनी अभ्यस्त हो चुकी थी कि जब एक दिन वह 'सिस्तर का वास्ते' कहकर और शब्दों की खोज करने लगा तब मैं कठिनाई न समझकर हँस

पड़ी। धीरे–धीरे पता चला बुलावा आया है, वह लड़ने के लिए चाइना जायेगा। इतनी जल्दी कपड़े, कहाँ बेचे और न बेचने पर मालिक को हानि पहुँचाकर बेईमान कैसे बने। यदि मैं उसे आवश्यक रूपया देकर सब कपड़े ले लूँ, तो वह मालिक का हिसाब चुकता कर तुरंत देश की ओर चल दे।

किसी दिन पिता का पता पूछने जाकर वह हकलाता था– आज भी संकोच से हकला रहा था। मैंने सोचने का अवकाश पाने के लिये प्रश्न किया – 'तुम्हारे तो कोई है ही नहीं, फिर बुलावा किसने भेजा ? चीनी की आँखें विस्मय से भरकर पूरी खुल गईं –'हम कब बोला, हमारा चाइना नहीं है, हम कब ऐसा बोला 'सिस्तर', मुझे स्वयं अपने प्रश्न पर लज्जा आई, उसका इतना बड़ा चीन रहते वह अकेला कैसे होगा ?

मेरे पास रुपया रहना ही कठिन है, अधिक रुपये की चर्चा ही क्या ? पर कुछ अपने पास खोज ढूँढकर कुछ दूसरों से उधार लेकर मैंने चीनी के जाने का प्रबंध किया। मुझे अंतिम अभिवादन कर जब वह चंचल पैरों से जाने लगा, तब मैंने पुकार कर कहा – 'यह गज तो लेते जाओ' –चीनी सहज स्मित के साथ घूमकर 'सिस्तर का वास्ते' ही कह सका। शेष शब्द उसके हकलाने में खो गए।

और आज कई वर्ष हो चुके हैं –चीनी को फिर देखने की संभावना नहीं, उसकी बहन से मेरा कोई परिचय नहीं पर न जाने क्यों वे दोनों भाई–बहन मेरे लिये स्मृति पट से हटते ही नहीं।

चीनी की गठरी में से कई थान में अपने ग्रामीण बालकों के कुरते बना–बनाकर खर्च कर चुकी हूँ, परंतु अब भी तीन थान मेरी अलमारी में रखे हैं और लोहे का गज दीवार के कोने में खड़ा है। एक बार जब इन थानों को देखकर खादी भक्त बहन ने आक्षेप किया था– जो लोग बाहर में विशुद्ध खद्दरधारी होते हैं, वे भी विदेशी रेशम के थान खरीदकर रखते हैं, इसी से तो देश की उन्नति नहीं होती। तब मैं बड़े कष्ट से हँसी रोक सकी थी।

वह जन्म का दुखिया मातृ–पितृहीन और बहिन से बिछड़ा हुआ, चीनी भाई अपने समस्त स्नेह के एक मात्र आधार चीन में पहुँचने का आत्मसंतोष पा गया है, इसका कोई प्रमाण नहीं, पर मेरा मन यही कहता है।

शब्दार्थ

पीत	=	पीला।
तुंग	=	ऊँची।
विमाता	=	सौतेली माँ।
यातना	=	कष्ट।
मलिन	=	मैले।
छीजते	=	कमजोर होते।
गिरहकट	=	जेबकतरे।
उच्छिष्ट	=	जूठा।
श्रीगणेश	=	प्रारंभ ।
विवर्ण	=	फीका, निस्तेज।
पारंगत	=	निपुण।
आत्मसंतोष	=	स्वयं में संतुष्ट होना ।
आक्षेप	=	दोषारोपण।

अभ्यास के प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. ''चीनी फेरीवाला''रचना किस विधा की है ?
2. महादेवी जी के मन में रोष की तुंग तरंग क्यों उठी ?
3. महादेवी वर्मा जी के साथ 'होम करते हाथ जले' वाली कहावत कैसे लागू हुई ?
4. 'सिस्तर के वास्ते लाता है' चीनी यात्री के ऐसा बोलने पर लेखिका को बचपन की कौन सी बात याद आई ?
5. चीनी फेरीवाला चाइना क्यों लौटना चाहता था ?

लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. माँ के प्रति चीनी की भावना कैसी थी ?
2. चीनी की कौन–सी दो इच्छाएँ थीं ? किस इच्छा की पूर्ति के लिए वह भगवान से प्रार्थना करता था ?
3. चीनी के गिरहकट जीवन का अंत कैसे हुआ?
4. चीनी की बहिन की खोज का रास्ता कैसे बंद हुआ ?
5. चीनी के जाने के बाद महादेवी जी का मन क्या कहता था ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. चीनी का बचपन कैसे बीता, संक्षेप में बताइये?
2. गिरहकटों के गिरोह में चीनी फेरीवाले को क्या–क्या कटु अनुभव हुए, इन अनुभवों से उसने क्या सीखा ?
3. चीनी फेरीवाले के साथ महादेवी जी का स्नेह संबंध किस प्रकार प्रगाढ़तर होता चला गया ? संक्षेप में लिखिए।
4. चीनी फेरीवाला अपने देश वापस क्यों चला गया ? लेखिका ने उसे किस प्रकार सहायता दी ?
5. प्रस्तुत पाठ को रेखाचित्र क्यों कहा गया ? संस्मरण और रेखाचित्र में अंतर स्पष्ट करते हुए, उदाहरण दीजिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न–

(अ) ''पर आज मुखों की............पढ़कर देखो न।''

(ब) मुनष्य को संसार......................रहता है।''

हिन्दी साहित्य के कालों का संक्षिप्त इतिहास

प्रत्येक देश का साहित्य तत्कालीन समाज की चित्तवृत्ति का दर्पण होता है। चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ–साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता जाता है। इन्हीं वृत्तियों को परखते हुए हिन्दी साहित्य के इतिहास को देखा जाए, तो आधुनिक युग के पूर्व का हिन्दी साहित्य का इतिहास अधिकांशतः पद्य साहित्य का इतिहास ही है। हिन्दी साहित्य का इतिहास प्रायः 1000 वर्ष पुराना है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के व्यवस्थित इतिहास का श्रीगणेश सन् 933 से माना है एवं उसे चार कालों में विभक्त किया है।

(1) आदिकाल या वीरगाथा काल–
(सन् 933 से 1318 तक)

(2) पूर्व मध्यकाल या भक्तिकाल–
(सन् 1318 से 1643 ई. तक)

(3) उत्तर मध्यकाल या रीतिकाल–
(सन् 1643 से 1843 तक)

(4) आधुनिक काल–
(सन् 1843 से अब तक)

(1) आदिकाल–

हिन्दी साहित्य में आदिकाल से ही काव्यमयी अभिव्यक्ति मिलती है। राज्याश्रय में रहने वाले भाट या चारण अपने आश्रयदाता राजाओं की वीरता का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन करके अपनी राजभक्ति का परिचय देते थे। वीरकथा की प्रमुखता के कारण इस काल को वीरगाथा काल कहा जाता है। रासो ग्रंथ की प्रमुखता के कारण इस काल को रासो काल भी कहा जाता है।

भाषा– रासो काव्य राजस्थानी डिंगल भाषा में हैं।

विद्यापति ने मैथिली में पद तथा अपभ्रंश में दो ग्रंथ लिखे हैं। जैन आचार्यों तथा योगमार्गी बौद्धों ने अपभ्रंश का प्रयोग किया है। नागपंथियों की भाषा में अपभ्रंश, राजस्थानी तथा खड़ी बोली का मिश्रण है तथा अमीर खुसरो ने खड़ी बोली में रचनाएँ की हैं।

प्रमुख रचनाएँ –

(1)	पृथ्वीराज रासो	– चंदबरदाई
(2)	विजयपाल रासो	– नल्लसिंह भट्ट
(3)	बीसलदेव रासो	– नरपति नाल्ह
(4)	खुमान रासो	– दलपति विजय
(5)	परमाल रासो (आल्हाखंड)	– जगनिंक
(6)	पदावली	– विद्यापति
(7)	पहेलियाँ	– अमीर खुसरो

विशेषताएँ

(1) दरबारी भाट चारणों के द्वारा अपने आश्रयदाता राजाओं की वीरता का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन।

(2) इतिहास की अपेक्षा कल्पना की प्रधानता।

(3) वीर तथा श्रृंगार रस में वर्णन।

(4) युद्धों का सजीव वर्णन।

(5) रासो काव्य की प्रधानता।

(6) डिंगल भाषा की प्रधानता।

(2) भक्तिकाल –

इस काल के भक्त कवियों ने इसे भक्ति की गंगा, यमुना से सिचिंत किया है, इसलिए इस काल का नाम भक्तिकाल है।

लगातार मुस्लिम शासकों के आक्रमण के कारण देशी राज्य शक्तियाँ पराभूत होती गईं। मुस्लिम राज्य स्थापित हुए। भारतीय देशी राजा निरीह जनता की रक्षा में असमर्थ सिद्ध हुए। ऐसी स्थिति में जनता के सामने ईश्वर को पुकारने के अतिरिक्त कोई मार्ग न रहा। ईश्वर भक्ति की लहर दौड़ गई। काव्य राजदरबारों से हटकर विरक्त साधुओं की कुटियों की शरण में आया।

इस राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक संकट की घड़ी में आकुल, व्याकुल हिन्दू समाज में भक्तिमार्ग को बल मिला। इस युग में भक्ति की दो धाराएँ प्रवाहित हुईं। प्रथम निर्गुण भक्ति काव्यधारा, द्वितीय सगुण भक्ति काव्यधारा।

इसके वर्गीकरण को इस तरह रखा जा सकता है।

भक्ति काव्यधारा
- निर्गुण भक्ति काव्यधारा
  - ज्ञानाश्रयी काव्यधारा
  - प्रेमाश्रयी काव्यधारा
- सगुण भक्ति काव्यधारा
  - कृष्ण भक्ति काव्यधारा
  - रामभक्ति काव्यधारा

निर्गुण भक्ति काव्यधारा –

इस धारा में कवियों पर सिद्धों और नाथों से चली आती रुढ़िवादी विरोधी संघर्ष परंपरा, हठयोग, साधना पद्धति, वैष्णवों की अहिंसा, हिन्दुओं के अद्वैतवाद तथा मुस्लिम धर्म के एकेश्वरवाद का सम्मिलित प्रभाव रहा। इनमें एक वर्ग ऐसा था जो ज्ञान द्वारा निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति पर बल देता था, दूसरा वर्ग प्रेम के द्वारा। इस प्रकार यह धारा दो भागों में प्रवाहित हुई।

(अ) ज्ञानाश्रयी काव्यधारा – इस धारा के प्रमुख कवि संत कबीर थे। उन्होंने अपने काव्य में आडम्बर का खुलकर विरोध करते हुए, हिन्दू और मुसलमान, दोनों की रुढ़िवादिता, धार्मिक संकीर्णता का खंडन किया। उन्होंने आचरण की शुद्धता एवं समता की आवश्यकता का प्रतिपादन किया। इस वर्ग के काव्य में ज्ञान, प्रेम, योग तथा भक्ति का अद्‌भुत समन्वय था।

मुख्य विशेषताएँ–

(1) कविगण निर्गुणवादी थे और प्रायः नाम की उपासना करते थे।
(2) रुढ़िवाद, मिथ्या आडंबर विरोधी थे।
(3) गुरू को बहुत अधिक महत्व देते थे।
(4) जाति, पाँति के बंधनों को नहीं मानते थे।
(5) रचनाएँ मुक्तक रूप में हैं।
(6) भाषा सीधी, सरल थी एवं अलंकार की बहुलता से दूर थी। भाषा को 'सधुक्कड़ी' नाम दिया गया।
(7) सच्चे मानव धर्म को मानते थे।

प्रमुख कवि –

संत कबीर, रैदास, दादू दयाल, गुरूनानक, सुंदरदास, मलूकदास, सहजोबाई आदि।

(ब) प्रेमाश्रयी काव्यधारा – इस शाखा का विशिष्ट स्थान है, क्योंकि इस धारा मे देशकाल की परिधि खंडित हुई एवं भिन्न–भिन्न संस्कृतियों का समायोजन स्थापित हुआ।

प्रमुख विशेषताएँ–

1. कवियों की प्रेमगाथाएँ भारतीय काव्य की सर्गबद्ध न होकर, फारसी की मसनवी शैली पर लिखी गईं।
2. लगभग सभी कवियों ने प्रेमाख्यानक प्रबंधकाव्यों की रचना की।
3. इनकी कथाएँ हिन्दू जीवन से संबंधित हैं, इनमें भौतिक प्रेम के आधार पर ईश्वरीय प्रेम का प्रतिपादन किया है।
4. इन्होंने भक्त को प्रेमी एवं भगवान को प्रेयसी के रूप में स्वीकार किया है।
5. इन्होंने भाषा के रूप में 'अवधी' को अपनाया ।
6. दोहा और चौपाई छंदों का प्रयोग किया।

प्रमुख कवि–

1. मलिक मुहम्मद जायसी–रचना–पद्मावत।
2. कुतुबन, 3. मंझन,
4. उसमान, 5. शेख नबी आदि ।

सगुण भक्ति धारा –

इस धारा के कवियों ने ईश्वर की साकारता में विश्वास रखते हुए कृष्ण या राम की लीलाओं का गान करके भक्ति का प्रचार किया।

(अ) कृष्ण भक्ति धारा– इस धारा में कवियों ने हिन्दी साहित्य के भंडार में वृद्धि की, उच्च कोटि का साहित्य लिखा।

विशेषताएँ–

1. कृष्ण भक्ति के प्रादुर्भावकर्त्ता वल्लभाचार्य जी कृष्ण के बालरूप के उपासक थे। अतः सभी शिष्यों ने कृष्ण की बाल लीलाओं का ही अधिक वर्णन किया है।
2. कृष्ण को आराध्य बनाया।
3. कृष्ण की जन्मस्थली की भाषा ब्रज को अपनाया।
4. मुक्त रचनाएँ लिखी गईं। गीत, कवित्त, सवैया, दोहा आदि छंदों में रचनाएँ हुईं।
5. साहित्य में वात्सल्य एवं श्रृंगार रसों का पूर्ण परिपाक हुआ। श्रृंगार के दोनों पक्षों का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ। सूर तो इस क्षेत्र के सम्राट हैं।
6. अधिकांश कवियों ने कृष्ण की सख्यभाव से उपासना की।
7. भाषा में सरसता एवं माधुर्य है। प्रायः सभी रचनाएँ गेय हैं।

कवि–

बालकृष्ण के लीला–गायन एवं उनके विरह में व्याकुल गोपियों के विरह वर्णन में वात्सल्य एवं श्रृंगार के कुशल चितेरे सूर ने जो चित्र अंकित किए वे हिन्दी साहित्य में अद्वितीय हैं।

इनके अतिरिक्त नंददास, कुम्भनदास, परमानंद दास, गोवर्धन दास, नाभादास, मीराबाई आदि।

रामभक्ति शाखा –

राम भक्ति धारा के पावन प्रवाह, जिसमें आज भी असंख्य जन डुबकी लगाते हैं, को तुलसी की लेखनी ने जिस भक्ति रस से प्लावित किया, वह सतत प्रवहमान है।

विशेषताएँ–

(1) राम को अपना आराध्य मानकर कविता की।
(2) मर्यादा पुरूषोत्तम राम के चरित्र के माध्यम से भारतीय संस्कृति के समन्वयवादी रूप की प्रतिष्ठा की ।
(3) कवियों ने दास्य भाव से भक्ति की।
(4) भाव एवं कला का मणिकांचन समन्वय किया है।
(5) भाषा के अंतर्गत ब्रज एवं अवधी दोनों को अपनाया है।
(6) दोहा, चौपाई, कवित्त आदि छंदों को विशेष रूप से अपनाया है।

प्रमुख कवि –

गोस्वामी तुलसीदास जी ने मर्यादा पुरुषोत्तम राम के आदर्श चरित्र का अंकन कर लोक मर्यादा का पाठ पढ़ाया। राम के परिवार को भारतीय आदर्शों से पूर्ण परिवार के रूप में चित्रित किया है। उन्होंने प्रबंध और मुक्तक दोनों ही काव्यशैली को अपनाया है।

इनके अतिरिक्त अग्रदास, नाभादास एवं हृदयराम आदि हैं।

रीतिकाल–

सन् 1643 तक मुस्लिम राज्य पूरी तरह से अपनी जड़ें जमा चुका था। देशी राजा संघर्ष करना छोड़कर अपने–अपने महलों में विलास में लिप्त रहने लगे थे। दरबारी कवि अपने आश्रयदाताओं की प्रवृत्ति के अनुरुप श्रृंगारिक रचनाएँ कर उन्हें प्रसन्न करने लगे। कविता जनता के बीच से पुनः दरबारों में उच्च वर्ग के आश्रय में जा पहुँची। कवियों ने संस्कृत के

रीतिग्रंथों के अनुकरण पर हिन्दी में भी लक्षण ग्रंथ लिखे। इन्हीं रीतिग्रंथों की अधिकता के कारण इसको रीतिकाल कहा जाता है।

श्रृंगार रस की प्रधानता के कारण इस काल को श्रृंगार काल भी कहा जाता है। इसी प्रकार कलापक्ष की प्रधानता के कारण कला–काल। भक्तिकाल के आराध्य राधा–कृष्ण सामान्य नायक–नायिका के रूप में चित्रित किए गए।

विशेषताएँ–

(1) लक्षण ग्रंथों की प्रधानता।
(2) भाव की अपेक्षा कलापक्ष की प्रधानता।
(3) आचार्यत्व प्रदर्शन की प्रवृत्ति।
(4) श्रृंगार प्रियता।
(5) प्रकृति का उद्दीपन रूप में चित्रण।
(6) ऋतु वर्णन की अधिकता।
(7) मुक्तक रचनाएँ।
(8) नायिका के नख–शिख वर्णन की अधिकता।
(9) ब्रजभाषा का प्राधान्य।
(10) श्रृंगार के अतिरिक्त भक्ति और वीर रस पूर्ण रचनाएँ ।

कवि –

बिहारी, देव, घनानंद, केशवदास, चिन्तामणि, भिखारीदास, मतिराम, पद्‌माकर, भूषण, लाल, मान बोधा आदि।

आधुनिक युग की मुख्य प्रवृत्तियाँ

सन् 1850 के आस–पास भारत में राष्ट्रीय चेतना, स्वतंत्रता की भावना की लहर प्रवाहित होती हुई स्पष्ट दिखाई देती है, उसी का परिणाम सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में दिखाई दिया। भारत में अंग्रेजी शिक्षा का आगमन हुआ, उसी के माध्यम से देश में पश्चिम के नवीन विचारों ने चेतना फैलाई। नये उद्योग, रेल, डाक, तार की सुविधा, मुद्रणकला के विस्तार के फलस्वरूप शिक्षा के प्रचार–प्रसार के कारण पुनर्जागरण युग आया। राष्ट्रीय चेतना, स्वतंत्रता की भावना, सामाजिकता की महत्ता आदि के रूप में देश में नूतन वैचारिक जागृति का आलोक आया, जिसका प्रभाव हिन्दी साहित्य पर भी पड़ा। इस नवीन चेतनामय वातावरण में हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल का उदय हुआ, जिसके प्रारंभ का श्रेय भारतेंदु हरिश्चन्द्र को जाता है।

इस काल में सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि हिन्दी साहित्य में खड़ी बोली का प्रयोग तथा खड़ी बोली में गद्य का प्रारंभ है। आचार्य शुक्ल ने आधुनिक काल के हिन्दी साहित्य के विकास को इस प्रकार वर्गीकृत किया है–

1. भारतेन्दु युग – सन् 1850 से 1900
2. द्विवेदी युग – सन् 1900 से 1936
3. छायावादी युग – सन् 1920 से 1936

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उसके बाद के युग को निम्नानुसार विभाजित किया है–

1. प्रगतिवादी युग
2. प्रयोगवादी युग
3. नई कविता का युग

1. भारतेंदु युग – आधुनिक काल के अंतर्गत यह हिन्दी साहित्य का प्रथम उत्थान काल था। भारतेन्दु एवं उनके सहयोगी साहित्यकारों ने हिन्दी काव्य में देशप्रेम, देशोद्धार, राष्ट्रीयता, भारत की अतीत–गरिमा, हिन्दी प्रेम आदि के नव जागृति के स्वर को लेकर पदार्पण किया। जीवन और साहित्य का संबंध घनिष्ठ हुआ। वास्तव में यह युग हिन्दी साहित्य में नवीन भाषा, नवीन विधाओं तथा नवीन भाव, विचारों का प्रयोग काल है।

2. द्विवेदी युग –हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के इस द्वितीय उत्थान में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ''सरस्वती'' पत्रिका के सम्पादक के रूप में

भाषा परिष्कार एवं वैचारिक नैतिकता के प्रयासों को लेकर हिन्दी साहित्य में आए। साहित्य में विषय विविधता तथा वैचारिक उत्कर्ष आया। द्विवेदी जी की प्रेरणा से नये साहित्यकार आए। नीतिपरक, शिक्षाप्रद काव्य प्रचुर मात्रा में लिखा गया। 'खड़ी बोली' को व्याकरण सम्मत रूप प्राप्त हुआ।

इस युग के कवियों में मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', रामनरेश त्रिपाठी, और जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' आदि हैं। भारत–भारती, साकेत, यशोधरा, पंचवटी, प्रियप्रवास जैसी रचनाएँ लिखी गईं।

छायावादी युग – लगभग सन् 1920 के आस–पास साहित्य में विशेषतः काव्य में भाषा, भाव, विचार, शैली आदि में नवीनता की प्रवृत्ति दिखाई दी। वास्तव में यह प्रवृत्ति द्विवेदी काल के इतिवृत्तात्मकता तथा अति नैतिकता के प्रतिक्रियास्वरूप थी। सूक्ष्म मनोभावों का चित्रण प्रतीक शैली आदि काव्य में आया। लाक्षणिक प्रयोगों की प्रधानता होने कारण आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने छायावाद को लाक्षणिक प्रयोगों की शैली मात्र माना है। छायावाद में नूतन छंद विधान आया। कवियों द्वारा अबाधित रूप से स्वानुभूति की अभिव्यक्ति की गई। प्रकृति सौंदर्य का अनुपम वर्णन है। इसी समय रहस्यवादी कविताएँ भी लिखी गई तथा राष्ट्रीयता से पूर्ण कविताएँ थीं। वस्तुतः छायावाद में मानवतावाद, राष्ट्रीयवाद, अध्यात्मवाद, रहस्यवाद, स्वच्छंदतावाद एवं सौंदर्यवाद आदि प्रवृत्तियों का समन्वय है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने रहस्यवाद के बारे में कहा है–''चिंतन के क्षेत्र में जो अद्वैतवाद है, वही भावना के क्षेत्र में रहस्यवाद है। मिलन की स्थिति में आत्मा–परमात्मा का एकाकार होने के कारण रहस्यवाद की अंतिम स्थिति में अद्वैतवाद है। वास्तव में भारतीय काव्य में जहाँ निर्गुण भक्ति में माधुर्य भाव का समावेश होता है, उसे रहस्यवाद कहना अधिक उचित होगा। रहस्यवाद निश्चित रूप से छायावाद से पृथक है। आधुनिक काल में रहस्यवाद की रचनाएँ छायावादी कविताओं के साथ–साथ होने के कारण शुक्ल जी ने इस काल को छायावादी नाम दिया है और रहस्यवादी काव्य को इसी का एक भाग माना है।

छायावादी काव्य के प्रमुख कवि प्रसाद, निराला, पंत और महादेवी हैं। ये चारों कवि छायावाद के स्तम्भ हैं। प्रसाद के काव्य में रहस्यवादी, स्वच्छदंतावादी स्वरों के साथ दार्शनिकता, सौन्दर्यबोध एवं सूक्ष्मांकन की प्रवृत्ति है। पंत की रचनाओं में प्रकृति प्रेम की प्रमुखता है। बाद की कविताओं में मार्क्सवाद एवं अरविंद दर्शन भी है। निराला में स्वच्छंदतावादी प्रवृति, रूढ़ियों के प्रति तीव्र व्यंग्य, सारे बंधनों से उन्मुक्ति के स्वर हैं। महादेवी जी का काव्य रहस्यवादी पावनता, उत्कर्ष एवं गरिमा से युक्त है। उनके काव्य में आत्मसमर्पण की भावना है। दुख एवं वेदना उनके काव्य की आत्मा है।

इनके अतिरिक्त डॉ0 रामकुमार वर्मा, नरेन्द्र शर्मा आदि के नाम भी उल्लेखनीय हैं। प्रसाद की कामायनी, आँसू, निराला का परिमल, गीतिका, पंत की वीणा, पल्लव आदि श्रेष्ठ रचनाएँ हैं। महादेवी जी की दीपशिखा, नीरजा, सांध्यगीत आदि उल्लेखनीय रचनाएँ हैं।

प्रगतिवाद– सन् 1930 के आस–पास भारत में समाजवादी विचारधारा का सूत्रपात हुआ। छायावादी की प्रतिक्रया स्वरूप, काव्य में नई काव्यधारा का प्रारंभ हुआ। समाजोन्मुखी प्रवृत्ति का आगमन हुआ। मार्क्सवादी विचारधाराओं के प्रचार स्वरूप शोषण, आर्थिक विषमता के प्रति असंतोष दिखाई दिए। सन् 1936 में 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना हुई। समाजवादी विचारधारा पर आधारित

कविताएँ लिखी जाने लगीं। राजनीति के क्षेत्र की यही समाजवादी, मार्क्सवादी विचारधारा साहित्य के क्षेत्र में प्रगतिवाद के नाम से जानी गई। इस कविता में मजदूरों, किसानों, दलितों, शोषितों एवं दीन–दुखियों के प्रति सहानुभूति एवं उनके कल्याण के लिए क्रांति का आह्वान है। यथार्थवादी चित्रण एवं भावुकता के स्थान पर बौद्धिकता की प्रधानता है। पूँजीवादी व्यवस्था का विरोध, शोषकों के प्रति आक्रोश है। भाषा सहज, सुबोध है।

प्रगतिवादी कवियों में मुख्यतः सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत, माखनलाल चतुर्वेदी, नागार्जुन, डॉ. राम विलास शर्मा, मुक्तिबोध आदि हैं।

इसी समय हिन्दी काव्य में हालावाद के नाम से एक तरंग उठी, जिसमें कवि भविष्य की चिंता भुलाकर वर्तमान को सत्य मानता है और इस लोक के आनंद सागर में डूब जाना चाहता है। हालावाद के इस तरंग के सूत्रधार हरिवंश राय बच्चन रहे जिनकी मधुशाला, मधुकलश, निशा निमंत्रण आदि प्रतिनिधि रचनाएँ हैं।

प्रयोगवाद–

सन् 1943 में अज्ञेय द्वारा संपादित 'तार सप्तक' में प्रकाशित रचनाओं में एक नई प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है, जिसे प्रयोगवाद की संज्ञा दी गई। छायावादी कवि के समान प्रयोगवादी कवि भी समाज से अलग, अछूता, पूरी तरह से आत्मोन्मुख रहता है। इसमें अस्पष्ट एवं दुरुहतापूर्ण अभिव्यक्ति को रचनाकार नूतन प्रयोग का नाम देकर 'शैली विद्रोह' का गौरव अनुभव करता है। इस कविता में छंद विधान, प्रतीक विधान आदि सभी में परिवर्तन एवं नूतनता की प्रवृत्ति पाई जाती है। प्रयोगवादी कवियों में शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता, अज्ञेय, डॉ. राम विलास शर्मा, गजानन माधव मुक्तिबोध आदि प्रमुख हैं।

नई कविता–

भारतीय स्वतंत्रता के बाद जो कविताएँ लिखी गईं, उनमें कुछ और नयापन दृष्टिगोचर होता है। नूतन शिल्प विधान, नया भावबोध तथा नया प्रभाव सामर्थ्य लेकर जो कविता सामने आती है, उसमें विशिष्टता है। इसी नूतनता के कारण इसे 'नई कविता' कहते हैं। यह सामान्य मनुष्य की एक क्षण की अनुभूतियों को सशक्त करने की अभिव्यक्ति देती है। इसमें अनुभूति की सच्चाई एवं यथार्थवादी दृष्टिकोण का समन्वित रूप है। इसमें नगर और ग्राम दोनों के परिवेश के जीवन अनुभूति की नूतन बिंबात्मकता, नूतन प्रतीक योजना, खुलापन एवं ताजगी से युक्त भाषा में अभिव्यक्ति हुई है।

नई कविता के कवियों में गिरिजा कुमार माथुर, डॉ धर्मवीर भारती, डॉ. प्रभाकर माचवे, भवानी प्रसाद मिश्र, केदारनाथ अग्रवाल आदि प्रमुख हैं।

इकाई – 6

पाठ – 14
संध्या सुंदरी

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

परिचय :–

(1) जन्म् – सन् 1899 बंगाल के महिषादल राज्य में।

(2) शिक्षा – महिषादल में शिक्षा का आरंभ– नौकरी भी यहीं की।

(3) मृत्यु – 15 अक्टूबर सन् 1961 ।

रचनाएँ–

काव्य कृतियाँ – गीतिका, परिमल, अनामिका, तुलसीदास, कुकुरमुत्ता, राम की शक्ति पूजा, बेला, अपरा, अर्चना, आराधना, नये पत्ते आदि।

उपन्यास – 'अलका' प्रभावती, उच्छृंखल, अप्सरा, चमेली, काले कारनामे, चोटी की पकड़'

कहानियाँ– चतुरी चमार, सुकुल की बीबी, सखी, लिली।

काव्यगत विशेषताएँ – निराला जी के काव्य की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :–

(1) प्रेम और सौन्दर्य का चित्रण और प्रकृति चित्रण।

(2) देश प्रेम और भारतीय संस्कृति का समावेश। **जैसे** – वरदे, वीणा वादिनी वर दे।
प्रिय स्वतंत्र रव, अमृत मंत्र नव, भारत में भर दे।

(3) भक्ति, रहस्यवाद, दर्शन की झलक।

(4) प्रगतिवादी विचारधारा का पुट

(5) दीन–हीन, निर्धन वर्ग, किसानों मजदूरों के प्रति सहानुभूति।

(6) शोषकों, पूँजीपतियों को कड़ी फटकार।

(7) विधवा, मजदूर, भिखारियों के प्रति अटूट सहानुभूति।

(8) पूँजीवाद का विरोध

(9) क्रांति एवं विद्रोह

भाषा–शैली –

(1) भाषा में बंगला भाषा का प्रभाव।

(2) संस्कृत के अप्रयुक्त शब्दों की अधिकता।

(3) आपकी भाषा में मधुर शब्दों की कमी दिखाई देती है।

(4) छायावाद, रहस्यवाद और प्रगतिवाद के कवि होने के कारण आपने अनेक शब्दों का नवनिर्माण किया।

(5) भाषा में संस्कृत, उर्दू अरबी, फारसी के अतिरिक्त अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग, प्रतीकों का प्रयोग।

(6) **रस** – शांत, करुण, श्रृंगार, रौद्र और अद्‌भुत रस का प्रयोग। 'सरोज स्मृति' में करुण, 'राम की शक्ति पूजा' में रौद्र, वीर और अद्‌भुत रस का प्रयोग।

(7) **छन्द** – अतुकांत मुक्त छन्द और रबर छंद के ये जनक माने जाते हैं।

(8) **अलंकार** – नये–नये उपमानों का प्रयोग। उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक के साथ ही मानवीकरण अलंकार का सफल प्रयोग।

हिन्दी साहित्य में स्थान –

छायावाद, रहस्यवाद और प्रगतिवाद के अद्‌भुत सम्मिश्रण से, छन्दों और अलंकारों के क्षेत्र में नवीन प्रयोग से हिन्दी साहित्य गगन में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' आज भी स्वच्छन्द अस्तित्व रखते हैं।

केन्द्रीय भावः– 'संध्या सुंदरी' कविता में निराला जी ने संध्या की तुलना सुंदरी से की है। मेघों से भरे हुए आसमान से उतरती हुई संध्या ऐसी प्रतीत होती है जैसे धीरे–धीरे परी उतर रही हो। संध्या की यह नीरवता अर्द्धरात्रि तक आते–आते कवि का अनुराग बढ़ा देती है तब कवि के विरहाकुल कंठ से विहागराग निकल पड़ता हैं और वह काव्य–रचना के लिए प्रेरित होता है।

कविता –

संध्या–सुंदरी

निराला

दिवसावसान का समय,
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह संध्या सुंदरी परी–सी
धीरे, धीरे, धीरे।
तिमिरांचल में चंचलता का कहीं कहीं आभास,
मधुर–मधुर हैं दोनों उसके **अधर**
किंतु जरा गंभीर नहीं है उनमें **हास–विलास**।
हँसता है तो केवल तारा एक
गुँथा हुआ उन घुँघराले काले–काले बालों से
हृदय राज्य की रानी का वह करता है **अभिषेक**।

अलसता की सी लता
किंतु कोमलता की वह कली
सखी **नीरवता** के कंधे पर डाले बाँह,
छाँह सी अंबर पथ से चली।

नहीं बजती उसके हाथों में कोई वीणा,
नहीं होता कोई अनुराग, राग, आलाप,
नूपुरों में भी रुनझुन–रुनझुन नहीं,
सिर्फ एक **अव्यक्त** शब्द सा 'चुप,चुप,चुप',
है गूँज रहा सब कहीं
व्योम मंडल में, जगतीतल में–
सोती शांत सरोवर पर उस अमल कमलिनी–दल में–
सौंदर्य गर्विता सरिता के अतिविस्तृत वक्षःस्थल में–
धीर वीर गंभीर शिखर पर हिमगिरि अटल–अचल में–
उताल–तरंगाघात–प्रलय–घन–गर्जन–जलधि–प्रबल में–

क्षिति में, जल में, नभ में, अनिल–अनल में–
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द सा 'चुप, चुप, चुप',
है गूँज रहा सब कहीं
और क्या है ? कुछ नहीं।
मदिरा की वह नदी बहाती आती,
थके हुए जीवों को वह सस्नेह
प्याला एक पिलाती,

सुलाती उन्हें अंक पर अपने,
दिखलाती उन्हें विस्मृति के वह अगणित मीठे सपने
अर्द्धरात्रि की निश्चलता में हो जाती जब लीन,
कवि बढ़ जाता अनुराग,
विरहाकुल कमनीय कंठ से
आप निकल पड़ता तब एक **विहाग** ।

– सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

शब्दार्थ

दिवसावसान – दिन की समाप्ति।
तिमिरांचल – अंधकार रूपी आँचल।
हास–विलास – हँसी। **अभिषेक** – सींचना।
नीरवता – शांति। **अंबर** – आकाश।
अनुराग– प्रेम। **अलसता**–आलस्य।
व्योम–आकाश। **जगती**–संसार।
अमल– स्वच्छ।
गर्विता– गौरवशालिनी। **हिमगिरि**– हिमालय।
उत्ताल– ऊँची। **तरंग**– लहर। **जलधि**–समुद्र।
अंक– गोद। **क्षिति**– पृथ्वी। **अनिल** – हवा।
अनल– अग्नि। **कमनीय**– कोमल, आकर्षक।
विहाग– वियोग का गीत। (एक राग का नाम)

अभ्यास के प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न –

प्रश्न 1. हृदय राज्य की रानी से कवि का क्या अभिप्राय है ?

प्रश्न 2. 'संध्या सुन्दरी' का अभिषेक कौन कर रहा है ?

प्रश्न 3. संध्या मीठे से सपने किन्हें दिखाती है ?

प्रश्न 4. अर्द्ध रात्रि में कवि अनुराग बढ़ने पर क्या करता है ?

प्रश्न 5. 'निराला' जी की एक काव्य कृति का नाम लिखिए ।

लघु उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 6. संध्या थके हारे लोगों को मीठे सपने कैसे दिखाती हैं ?

प्रश्न 7. निराला जी ने इस कविता में कौन सा नया छंद विधान किया है ? उस नये छंद की एक विशेषता लिखिए ।

प्रश्न 8. प्रस्तुत पंक्तियों में कौन सा अलंकार है–

(i) सौन्दर्य–गर्वित सरिता
(उपमा / अनुप्रास)

(ii) वह संध्या सुंदरी परी सी
(उत्प्रेक्षा / रूपक)

(iii) सखी नीरवता के कंधे पर डाले बाँह
(मानवीकरण / उपमा)

प्रश्न 9. 'उत्ताल तरंगाघात प्रलय घन गर्जन जलधि प्रबल में' का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 10. निराला जी ने संध्या की तुलना किससे की है और क्यों ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

प्रश्न 11. सूर्यास्त होने पर प्रकृति में क्या–क्या परिवर्तन होते हैं ?

प्रश्न 12. 'संध्या सुन्दरी' में प्रकृति का मानवीकरण किया गया है, उदाहरण द्वारा स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 13. संध्या की सखी नीरवता के व्यापक प्रभाव का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 14. कवि निराला की छायावादी विशेषताएँ लिखिए ।

प्रश्न 15. मुक्त छंद के लक्षण लिखिए।

व्याख्यात्मक प्रश्न

संसदर्भ व्याख्या कीजिए –

(i) तिमिरांचल में ....अभिषेक।

(ii) और क्या है ? .... सपने।

(iii) धीर–वीर गंभीर..........गूँज रहा सब कहीं।

पाठ – 15
फ्री स्टाइल गवाही

काका हाथरसी

परिचय :–

जन्म :– काका हाथरसी का जन्म हाथरस उत्तर प्रदेश में 18 सितंबर सन् 1906 में हुआ।

प्रेरणा :– स्वस्फूर्त, हास्य व्यंग्य में निपुण होने के कारण 27 वर्ष की अवस्था में ही लेखन प्रतिभा उनमें विकसित हो गई थी।

रचनाएँ – वे मूलतः हास्य के कवि थे। मंच से लोगों को हँसाना उन्होंने अपना ध्येय बना लिया था। हास्य कविताएँ निबंध, एकांकी के क्षेत्र में इनके अनेक संग्रह प्रकाशित हुए हैं जिनके नाम उन्होंने हास्य निबंध, हास्य एकांकी, हास्य कविताओं के रूप में प्रदर्शित किए है।

साहित्यगत विशेषताएँ–

(1) सामाजिक विषमताओं, विद्रूपताओं पर करारा व्यंग्य।
(2) राजनैतिक विडम्बनाओं का चित्रण।
(3) न्याय व्यवस्था पर कटाक्ष।
(4) रूढ़ियों, दूषित–परम्पराओं, सामाजिक कमजोरियों पर प्रहार।
(5) पारिवारिक कुंठाओं को समूल नष्ट करने का प्रयास।
(6) धार्मिक कर्मकाण्ड, बाह्याडम्बर का विरोध।

भाषा शैली –

(1) भाषा खड़ी बोली है।
(2) अंग्रेजी और संस्कृत को भी अपने काव्यों में स्थान दिया।
(3) तत्सम्, तद्भव दोनों प्रकार के शब्दों का प्रयोग।
(4) मुहावरों का सटीक प्रयोग।
(5) विवेचनात्मक एवं व्यंग्य शैली की प्रधानता।
(6) वाक्य छोटे एवं जन–सामान्य के लिए उपयुक्त।
(7) हास्य–व्यंग्य के कारण उन्होंने विदेशों में भी लोकप्रियता अर्जित की।

हिन्दी साहित्य में स्थान–

हिन्दी के हास्य मंचों में वे अपनी विलक्षण विनोद प्रतिभा के कारण सर्वत्र सम्माननीय रहे। हास्य व्यंग्य को प्रोत्साहित करने के लिए उन्होंने 'काका हाथरसी' हास्य पुरस्कार भी आरंभ किया। जन–जन को गुदगुदाने वाले काका हाथरसी का स्थान हिन्दी साहित्य में अमर है।

केन्द्रीय भाव :–

फ्री स्टाइल गवाही' हास्य व्यंग्य एकांकी में आज की न्याय व्यवस्था पर करारी चोट है। आज न्यायालय में झूठी गवाही के माध्यम से असत्य को सत्य और सत्य को असत्य करने का काम आसानी से होता है। न्यायालय अपनी गरिमा स्थापित करने में असफल प्रतीत हो रहा है। समाज में अपराध बढ़ने का यही कारण है कि आज न्याय–व्यवस्था बिकाऊ हो चुकी है। सत्य की कहीं पहचान नहीं है।

हास्य व्यंग्य

फ्री स्टाइल गवाही

काका हाथरसी

पात्र

झंडामल : एक मारवाड़ी सेठ, वादी
शर्मा : वादी का वकील
भटनागर : प्रतिवादी का वकील
सत्यपाल : वादी का गवाह जज, पेशकार, चपरासी आदि।
स्थान : अदालत का कमरा

(पेशकार बैठा हुआ कागज पलट रहा है, चपरासी खड़ा है, जज की कुर्सी खाली है। एक ओर से सेठ झंडामल और दूसरी ओर से उसके वकील शर्मा जी का प्रवेश।)

झंडामल : गजब होगियो वकील साहब !

शर्मा : क्या हुआ सेठ जी ?

झंडामल : के बताऊँ वकील जी, म्हे तो मारगियो, हाय–हाय।

शर्मा : अरे क्या हुआ, कुछ बताओगे भी या वैसे ही हल्ला कर रहे हो ? देखते नहीं यह कोर्ट है।

झंडामल : म्हारे गवाह ने जाड़ौ मारगियो, अब कैसी होगी राम, पट्ट होगियो सब काम। (रोता है।)

शर्मा : अरे सेठ झंडामल, आप भी खूब हैं, जरा–सी बात के लिए बच्चों की तरह रोते हैं। गवाहों की आजकल क्या कमी है, आप कहें जितने इकट्ठे कर दूँ ? पैसा चाहिये अंटी में।

झंडामल : तो फिर बुलाओ न वकील जी। म्हारो तो कलेजो हिल रियो है।

शर्मा : घबराइये नहीं, अभी इंतजाम किये देता हूँ। आप बैठिये।
(वकील का बाहर जाना और एक व्यक्ति को लेकर आना)

शर्मा : देखो मिस्टर सत्यपाल ! होशियारी से बातें करना। सेठ कंजूस है, चार माँगोगे तब एक देगा।

सत्यपाल : अजी वकील साहब, यहाँ तो ऐसे ही मनहूसों से पाला पड़ता रहता है। हमें भी बालू में से तेल निकालने का अभ्यास हो गया है।

शर्मा : तुम जानो, लेकिन ध्यान हमारा भी रखना मिस्टर !

सत्यपाल : यस, वन फोर्थ सर !

शर्मा : (सेठ के पास जाकर) लीजिए सेठ जी, गवाह हाजिर है।
(सेठ जी गवाह को बड़े ध्यान से ऊपर से नीचे तक देखकर उसके हाथ जोड़ते हैं)

झंडामल : जै गोपाल जी की गवाह जी, जय गोपाल जी की ।

सत्यपाल : जै गोपाल जी की सेठ, तबियत खुश हो गयी आपसे भेंट करके। सेवा कुछ लीजिए, आज्ञा दीजिये।

झंडामल : अरे भाया, आज्ञा के है! झाऊलाल का बाप खाऊलाल म्हारो पाँच सौ रूपया लेकर मारिगियो। ताके ऊपर ब्याज, ब्याज के ऊपर ब्याज चढ़ते–चढ़ते 500 का 2500 होगियो। आज की तारीख है भाया, म्हारौ गवाह धर्मपाल बीमार पड़गियो, मामलों बीच में अड़गियो।

सत्यपाल : कोई चिन्ता नहीं, धर्मपाल बीमार है तो सत्यपाल हाजिर है, गवाही के कार्य

में कम्पलीट माहिर है, दुनिया में जाहिर है।

झंडामल : थे तो शायरी की–सी बातें करो हो, के काम करो हो भाया ?

सत्यपाल : रसिया बनाते हैं, ख्याल खूब गाते हैं। आप जैसे सेठ कभी हमको बुलाते हैं, तो कोर्ट में पहुँचकर गवाही दे आते हैं। परोपकार के लिए ही जन्म लिया है। विधाता ने माइंड हमें फर्स्ट क्लास दिया है। यही अपना काम है, सत्यपाल नाम है।

झंडामल : अहाहा, थारो नाम सत्यपाल, म्हारो नाम झंडामल। सत्य और झंडा ने मिलकर जब अंग्रेजी राज्य छीन लिया तो यो बेचारों झाऊलाल के चीज है। अब तो म्हारो जीत ही जीत है।

शर्मा : देख लीजिए सेठ जी, सोहबत का असर इसे कहते हैं। आप भी तुक मिलाने लग गये। अच्छा, अब जल्दी मामला तय कर लीजिए, कोर्ट का टाइम हो रहा है।

झंडामल : तै के करनो वकील जी, जीत गया तो पाँच रुपैया दे देंगा।

सत्यपाल : वाह, वा सेठ जी, आप हैं भरपेट जी। पाँच के ऊपर बिन्दी और रखिये एक। मालूम है आपको, गवाह का एक पैर जेल में रहता है। शीघ्र बतलाइये कान मत खाइये। समय व्यर्थ जा रहा, क्रोध हमें आ रहा।

झंडामल : अरे तो क्रोध की के बात है भाया (वकील से) पर पचास रूपया तो बहुत है वकील जी !

शर्मा : देखिए सेठजी, यहाँ पर सौदेबाजी नहीं होनी चाहिए। जज साहब आते होंगे, जल्दी करिये, चलो जी सत्यपाल, 25 रुपये दिला देंगे, लेकिन गवाही देते वक्त यह तुकमिल्ला बाजी छोड़कर ढंग से बात करिये।

सत्यपाल : वकील साहब, बात यह थी कि इस समय बाहर बैठे–बैठे हम एक कविता बना रहे थे, उसी मूड में आप हमें उठा लाये, इसलिए सेठजी से सौदा पटाते वक्त कविता में ही बातें करने लगे, लेकिन आप चिन्ता न करें, हमारी तो गद्य और पद्य, दोनों में ही समान गति है, सब जानते हैं, अदालत वाले हमें मानते हैं।

झंडामल : (वकील से) तो शर्मा जी, गवाह जी को मुकदमों तो समझा देउ।

सत्यपाल : अजी समझ लिया मुकदमा। यहाँ तो 'फ्री स्टाइल' गवाही देते हैं, हर जगह फिट बैठती है। रोजाना यही काम रहता है। आप बेफिकर रहिये, पेशकार को हमारा नाम नोट करा दीजिए।
(वकील व सत्यपाल को जाना)

झंडामल : (पेशकार के पास जाकर) पेशकार जी, म्हारो एक गवाह धरमपाल बीमार होगियो, ताके बदले में सत्यपाल को नाम नोंद लेउ, किरपा होगी बाबूजी!

पेशकार : वाह, वाह, ऐसे कैसे हो सकता है ? कमाल कर रहे हैं आप, कहीं नाम बदले जाते हैं गवाहों के ?

झंडामल : अरे पेशकार जी, अपने व्यापारी लोग तो गुड़ की जगह चीनी और शक्कर की जगह बूरो बदल देते हैं। ये धरमपाल की जगह सत्यपाल नहीं बदल सको हो ? धरम और सत्य तो एक माँ के बेटे हैं। या लेउ अपना हक्क, काम कर देउ फटाफट्ट।
(नोट देता है।)

पेशकार : एक रूपया ? वाह सेठजी, यह एक रुपये का काम है ?

झंडामल : अजी पेशकार जी, एक रुपयौ कम है। जी कौ 100 नयौ पीशौ हौवे है।

पेशकार : (रुपया फेंककर) ले जाइये वह 100 पैसे, (मुँह बिगाड़कर) चले आते हैं सेठ बनकर।

झंडामल : (रुपया उठाकर दाँत दिखाते हुए) थे तो रुठ गया पेशकार जी, गाँधी का चित्तर लगा रख्या है, थोड़ा डरो तो सही भाया।

पेशकार : गाँधी जी का चित्र लगा है तो क्या हुआ, देखते नहीं, महात्मा जी अपने हाथ की पाँचों अँगुलियाँ दिखाकर और लाठी लेकर कह रहे हैं कि पाँच रुपये से जो कम दे उसे लाठी लगाओ।

झंडामल : अच्छा भाया, लो। (पाँच का नोट देता है।)
(जज का प्रवेश, झंडामल हट जाते हैं।)

पेशकार : चपरासी ! सेठ झंडामल बनाम झाऊलाल को आवाज दो।

चपरासी : कोई झंडामल बनाम झाऊलाल हाजिर है ? कौन है झंडामल बनाम झाऊलाल ? (दोनों पार्टियों का वकीलों सहित प्रवेश।)

चपरासी : (झंडामल से) आपका ही नाम झंडामल है ?

झंडामल : दुनिया जाने हैं म्हारो नाम झंडामल, बाप को नाम गंडामल, बाबा को नाम संडामल, परबाबा का नाम डंडामल। असली बनिया मारवाड़ी–भौत पुराने कबाड़ी।

शर्मा : बस–बस, बंद करिये रेलगाड़ी। यह बताइये आपने झाऊलाल के पिता खाऊलाल को जो 500 रु. दिये थे, किसलिए दिये थे।

झंडामल : किसलिए दिये थे ? ये बात म्हारो से काई पूछो हो, दुनिया जाने है, बात यों हुई, एक दिन झाऊलाल का बाप खाऊलाल कहन लग्यो...... सेठ जी, म्हारो बेटो झाऊलाल कुपात्तर है, म्हारो तेरही करेगो नहीं, यासे अपन तो जीवता हीं तेरहीं कर दूँ। थे पाँच सौ रुपया उधार दे देउ। अपनी तो दया–धरम को काम पुरखा–पंगत से चलौ आवै है दे दियौ रुपया।

शर्मा : तो खाऊलाल ने अपनी तेरही के लिए आपसे 500 रुपये कर्ज लिये थे! कुछ सबूत है आपके पास ?

झंडामल : (बही खोलकर) यह देखो परमान।

शर्मा : कोई गवाह है, जिसके सामने रुपये दिये हों ?

झंडामल : हाँ, हाँ, गवाह बाहर खड्यो है।

भटनागर : क्या नाम है आपके गवाह का ?

झंडामल : नाम....नाम गवाह को नाम ?

शर्मा : घबराइये नहीं, सत्य बात हो सो बता दीजिये।

झंडामल : हाँ गवाह को नाम सत्यपाल है।

पेशकार : चपरासी, सत्यपाल गवाह को हाजिर करो।

चपरासी : सत्यपाल गवाह हाजिर है ! कोई सत्यपाल गवाह हाजिर है ? कौन है सत्यपाल ?
(सत्यपाल का प्रवेश)

चपरासी : कहो, भगवान को साक्षी करके सच–सच कहूँगा।

सत्यपाल : अरे भाई मेरा तो नाम ही सत्यपाल है, झूठ तो हमने जिंदगी भर नहीं बोला।

भटनागर : आपका ही नाम सत्यपाल है ?

सत्यपाल : यस सर, माई नेम इज सत्यपाल।

भटनागर : आप अंग्रेजी कहाँ तक पढ़े हैं ?

सत्यपाल : अंग्रेजी तो हमने ई.आई.आर. में मुगलसराय जंक्शन तक पढ़ी थी, लेकिन जब स्वराज्य हो गया तो कांग्रेस सरकार ने इस रेल का नाम बदलकर एन.आर. कर दिया, तब हमने भी अंग्रेजी को उठाकर ताक में रख दिया।

भटनागर : देखिये यह कोर्ट है, फिजूल बातें यहाँ मत करिये। जो बातें पूछी जा रहीं हैं, उनका ठीक–ठीक जवाब दीजिये ।

सत्यपाल : आप कहें, उसी भाषा में गवाही दे सकता हूँ। हिन्दी, उर्दू, फारसी, बंगला, मराठी, पंजाबी, गुजराती, तेलगु, चीनी, रूसी, लैटिन, बुलैटिन–12 भाषाएँ बोल सकता हूँ। झाऊमल की पोल खोल सकता हूँ।

जज : आर्डर–आर्डर, फिजूल बातें मत बोलो, वकील जो बात पूछे उसका जवाब दो।

सत्यपाल : बहुत अच्छा हुजूर।

भटनागर : आपके पिता का नाम ?

सत्यपाल : गवाही मैं दे रहा हूँ या मेरा पिता ? खैर, फिर भी बताता हूँ। हमारा नाम सत्यपाल, बाप का नाम हरिशचन्द्र, बाबा का नाम युधिष्ठिर।

भटनागर : बस–बस जरूरत से ज्यादा मत बोलिये। क्या काम करते हैं आप ?

सत्यपाल : काम, क्रोध, लोभ, मोह इनसे अपने राम हमेशा दूर रहते हैं, सत्य सुनते हैं, सत्य कहते हैं। सत्य की गंगा में दिन–रात बहते हैं, इसलिए लोग हमें सत्यपाल कहते हैं।

भटनागर : अरे भाई, तुम गवाही दे रहे हो या कविता पढ़ रहे हो ? यह पूछा जा रहा है कि क्या कार्य करते हो ?

सत्यपाल : सुबह उठकर कैंची की तीन सिगरेट पीता हूँ। फिर चार कप चाय बनाता हूँ, उसे पीकर लैटरिन जाता हूँ। स्नान करके गीता का पाठ करता हूँ फिर रोटी खाता हूँ तब कचहरी जाता हूँ।

भटनागर : यह नहीं पूछते हम, मतलब आप धंधा क्या करते हैं ?

सत्यपाल : धंधे तो सेल्स टैक्स ने सब चौपट कर दिये, अब धंधे हैं ही कहाँ वकील साहब ?

भटनागर : फिर भी कुछ रोजी–रोटी का जरिया तो होगा ही।

शर्मा : (जज से) देखिए हुजूर, सवाल का जवाब गवाह ने दे दिया है, फिर भी वही सवाल बार–बार करके वक्त बरबाद किया जा रहा है ?

भटनागर : (बात अनसुनी करके) मिस्टर सत्यपाल, आप एक बार जेल भी जा चुके हैं ?

सत्यपाल : मैं एक बार जेल जा चुका हूँ तो क्या हुआ ? नेहरू जी नौ बार जेल गये थे, गाँधी जी ग्यारह बार जेल गये थे, पटेल साहब पन्द्रह बार जेल गये थे। जेल जाना तो देशभक्ति का चिन्ह है, आपका आइडिया हमसे भिन्न है।

भटनागर : किस जुर्म में जेल गये थे आप ?

सत्यपाल : जून में नहीं, सन् 1942 की जुलाई में, और गये इसलिए थे कि सुराज्य

होने पर हम भी किसी ऊँची कुर्सी पर फिट हो जायेंगे, लेकिन इस तकदीर को क्या करें साहब! (साँस लेकर) ओफ्फो वहीं के वहीं रह गये, भाग्य के नाले में बह गये।

भटनागर : (जज से) देखिये सरकार, यह महाशय झूठी गवाही देने के सिलसिले में तीन महीने की सजा काट चुके हैं, लेकिन मंजूर नहीं करते, सवाल को बातों ही बातों में उड़ा रहे हैं।

शर्मा : आपके पास कोई सबूत है इस बात का ? अगर किसी केस में इनको सजा हुई तो आप उसकी नकल पेश कर सकते हैं।

जज : राइट, आगे चलिये।

भटनागर : अच्छा जी सत्यपाल, यह बताइए, जिस वक्त सेठ झंडामल ने खाऊलाल को रुपये दिये थे, उस वक्त क्या टाइम था ?

सत्यपाल : टाइम इज मनी, टाइम ही रुपया है और रुपया ही टाइम है। इसलिए हमने सिर्फ रुपये की तरफ ध्यान रखा था। दूसरा कारण यह था कि हमारी रिस्टवॉच उस दिन सफाई के लिए घड़ीसाज के यहाँ गयी थी। आसमान पर बादल छाये हुए थे। ऐसी सूरत में कौन माई का लाल टाइम का पता लगा सकता है।

जज : दिस इज राइट।

भटनागर : मिस्टर सत्यपाल, यह तो आपको मालूम ही होगा कि जिस दिन झाऊलाल के पिता ने सेठ जी से रुपये कर्ज लिये थे, उस दिन क्या तारीख थी। यानि किस दिन रुपये लिये थे ?

सत्यपाल : जिस दिन बही–खाते में लिखे गये।

भटनागर : यही तो मैं पूछता हूँ, बही–खाते में कौन सी तारीख को लिखे गये।

सत्यपाल : जिस दिन लिये गये, उसी दिन लिखे गये।

भटनागर : तो तारीख आपको मालूम नहीं ?

सत्यपाल : मालूम क्यों नहीं, देखिये यह लिखी है। (सेठ के हाथ से बही छीनकर मिती पढ़ता है।) माघ सुदी 7 सोमवार।

भटनागर : अच्छा, आप यह बता सकते हैं कि खाऊलाल ने जब कर्जा लिया था, उनकी उम्र कितनी थी, सफेद बाल थे या काले ?

सत्यपाल : उम्र का बालों से कोई कनेक्शन नहीं वकील साहब। अपने शहर में ही देख लीजिये, लोहिया जी के बाल 12 वर्ष की उम्र में ही सफेद हो गये, डॉक्टर शर्मा तो गर्भ से ही सफेद बालों वाले पैदा हुए थे और काका हाथरसी के बाल 70 वर्ष की उम्र में भी काले हैं।

भटनागर : देखिये हुजूर, गवाह हर सवाल का जवाब गोल दे रहा है।

सत्यपाल : हुजूर, चाँद गोल, सूरज गोल, यह दुनिया गोल, वकील साहब के सवाल गोल, इसलिए मेरे जवाब भी गोल।

शर्मा : देखो मिस्टर सत्यपाल, वकील साहब पूछ रहे हैं कि खाऊलाल की एज क्या थी ?

सत्यपाल : श्रीमानजी, किसी की सही उम्र या तो उसकी माता बता सकती है, या म्युनिसपैलिटी का पैदाइशी रजिस्टर।

भटनागर : फिर भी आदमी की बॉडी देखकर कुछ तो अन्दाज किया जा सकता है।

सत्यपाल : बॉडी देखकर ?.....हर्गिज नहीं, अभी हाल में ही एक जगह जब सितारा

नाचने के लिए स्टेज पर आई तो 16 वर्ष की मालूम होती थी, लेकिन वास्तव में उसकी उम्र मेरी चाची के बराबर है, यानी ओवर फिफ्टी ईयर्स।

जज : आर्डर–आर्डर। यहाँ सितारा की या आपकी चाची की उम्र नहीं पूछी जा रही; खाऊलाल की उम्र बताइए।

शर्मा : सरकार, गवाह का नाम सत्यपाल है, वह झूठ बोलना नहीं चाहता, इसलिए उनकी ठीक–ठाक उम्र बताने के लिए उस पर जोर डालकर सत्य की हत्या नहीं करनी चाहिए। भारतीय संविधान भी यही कहता है।

भटनागर : अच्छा छोड़िये, यह बताइए, खाऊलाल जी कपड़े कैसे पहनते थे ?

सत्यपाल : हमारे मित्र खाऊलाल थे अवसरवादी। उनके बक्स में अढ़ाई दर्जन ड्रेस डिफरेंट क्वालिटीज की हर वक्त तैयार रहती थीं। किसी कांग्रेसी नेता से मिलने जाते तो खादी की अचकन पहनते थे। जनसंघ की मीटिंग में केसरिया टोपी और लहँगाकट नेकर पहनकर जाया करते थे। समाजवादी पार्टी में लाल टोपी उनके सिर की शोभा बढ़ाती थी। भाई–बिरादरी में पगड़ी पहन लिया करते थे, एक ड्रेस हो तो बताऊँ आपको। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि खाऊलाल थे अवसरवादी, जैसा मौका देखते वैसा ठाट बनाते थे, अवसर का लाभ उठाते थे।

भटनागर : उनके चेहरे का रंग बता सकते हैं आप?

सत्यपाल : चेहरा न तो गोरा था, न काला। उनका रंग था मटमैला, जैसे सीमेंट का थैला। लेकिन सुराज्य होने के बाद उनके चेहरे का रंग धीरे–धीरे निखरने लगा और मरते वक्त तो उनका चेहरा ऐसे दमदमा रहा था जैसे हजार वाट का बल्ब।

भटनागर : (झुंझलाकर) ओफ्फो ! मैं पूछता हूँ जिस समय उन्होंने बही खाते में दस्तखत किये थे, उस वक्त उनके चेहरे का रंग कैसा था ?

सत्यपाल : (जज से) सरकार, दस्तखत करते समय तो हर आदमी का मुँह नीचे की ओर रहता है। ऐसी हालत में मैं कैसे देख सकता था उनका चेहरा।

जज : दिस इज राइट। हैलो मिस्टर भटनागर, जल्दी करिये। थ्री फिफ्टी हो गया।

भटनागर : बस हुजूर, एक सवाल और है। हाँ जी सत्यपाल, यह और बता दीजिए कि खाऊलाल की मौत किस बीमारी से हुई थी ?

सत्यपाल : (रोनी सूरत बनाकर) हाय–हाय वकील साहब, एक बीमारी हो तो बताऊँ आपको। डॉक्टर बर्मन कहते थे इन्हें हैजा हो गया है, जौहरी साहब फरमाते थे फेफड़ा फट गया है, शर्मा कहते थे मलेरिया है, वर्मा कहते थे पीलिया है। डॉक्टर यादव का कहना था कि इनके पेट में फोड़ा हो गया है। मरते दम तक पता ही नहीं चला उनकी बीमारी का, बेचारे दवा खाते ही खाते मर गये, हमें अनाथ कर गये। (रोता है।)

जज : ओह सौरी, गवाह रोता क्यों है ?

शर्मा : हुजूर, यह सच्चा और भावुक आदमी है, अपने दोस्त की मौत की याद आते ही इसे, रोना आ गया है ? जाहिर है

कि खाऊलाल वास्तव में मर चुका है और यह भी साबित हो गया है कि झाऊलाल दरअसल खाऊलाल का पूत है, केस मजबूत है।

भटनागर : देखिये सरकार, गवाह की सब बातें बेसिर पैर की हैं। किसी भी सवाल का साफ जवाब नहीं दिया गया। मुझे अभी–अभी मालूम हुआ है कि यह गवाह कुछ रूपयों में तय होकर आया है।

जज : मिस्टर भटनागर, दिस इज डाइरेक्ट ब्लेम।

शर्मा : भटनागर साहब, होश–हवास दुरुस्त रखकर बातें कीजिए!

भटनागर : शटअप !

शर्मा : बको मत !

भटनागर : बदतमीज हो तुम।

शर्मा : गधे की दुम हो तुम।

जज : आर्डर–आर्डर। मिस्टर भटनागर, आपने मुद्दई के वकील की और कोर्ट की इन्सल्ट की है। इस जुर्म में आपके ऊपर पचास रुपया फाइन। मुद्दई का दावा डिकरी। केस फिनिश। (जज का प्रस्थान। भटनागर और झाऊलाल का निराशा की मुद्रा में माथा ठोकते हुए प्रस्थान)

शर्मा : हिप–हिप–हुर्रे।

सत्यपाल : फि–फि–फुर्रे।

(वकील और गवाह खुशी से नाचते हैं। झंडामल बाहर जाकर एक माला लाकर सत्यपाल के गले में डालता है और उसे पकड़कर जज की कुर्सी पर बैठाता है। इस दृश्य को पेशकार साहब मुँह फाड़कर आश्चर्य की मुद्रा में देखते हैं। बाद में कुछ व्यक्ति झंडामल के पक्ष की ओर आ जाते हैं और सब मिलकर गवाह की आरती गाते हैं।)

आरती

ओम् जय सतपाल हरे।
झंडामल के संकट क्षण में दूर करे।
साँचे को तुम झूठ करौ अरु झूठे को साँचौ
स्वामी झूठे को साँचौ
गीता कौ नित पाठ करौ तुम नारायण बाँचौ।।ओम्
परमारथ की चटनी तुमने श्रद्धा सों चाटी,
स्वामी श्रद्धा सों चाटीं
यही कारण छह महिना की सख्त सजा काटी।।ओम्
जीवन–भर यही काम तिहारौ, लड़वाये कुत्ता,
स्वामी लड़वाये कुत्ता
न्यायालय में भई वकीलन में गुत्थमगुत्था।। ओम्

अभ्यास के प्रश्न

अति लघु उत्तरीय प्रश्न :–

(1) काका हाथरसी की कविता किस विधा के अन्तर्गत आती है ?

(2) 'फ्री स्टाइल गवाही' में मुकदमे का फैसला किसके पक्ष में हुआ ?

(3) 'फ्री स्टाइल गवाही' देने में किसे महारत हासिल थी ?

(4) गवाह को झूठी गवाही के लिए कितने रुपये देना तय हुआ था ?

(5) सच को झूठ और झूठ को सच कर देना किसके बाँए हाथ का कार्य था ?

लघु उत्तरीय प्रश्नः–

(6) किसने किससे कहा ?

(1) म्हारो तो कलेजो हिल रहियो है।

(2) हमें भी बालू से तेल निकालने का अभ्यास हो गया है।

(3) उनके चेहरे का रंग बता सकते हैं आप?

(7) झंडामल ने सत्यपाल को गवाही के लिए क्यों तय किया ?

(8) जज वकील से क्यों नाराज हुआ ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :–

प्रश्न क्र. 9. सत्यपाल की चारित्रिक विशेषताएँ लिखिए।

प्रश्न क्र. 10. 'फ्री स्टाइल गवाही' एकांकी के उद्देश्य लिखिए।

प्रश्न क्र. 11. 'फ्री स्टाइल गवाही' के शीर्षक के नामकरण के औचित्य पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न क्र. 12. 'फ्री स्टाइल गवाही' न्याय की विसंगतियों पर व्यंग्य है, इस पर अपने विचार लिखिए।

प्रश्न क्र. 13. सत्यपाल की आरती में क्या–क्या विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं ?

प्रश्न क्र. 14. सप्रसंग व्याख्या कीजिए

(1) अजी वकील साहब .... अभ्यास हो गया है।

(2) अरे पेशकार जी .... कर देउ फटाफट्ट।

(3) जून में नहीं.......... नाले में बह गये।

कठिन शब्दों के अर्थ

कठिन शब्दों के अर्थ :–

कलेजा हिलना– घबरा जाना।
भाया– भाई। **कुपात्तर**– नालायक।
बालू से तेल निकालना– असंभव को संभव करना। **इन्सल्ट**– अपमान।
सोहबत का असर– सत्संगति का प्रभाव।

बेसिर पैर की – जिसका ओर–छोर न हो।
जाड़ा मारगियो– ठंड खा गई।
पट्टहोगियो – नष्ट हो गया।
फ्री स्टाइल – मनमाने ढंग से।
के चीज – कौन सी बड़ी चीज।

इकाई – 6

व्याकरण

छन्दः– छन्द वह साँचा है जिसके अनुसार कविता ढलती है। छन्द वह पैमाना है जिससे कविता की लम्बाई नापी जाती है। मात्रा, वर्ण, यति, गति, लय, तुक से बंधी रचना छन्द कहलाती हैं। कुछ छन्दों का उदाहरण दृष्टव्य है –

कवित्त

लक्षण :–

(1) कवित्त एक वर्णिक छन्द है।

(2) इसके प्रत्येक चरण में 31 वर्ण होते हैं।

(3) 16 वें और 15 वें वर्ण पर विराम होता है।

(4) प्रत्येक चरण का अंतिम वर्ण गुरू होता है।

उदाहरण –

साजि चतुरंग सैन अंग में उमंग धारि,
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है।
भूषन भनत नाद–विहद नगारन के,
नदी–नद मद गैवरन के रलत है।

सवैया

लक्षण :–

(1) सवैया एक वर्णिक छंद है।

(2) इसके प्रत्येक चरण में 22 से लेकर 26 तक वर्ण होते हैं।

(3) इस छंद के प्रकार हैं – मालती, किरीट, मत्तगयंद, मदिरा, दुर्मिल सवैया आदि।

(4) यहाँ केवल मत्तगयंद सवैया का उदाहरण प्रस्तुत है।

(5) मत्तगयंद सवैया के प्रत्येक चरण में भगण (ऽ।।) होते हैं।

(6) इसके अंत में दो गुरु वर्ण होते हैं।

(7) प्रत्येक चरण में 23 वर्ण होते हैं –

उदाहरण –

धूरि भरै अति शोभित श्याम जू, तैसी बनी सिर सुंदर चोटी।

खेलत खात फिरै अँगना, पग पैंजनि बाजति पीरि कछौटी।

वा छवि को रसखानि विलोकति, वारत काम कला निधि कोटी।

काग के भाग बड़े सजनी, हरि हाथ सों ले गए माखन रोटी।।

कुंडलियाँ

लक्षण :–

(1) यह विषम मात्रिक छन्द है।

(2) इसके कुल छः चरण होते हैं।

(3) इसके प्रत्येक चरण में 24–24 मात्राएँ होती हैं।

(4) यह छन्द दोहा + रोला से मिलकर बनता है।

(5) दोहे के प्रथम और तृतीय चरण में 13 मात्राएँ तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में 11–11 मात्राएँ होती हैं।

(6) रोला, दोहा का उल्टा होता है।

(7) रोला के प्रथम + तृतीय चरण में 11–11 मात्राएँ तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में 13–13 मात्राएँ होती हैं।

(8) रोला का अंतिम शब्द दोहे का प्रथम शब्द होता है।

(9) दोहे का चतुर्थ चरण रोला का प्रथम चरण बनता है।

(10) पाँचवे चरण में कवि का नाम आता है।

उदाहरण –

गुन के गाहक सहस नर, बिनु गुन लहै न कोय।
जैसे कागा कोकिला, सब्द सुनै सब कोय।
सब्द सुनै सब कोय, कोकिला सबै सुहावन।
दोऊ को इक रंग, काग सब भये अपावन।
कह गिरधर कविराय, सुनो हो ठाकुर मन के,
बिनु गुन लहै न कोय, सहस नर गाहक गुन के।।

छप्पय

लक्षण–

(1) विषम मात्रिक छन्द है।

(2) इसमें कुल छः चरण होते हैं।

(3) प्रथम चार चरण रोला के तथा अंतिम दो चरण उल्लाला के होते हैं।

(4) प्रथम चार चरण 24–24 मात्रा के होते हैं 11–13 पर यति होती है।

(5) उल्लाला के प्रत्येक चरण में कुल 28 मात्राएँ होती हैं 15–13 मात्रा पर यति होती है।

(6) उल्लाला के प्रथम + तृतीय चरण 15–15 मात्राओं के होते हैं। दूसरे और चौथे चरण में 13–13 मात्राएँ होती हैं।

उदाहरण –

मरे बैल गरियार, मरै वह अड़ियल टट्टू।
मरै कर्कशा नारि, मरै वह खसम निखट्टू।
ब्राह्मण सो मरि जाय, हाथ लै मदिरा प्यावैं।
पूत सोइ मरि जाय, जो कुल को दाग लगावै।
अरु बेनियाव राजा मरै, तबै नींद भरि सोइये।
बैताल कहैं विक्रम सुनौ, एते मरै न रोइये।।

इकाई – 07

पाठ – 16
नौका विहार

सुमित्रानन्दन पंत

कवि परिचय

जन्म – सुमित्रानन्दन पंत जी का जन्म हिमालय के सुरम्य प्रदेश कूर्मांचल (कुमायूँ) के कौसानी ग्राम में 14 मई सन् 1900 को हुआ था। जन्म के कुछ ही घंटों के पश्चात् उनकी माता का देहांत हो जाने के कारण दादी ने उनका पालन–पोषण किया।

शिक्षा–

प्रारंभिक शिक्षा ग्राम कौसानी में ही ग्रहण की। उसके पश्चात् उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए अल्मोड़ा आये। यहीं उन्होंने अपना नाम गुसाईदत्त से सुमित्रानन्दन पंत रखा। जुलाई सन् 1919 में म्योर सेंट्रल कॉलेज इलाहाबाद में प्रवेश लिया। सन् 1921 में महात्मा गाँधी के आह्वान पर उन्होंने कॉलेज छोड़ दिया लेकिन अपने कोमल स्वभाव के कारण सत्याग्रह में भाग नहीं लिया।

प्रेरणा–

मातृ विहीन बालक पंत प्रकृति के सौन्दर्य में डूबे रहते थे। इसी एकाकीपन एवं प्राकृतिक सुंदरता के कारण उनका कोमल हृदय कवि बन गया। उन्होंने सात वर्ष की आयु में चौथी कक्षा में सर्वप्रथम छंद की रचना की।

रचनाएँ –

वीणा, ग्रंथि, पल्लव, गुंजन, युगवाणी, युगांत, स्वर्ण–किरण, स्वर्ण–धूलि आदि।

काव्यगत विशेषताएँ–

(1) प्रारंभिक रचनाओं जैसे–वीणा, ग्रंथि, पल्लव, गुंजन में प्रकृति की सुंदरता का सजीव रूप प्रस्तुत है।

(2) उनकी कविताओं में भावनाओं तथा कल्पनाओं का सम्मिश्रण है।

(3) उनकी छायावादी रचनाओं में चित्रात्मकता है।

(4) उन्होंने प्रकृति को नारी रूप में अभिव्यक्त कर नारी सौन्दर्य का उदात्त रूप प्रस्तुत किया है।

(5) गाँधीवादी विचारधारा को अपनाते हुए उन्होंने सत्यम्, शिवम्, सुंदरम को अपनाया।

(6) छायावादी कविताओं के बाद उन्होंने प्रगतिवादी चेतना की कविताएँ भी लिखीं।

(7) प्रगतिवादी कविताओं में सामाजिक विषमता के प्रति आक्रोश, शोषकों के प्रति विद्रोह तथा शोषितों के प्रति सहानुभूति का भाव दिखाई देता है।

(8) वे पुरानी अन्यायपूर्ण व्यवस्था को बदलकर नयी व्यवस्था लाना चाहते थे।

(9) उन्होंने आध्यात्म एवं दार्शनिक भावों से युक्त रचनाएँ लिखीं।

(10) वे अरविंद दर्शन से भी प्रवाहित हुए और अपनी कविताओं में इस विचारधारा को प्रस्तुत किया।

कला पक्ष–

भाषा– इनकी भाषा साहित्यिक खड़ी बोली है। इसमें प्रसाद एवं माधुर्य गुण का समावेश है। भाषा में लालित्य, प्रवाहशीलता, प्रांजलता, चित्रात्मकता, प्रभावशीलता है। तत्सम् शब्दों का बाहुल्य है। रचनाओं में शांत रस, लक्षणा, व्यंजना, अमिधा शब्द शक्तियों का प्रयोग है। अलकारों में अनुप्रास, रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, मानवीकरण अलंकारों का चमत्कार इनकी कविता में चार चाँद लगा देता है।

प्रतीक विधान, मूर्त विधान अप्रस्तुत योजना, बिम्ब योजना भी है।

साहित्य में स्थान –

प्रकृति के सुकुमार कवि पंत जी छायावाद के श्रेष्ठतम कवि हैं। हिन्दी साहित्य में प्रगतिवादी चेतना का संचार करने में इनकी अहम् भूमिका रही है। इन्हें ''कला और बूढ़ा चाँद'' पर साहित्य अकादमी, ''लोकायतन'' पर सोवियत एवं ''चिदम्बरा'' पर ज्ञानपीठ पुरुस्कार प्रदान किया गया है। पंतजी आधुनिक युग के मूर्धन्य कवि हैं।

केन्द्रीय–भाव –

पंतजी की प्रसिद्ध कविता नौका विहार सन् 1936 में लिखी गई। उस समय पंतजी प्रतापगढ़ के कालाकांकर रियासत के राजा के अतिथि बनकर गये थे। गंगा नदी के तट पर स्थित इस राजमहल से नाव से गंगा विहार हेतु जाते थे। इस कविता में चाँदनी रात में नौका विहार के विविध सुंदर दृश्य अंकित किये गए हैं। नौका विहार के चित्र सजीव एवं गतिशील हैं।

कविता

नौका विहार

— सुमित्रानन्दन पंत

शांत, स्निग्ध, ज्योत्स्ना उज्ज्वल।
अपलक अनंत, नीरव भूतल।
सैकत शैया पर दुग्ध धवल,
तन्वंगी गंगा, ग्रीष्म विरल,
लेटी हैं श्रांत, क्लांत, निश्चल।
तापस बाला गंगा निर्मल,
शशि मुख से दीपित मृदु करतल।
लहरें उर पर कोमल कुंतल।
गोरे अंगों पर सिहर–सिहर,
लहराता तार तरल सुंदर।
चंचल अंचल सा नीलांबर।
साड़ी की सिकुड़न सी जिस पर,
शशि की रेशमा विभा से भर।
सिमटी है वर्तुल, मृदुल लहर ।। 1।।

चाँदनी रात का प्रथम प्रहर,
हम चले नाव लेकर सत्वर।
सिकता की सस्मित सीपी पर,
मोती की ज्योत्सना रही विचर।
लो, पालें चढ़ी, उठा लंगर।
मृदु मंद–मंद, मंथर–मंथर,
लघु तरणि हंसिनी–सी सुंदर।
तिर रही खोल पालों के पर।
निश्चल जल के शुचि दर्पण पर,
बिंबित हो रजत पुलिन निर्भर।
दुहरे ऊँचे लगते क्षण भर।
कालाकांकर का राजभवन,
सोया जल में निश्चिंत प्रमन।
पलकों पर वैभव स्वप्न सघन। ।। 2।।

नौका में उठती जल–हिलोर,
हिल पड़ते नभ के ओर–छोर।
विस्फारित नयनों से निश्चल,
कुछ खोज रहे चल तारक दल।
ज्योतित कर नभ का अंतस्तल,
जिनके लघु दीपों को चंचल,
अंचल की ओट किए अविरल।
फिरती लहरें लुक–छिप पल–पल।
सामने शुक्र की छवि झलमल,
तैरती परी–सी जल में कल,
रूपहरे कचों में हो ओझल।
लहरों के घूंघट से झुक–झुक,
दशमी का शशि निज तिर्यकमुख।
दिखलाता, मुग्धा सा रूक–रूक। ।। 3।।

अब पहुँची चपला बीच धार,
छिप गया चाँदनी का कगार।
दो बाहों से दूरस्थ तीर,
धारा का कृश कोमल शरीर।
आलिंगन करने को अधीर।
अति दूर क्षितिज पर विटप–भाल,
लगती भू रेखा सी अराल,
अपलक नभ नील–नयन विशाल,
माँ के उर पर शिशु–सा,
समीप, सोया धारा में एक द्वीप,
उर्मिल प्रवाह को कर प्रतीप,
वह कौन विहग ? क्या विकल कोक,
उड़ता हरने निज विरल शोक ?
छाया की कोकी को विलोक ।। 4।।
पतवार घुमा अब प्रतनु भार,
नौका घूमी विपरीत धार।
डांडों के चल करतल पसार,
भर–भर मुक्ताफल फेन स्फार,
बिखराती जल में तार हार।
चाँदी के साँपों की रलमल,

नाचती रश्मियाँ जल में चल,
रेखाओं सी खिंच तरल–तरल।
लहरों की लतिकाओं में खिल,
सौ–सौ शशि, सौ–सौ उडु झिलमिल।
फैले–फूले जल में फेनिल।
अब उथला सरिता का प्रवाह,
लग्गी से ले–ले सहज थाह।
हम बढ़े घाट को सहोत्साह।। 5।।

ज्यों–ज्यों लगती है नाव पार।
उर में आलोकित शत् विचार।
इस धारा–सा ही जग का क्रम,
शाश्वत इस जीवन का उद्गम।
शाश्वत है गति, शाश्वत है संगम।
शाश्वत नभ का नीला विकास,
शाश्वत शशि का यह रजत हास,
शाश्वत लघु लहरों का विलास।
हे जग–जीवन के कर्णधार !
चिर जन्म–मरण के आर–पार।
शाश्वत जीवन–नौका विहार।
मैं भूल गया अस्तित्व ज्ञान,
जीवन का यह शाश्वत प्रमाण।
करता मुझको अमरत्व दान।। 6।।

प्रश्न–अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. नौका विहार कविता का मूल रस क्या है ?
2. पंत जी की यह कविता किस वाद की है ?
3. 'मृदु मंद–मंद, मंथर–मंथर' में कौन सा अलंकार है ?
4. लघु तरिणी किसके समान प्रतीत हो रही है ?
5. 'कालाकांकर का राजभवन सोया जल में निश्चिंत प्रमन' में कौन सी शब्द शक्ति है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(1) तापस बाला गंगा के सौन्दर्य का वर्णन कीजिए।

(2) रात्रि के प्रथम प्रहर में नाव की सुंदरता का वर्णन कीजिए।
(3) धारा के बीच में दूर स्थित वृक्ष को देखकर कवि क्या सोचते हैं ?
(4) नदी के किनारे द्वीप देखकर कवि कौन सी कल्पना करते हैं ?
(5) कोक पक्षी क्यों उड़ रहा है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

(1) गंगाजल में प्रतिबिंबित तारे एवं चंद्रमा के लिए कवि ने क्या उद्भावनाएँ व्यक्त की हैं?
(2) धारा के विपरीत नौका के घूमने पर नदी में कौन–सा दृश्य दर्शित होता है ?
(3) कवि ने नौका–विहार की तुलना जीवन के शाश्वत–क्रम से किस प्रकार की है ?
(4) पंतजी के प्रकृति–चित्रण की विशेषताएँ लिखिए ।
(5) इस कविता के आधार पर छायावाद की कोई तीन विशेषताएँ सोदाहरण प्रस्तुत कीजिए।

सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

(1) शांत स्निग्ध ज्योत्सना....... कोमल कुंतल।
(2) इस धारा सा ही .... नौका विहार।

शब्दार्थ

स्निग्ध = चिकनी ।
ज्योत्सना = चाँदनी।
नीरव = शांत।
भूतल = पृथ्वी।
सैकत = रेतीली।
धवल = सफेद।
तन्वंगी = पतली।
श्रांत = थकी हुई।
क्लांत = मलिन।
निश्चल = गतिहीन।
करतल = हथेली।
कुंतल = केश।
विभा = चमक।
वर्तुल = गोलाकार।
सत्वर = तेज गति से।
सिकता = रेत।
शुचि = पवित्र, साफ।
पुलिन = किनारा।
प्रमन = शांत मन।
तिर्यक = टेढ़ा।
कृश = कमजोर।
अराल = टेढ़ी।
शाश्वत = अमर।
प्रतीप = उल्टा करना।

संकलनकर्ता
डॉ. साधना कसार

पाठ – 17
निंदा रस

लेखक परिचय :–

हरिशंकर परसाई

जन्म – हरिशंकर परसाई का जन्म मध्यप्रदेश के होशंगाबाद जिले के जमानी ग्राम में सन् 1924 को हुआ।

शिक्षा– उन्होंने नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. किया। कुछ वर्षों तक अध्यापन कार्य के पश्चात् नौकरी छोड़कर स्वतंत्र लेखन को ही जीवन का लक्ष्य बना लिया।

रचनाएँ– परसाई जी ने दो दर्जन से अधिक पुस्तकों की रचना की है। इनमें से मुख्य हैं –हँसते हैं, रोते हैं, जैसे– उनके दिन फिरे, रानी नागफनी की कहानी, तट की खोज, तब की बात और थी, भूत के पाँव पीछे, बेईमानी की परत, पगडंडियों का जमाना, सदाचार का ताबीज, शिकायत मुझे भी है और अंत में, ठिठुरता हुआ गणतंत्र, तिरछी रेखाएँ, विकलांग श्रद्धा का दौर आदि।

साहित्यिक विशेषताएँ–

(1) परसाई जी मूलतः व्यंग्यकार हैं।

(2) सामाजिक या राजनीतिक निबंधों में भी व्यंग्य परिलक्षित होता है।

(3) समाज सुधार के लिए वे व्यंग्य लिखते हैं।

(4) उन्होंने व्यक्ति, समाज व सरकार की कमजोरियों पर तीखा व्यंग्य किया है।

(5) भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता, रिश्वतखोरी आदि समस्याओं पर चुटीले व्यंग्य हैं।

(6) उन्होंने व्यंग्यात्मक कहानियों की भी रचना की है।

(7) यथार्थवादी व्यंग्यकार परसाई जी ने ललित निबंधों की रचना भी की है।

(8) व्यंग्यकार के अलावा आप 'वसुधा' नामक पत्रिका के संपादक भी रहे।

भाषा–शैली– परसाई जी व्यावहारिक भाषा, चुटीले संवादों एवं मुहावरों के प्रयोग द्वारा वातावरण का सजीव चित्र उकेर देते हैं। इनकी भाषा में तत्सम शब्दों की बहुलता नहीं है फिर भी स्वाभाविक रूप से तत्सम शब्दों का प्रयोग मिल जाता है। उर्दू, फारसी तथा अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग काफी अधिक है। उन्होंने अपनी रचनाओं में विचार–प्रेरक तीखी टिप्पणियाँ भी की हैं। लोककथा शैली के प्रयोग से रचनाएँ रोचक एवं प्रभावशाली बन पड़ी हैं। पौराणिक प्रसंगों का भी उल्लेख किया गया है। परसाई जी की शैली व्यंग्यात्मक है। इसके साथ ही विवेचनात्मक शैली के दर्शन भी होते हैं।

साहित्य में स्थान–

परसाई जी हिन्दी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ एवं सशक्त व्यंग्यकार हैं। सामाजिक एवं राजनीतिक व्यंग्य लिखने में परसाई जी अत्यंत कुशल हैं। व्यंग्य को विधा के रूप में स्थापित करने का श्रेय परसाई जी को प्राप्त है।

केन्द्रीय भाव–

प्रस्तुत पाठ निंदा रस में परसाई जी ने निंदा को रस की तरह आनंद देने वाला माना है। निंदा का उद्‌गम हीनता तथा कमजोरी है। लेखक ने निंदकों पर तीखे प्रहार किये हैं, जो कि मधुर व्यंग्य की सृष्टि करते हैं।

हास्य–व्यंग्य

निंदा रस

हरिशंकर परसाई

'क' कई महीने बाद आए थे। सुबह चाय पीकर अखबार देख रहा था कि वे 'तूफान' की तरह कमरे में घुसे, 'साइक्लोन' की तरह मुझे अपनी भुजाओं में जकड़ा तो मुझे धृतराष्ट्र की भुजाओं में जकड़े भीम के पुतले की याद आ गई। वह धृतराष्ट्र की ही जकड़ थी। अंधे धृतराष्ट्र ने टटोलते हुए पूछा, 'कहाँ है भीम ? आ बेटा, तुझे कलेजे से लगा लूँ' और जब भीम का पुतला उनकी पकड़ में आ गया, उन्होंने प्राणघाती स्नेह से उसे जकड़कर चूर कर डाला।

ऐसे मौके पर हम अक्सर अपने पुतले को **अँकवार** में दे देते हैं, हम अलग खड़े देखते रहते हैं। 'क' से क्या मैं गले मिला ? क्या मुझे उसने समेटकर कलेजे से लगा लिया ? हरगिज नहीं। मैंने अपना पुतला ही उसे दिया। पुतला इसलिए उसकी भुजाओं में सौंप दिया कि मुझे मालूम था कि मैं धृतराष्ट्र से मिल रहा हूँ। पिछली रात को एक मित्र ने बताया कि 'क' अपनी ससुराल आया है और 'ग' के साथ बैठकर शाम को दो–तीन घंटे तुम्हारी निंदा करता रहा। इस सूचना के बाद जब आज सबेरे वह मेरे गले लगा तो मैंने शरीर से अपने मन को चुपचाप खिसका दिया और निःस्नेह कँटीली देह उसकी बाँहों में छोड़ दी। भावना के अगर काँटे होते तो उसे मालूम होता कि वह ukxQuhdksdystsls sfpiVk, gSNy dk/krjk"Vª tc vkfyaxu djsrksiqyk gh vkxsc<+kuk pkfg,A

ij og ejsk nksr vfHku; eaiwjk gS mlds vkl wHkj ugha vk, ckdhfeyu dsg"kkZyk dsl c fpUg i zdV gksx, & og xgjh vkReh;rk की जकड़, नयनों से छलकता वह असीम स्नेह और वह स्नेह–सिक्त वाणी।

बोला, 'अभी सुबह गाड़ी से उतरा और एकदम तुमसे मिलने चला आया जैसे आत्मा का एक खंड दूसरे खण्ड से मिलने को आतुर रहता है।' आते ही झूठ बोला कम्बख्त! कल का आया है, यह मुझे मेरा मित्र बता गया था। इस झूठ में कोई प्रयोजन शायद उसका न रहा हो। कुछ लोग बड़े निर्दोष मिथ्यावादी होते हैं। वे आदतन, प्रकृति के वशीभूत झूठ बोलते हैं। उनके मुख से निष्प्रयास निष्प्रयोजन झूठ ही निकलता है। मेरे एक रिश्तेदार हैं। वे अगर बंबई जा रहे हैं और उनसे पूछें, तो वे कहेंगे, 'कलकत्ता जा रहा हूँ।' ठीक बात उनके मुँह से निकल ही नहीं सकती। 'क' भी बड़ा निर्दोष, सहज–स्वाभाविक मिथ्यावादी है।

वह बैठा। कब आए ? कैसे हो ? वगैरह के बाद उसने 'ग' की निन्दा प्रारंभ कर दी। मनुष्य के लिए जो भी कर्म जघन्य हैं, वे सब 'ग' पर आरोपित कर उसने ऐसे गाढ़े काले तारकोल से उसकी तस्वीर खींची कि मैं सोचकर काँप उठा कि ऐसी ही काली तस्वीर मेरी 'ग' के सामने इसने कल शाम को खींची होगी।

सुबह की बातचीत में 'ग' प्रमुख विषय था। फिर तो जिस परिचित की बात निकल आती, उसी को चार–छह वाक्यों से धराशायी करके वह बढ़ लेता।

अद्भुत है मेरा यह मित्र। उसके पास दोषों का 'कैटलॉग' है। मैंने सोचा कि जब यह हर परिचित की निन्दा कर रहा है, तो क्यों न लगे हाथ विरोधियों की गत, इसके हाथों करा लूँ। मैं अपने विराधियों का नाम लेता गया और वह उन्हें

निन्दा की तलवार से काटता चला। जैसे लकड़ी चीरने की आरा मशीन के नीचे मजदूर लकड़ी का लट्ठा खिसकाता जाता है और वह चीरता जाता है, वैसे ही मैंने विरोधियों के नाम एक–एक करके खिसकाए और वह उन्हें काटता गया। कैसा आनंद था ! दुश्मनों को रणक्षेत्र में एक के बाद एक कटकर गिरते हुए देखकर, योद्धा को ऐसा ही सुख होता होगा।

मेरे मन में गत रात्रि के उस निन्दक मित्र के प्रति मैल नहीं रहा। दोनों एक हो गए। भेद तो रात्रि के अंधकार में ही मिटता है, दिन के उजाले में भेद स्पष्ट हो जाते हैं। निन्दा का ऐसा ही भेद–नाशक अँधेरा होता है। तीन–चार घंटे बाद, जब वह विदा हुआ, तो हम लोगों के मन में बड़ी शांति और तुष्टि थी।

निन्दा की ऐसी ही महिमा है। दो चार निन्दकों को एक जगह बैठकर निन्दा में निमग्न देखिए और तुलना कीजिए दो–चार ईश्वर भक्तों से जो रामधुन गा रहे हैं। निन्दकों की सी एकाग्रता, परस्पर आत्मीयता, निमग्नता भक्तों में दुर्लभ है। इसीलिए संतों ने निन्दकों को 'आँगन कुटी छवाय' पास रखने की सलाह दी है।

कुछ 'मिशनरी' निन्दक मैंने देखे हैं। उनका किसी से बैर नहीं, द्वेष नहीं। वे किसी का बुरा नहीं सोचते। पर चौबीस घंटे वे निन्दा कर्म में बहुत पवित्र भाव से लगे रहते हैं। उनकी नितांत निर्लिप्तता, निष्पक्षता इसी से मालूम होती है कि वे प्रसंग आने पर अपने बाप की पगड़ी भी उसी आनंद से उछालते हैं, जिस आनंद से अन्य लोग दुश्मन की, निन्दा इनके लिए 'टॉनिक' होती है।

ट्रेड यूनियन के इस जमाने में निन्दकों के संघ बन गए हैं। संघ के सदस्य जहाँ–तहाँ से खबरें लाते हैं और अपने संघ के प्रधान को सौंपते हैं। यह कच्चा माल हुआ। अब प्रधान उनका पक्का माल बनाएगा और सब सदस्यों को 'बहुजन हिताय' मुफ्त बाँटने के लिए दे देगा। यह फुरसत का काम है, इसलिए जिनके पास कुछ और करने को नहीं होता, वे इसे बड़ी खूबी से करते हैं। एक दिन हमसे एक ऐसे संघ के अध्यक्ष ने कहा, 'यार, आजकल लोग तुम्हारे बारे में बहुत बुरा–बुरा कहते हैं।' हमने कहा, 'आपके बारे में मुझसे कोई भी बुरा नहीं कहता। लोग जानते हैं कि आपके कानों के घूरे में इस तरह का कचरा मजे में डाला जा सकता है।'

ईर्ष्या–द्वेष से प्रेरित निन्दा भी होती है, लेकिन इसमें वह मजा नहीं जो मिशनरी भाव से निन्दा करने में होता है। इस प्रकार निन्दक बड़ा दुःखी होता है। ईर्ष्या–द्वेष से चौबीसों घंटे जलता है और निन्दा का जल छिड़ककर कुछ शांति अनुभव करता है। ऐसा निन्दक बड़ा दयनीय होता है। अपनी अक्षमता से पीड़ित वह बेचारा दूसरे की सक्षमता के चाँद को देखकर सारी रात श्वान जैसा भौंकता है। ईर्ष्या–द्वेष से प्रेरित निंदा करने वाले को कोई दंड देने की जरूरत नहीं है। वह निंदक बेचारा स्वयं दंडित होता है। आप चैन से सोइए और वह जलन के कारण सो नहीं पाता। उसे और क्या दंड चाहिए? निरंतर अच्छे काम करते जाने से उसका दंड भी सख्त होता जाता है। जैसे, एक कवि ने एक अच्छी कविता लिखी, ईर्ष्या ग्रस्त निन्दक को कष्ट होगा। अब अगर एक और अच्छी कविता लिख दी, तो उसका कष्ट दुगुना हो जाएगा।

निंदा का उद्‌गम ही हीनता और कमजोरी से होता है। मनुष्य अपनी हीनता से दबता है। वह दूसरों की निन्दा करके ऐसा अनुभव करता है कि वे सब निकृष्ट हैं और वह उनसे अच्छा है। उसके अहं की इससे तुष्टि होती है। बड़ी लकीर को कुछ मिटाकर छोटी लकीर बड़ी बनती है। ज्यों–ज्यों

कर्म क्षीण होता जाता है, त्यों–त्यों निंदा की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। कठिन कर्म ही ईर्ष्या–द्वेष और उनसे उत्पन्न निंदा को मारता है। इंद्र बड़ा ईर्ष्यालु माना जाता है, क्योंकि वह निठल्ला है। स्वर्ग में देवताओं को बिना उगाया अन्न, बिना बनाया महल और बिन–बोए फल मिलते हैं। अकर्मण्यता में उन्हें अप्रतिष्ठित होने का भय बना रहता है, इसलिए कर्मी मनुष्यों से उन्हें ईर्ष्या होती है।

निंदा कुछ लोगों की पूँजी होती है। बड़ा लंबा–चौड़ा व्यापार फैलाते हैं, वे इस पूँजी से। कई लोगों की प्रतिष्ठा ही दूसरों की **कलंक कथाओं** के पारायण पर आधारित होती है। बड़े रसविभोर होकर वे जिस–तिस की सत्यकल्पित कलंक कथा सुनाते हैं और स्वयं को पूर्ण संत समझने की तुष्टि का अनुभव करते हैं। आप इनके पास बैठिए और सुन लीजिए, 'बड़ा खराब जमाना आ गया। तुमने सुना ? फलाँ और अमुक ....।' अपने चरित्र पर आँख डालकर देखने की उन्हें फुरसत नहीं होती। एक कहानी याद आ रही है। एक स्त्री किसी सहेली के पति की निन्दा अपने पति से कर रही है। वह बड़ा उचक्का, दगाबाज आदमी है। बेईमानी से पैसा कमाता है। कहती है कि मैं उस सहेली की जगह होती तो ऐसे पति को त्याग देती। तब उसका पति उसके सामने यह रहस्य खोलता है कि वह स्वयं बेईमानी से इतना पैसा कमाता है। सुनकर स्त्री स्तब्ध रह जाती है। क्या उसने पति को त्याग दिया ? जी हाँ, वह दूसरे कमरे में चली गई।

कभी–कभी ऐसा भी होता है कि हममें जो करने की क्षमता नहीं है, वह यदि कोई करता है तो हमारे पिलपिले अहं को धक्का लगता है, हममें हीनता और **ग्लानि** आती है। तब हम उसकी निंदा करके उससे अपने को अच्छा समझकर तुष्ट होते हैं।

उस मित्र की मुलाकात के करीब दस–बारह घंटे बाद यह सब मन में आ रहा है। अब कुछ तटस्थ हो गया हूँ। सुबह जब उसके साथ बैठा था तब मैं स्वयं निंदा के 'काला सागर' में डूबता–उतराता था, **कल्लोल** कर रहा था। बड़ा रस है न निंदा में। सूरदास ने इसलिए इसे 'निंदा सबद रसाल' कहा है।

प्रश्न–अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. लेखक के मित्र ने जब लेखक को भुजाओं में जकड़ा तो लेखक को किसकी याद आ गई ?
2. भावना के अगर काँटे होते तो मित्र को क्या महसूस होता ?
3. जो प्रकृति के वशीभूत झूठ बोलते हैं, उन्हें लेखक ने किस श्रेणी में शामिल किया है ?
4. सूरदास की कौन–सी पंक्ति पाठ के अंत में उद्धृत की गई है ?
5. कर्म के क्षीण होने पर निंदा की प्रवृत्ति बढ़ती है या कम होती है ?

लघु उत्तरीय प्रश्न –

(1) धृतराष्ट्र कौन थे ? लेखक ने उनका किसलिए उल्लेख किया है ?

(2) निंदा रस का उद्गम स्रोत बताइए ।

(3) निंदा कैसे लागों के लिए टॉनिक होती है? और कैसे लोगों के लिए दर्द ?

(4) निंदा किस प्रकार कुछ लोगों की पूँजी होती है ?

(5) कुछ लोग बड़े निर्दोष मिथ्यावादी होते हैं, इसका आशय स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

(1) निंदा की महिमा का वर्णन पाठ के आधार पर कीजिए।

(2) किन्हीं पाँच व्यंग्य–कथनों का चयन करके उनमें निहित व्यंग्य को स्पष्ट कीजिए।

(3) लोग निंदक क्यों बन जाते हैं ? निंदा की प्रवृत्ति से बचने का तथा अपने निंदकों को उचित उत्तर देने का क्या उपाय है ?

(4) 'कभी–कभी ऐसा भी होता है कि हम में जो करने की क्षमता नहीं है, वह यदि कोई करता है तो हमारे पिलपिले अहम को धक्का लगता है'– इस कथन का आशय स्पष्ट कीजिए।

(5) इस पाठ का सारांश लिखिए।

व्याख्या के प्रश्न –

(1) लोग जानते हैं कि आपके कानों के घूरे .... जा सकता है।

(2) भावना के अगर काँटे ....

शब्दार्थ

साइक्लोन	=	चक्रवात।
मिथ्यावादी	=	झूठ बोलने वाला।
निष्प्रयास	=	बिना किसी कोशिश के।
निष्प्रयोजन	=	बिना किसी उद्देश्य के।
निकृष्ट	=	निम्न।
तुष्टि	=	संतोष।
पारायण	=	श्रद्धा भाव के साथ किया जाने वाला पाठ।
अंकवार	=	बाहों में।
जघन्य	=	भयंकर।
आरोपित	=	लादकर।
कैटलॉग	=	सूची–पत्र।
बहुजन हिताय	=	बहुत लोगों के हित में।
कलंक–कथा	=	बदनामी की कहानी।
पिलपिले	=	कमजोर।
कल्लोल	=	खेल।
रसाल	=	मीठे।
सबद	=	शब्द।
टॉनिक	=	ताकत की दवा।
क्षीण	=	कमजोर।
दुर्लभ	=	कठिनाई से प्राप्त होने वाला।

पाठ – 18
सुभाषचन्द्र बोस का पत्र

– संकलित

(नेता जी सुभाषचन्द्र बोस ने यह पत्र एन. सी. केलकर के नाम म्याँमार (बर्मा) जेल से लिखा था। इस पत्र में लोकमान्य तिलक को उसी जेल में दी जाने वाली भयंकर यातनाओं के विषय में जानकारी दी गयी है। जेल में शारीरिक और मानसिक यन्त्रणा झेलते हुए, लोकमान्य तिलक ने 'गीता भाष्य' जैसे पांडित्यपूर्ण ग्रन्थ की रचना की थी। नेता जी ने इसके लिए उनके अपूर्व धैर्य, साहस और एकाग्रचितता की प्रशंसा की है।)

प्रिय श्री केलकर,

मैं पिछले कुछ महीनों से आपको पत्र लिखने की सोच रहा था, जिसका कारण केवल यह रहा है कि आप तक ऐसी जानकारी पहुँचा दूँ जिसमें आपको दिलचस्पी होगी। मैं नहीं जानता कि आपको मालूम है या नहीं कि मैं यहाँ गत जनवरी से कारावास में हूँ। जब बरहमपुर जेल (बंगाल) से मुझे माँडले जेल के लिए स्थानान्तरण का आदेश मिला था, तब मुझे यह स्मरण नहीं आया था कि लोकमान्य तिलक ने अपने कारावास काल का अधिकांश भाग माँडले जेल में ही गुजारा था।

इस चहारदीवारी में, यहाँ के बहुत ही हतोत्साहित कर देने वाले परिवेश में, स्वर्गीय लोकमान्य ने अपने सुप्रसिद्ध 'गीता भाष्य' ग्रन्थ का प्रणयन किया था जिसने मेरी नम्र राय में उन्हें 'शंकर' और 'रामानुज' जैसे प्रकांड भाष्कारों की श्रेणी में स्थापित कर दिया है।

जेल के जिस वार्ड में लोकमान्य रहते थे वह आज तक सुरक्षित है, यद्यपि उसमें फेरबदल किया गया है और उसे बड़ा बनाया गया है। हमारे अपने जेल के वार्ड की तरह, वह लकड़ी के तख्तों से बना है, जिसमें गर्मी में लू और धूप से, वर्षा में पानी से, शीत ऋतु में सर्दी से तथा सभी ऋतुओं में धूलभरी हवाओं से बचाव नहीं हो पाता है। मेरे यहाँ पहुँचने के कुछ ही क्षण बाद, मुझे उस वार्ड का परिचय दिया गया। मुझे यह बात अच्छी नहीं लग रही थी कि मुझे भारत से निष्कासित कर दिया गया था, लेकिन मैंने भगवान को धन्यवाद दिया था कि माँडले में, अपनी मातृभूमि और स्वदेश से बलात् अनुपस्थिति के बावजूद मुझे पवित्र स्मृतियाँ राहत और प्रेरणा देंगी। अन्य जेलों की तरह यह भी एक ऐसा तीर्थस्थल है, जहाँ भारत का एक महानतम सपूत लगातार छह वर्ष तक रहा था।

हम जानते हैं कि लोकमान्य ने कारावास में छह वर्ष बिताये, लेकिन मुझे विश्वास है कि बहुत कम लोगों को यह पता होगा कि उस अवधि में उन्हें किस हद तक शारीरिक और मानसिक यन्त्रणाओं से गुजना पड़ा था। वे यहाँ एकदम अकेले रहे और उन्हें कोई बौद्धिक स्तर का साथी

नहीं मिला। मुझे विश्वास है कि उन्हें किसी अन्य बन्दी से मिलने–जुलने नहीं दिया जाता था।

उनको सान्त्वना देने वाली एकमात्र वस्तु किताब थी और वे एक कमरे में एकदम एकाकी रहते थे। यहाँ रहते हुए उन्हें दो या तीन भेंटों से अधिक का मौका नहीं दिया गया और ये भेंट भी पुलिस और जेल अधिकारियों की उपस्थिति में हुई होंगी, जिनसे वे कभी खुलकर और हार्दिकता से बात नहीं कर पाये होंगे।

उन तक कोई भी अखबार नहीं पहुँचने दिया जाता था। उनकी जैसी प्रतिष्ठा और स्थिति वाले नेता को बाहरी दुनिया के घटनाचक्रों से एकदम अलग कर देना, एक तरह की यन्त्रणा ही है और इस यन्त्रणा को जिसने भुगता है, वही जान सकता है। इसके अलावा उनके कारावास की अधिकांश अवधि में देश का राजनैतिक जीवन मंद गति से खिसक रहा था और इस विचार ने उन्हें कोई संतोष नहीं दिया होगा कि जिस उद्देश्य को उन्होंने अपनाया था, वह उनकी अनुपस्थिति में किस गति से आगे बढ़ रहा है।

उनकी शारीरिक यन्त्रणा के बारे में जितना ही कम कहा जाय, बेहतर होगा। वे दंड–संहिता के अन्तर्गत बन्दी थे और इस प्रकार आज के राजबन्दियों की अपेक्षा कुछ मायनों में उनकी दिनचर्या कहीं अधिक कठोर रही होगी। इसके अलावा उन्हें मधुमेह की बीमारी थी। जब लोकमान्य यहाँ थे, मॉडले का मौसम तब भी प्रायः ऐसा रहा होगा जैसा वहॉ आजकल है और अगर आज नौजवानों को शिकायत है कि वहाँ की जलवायु शिथिल कर देने वाली और मंदाग्नि तथा गठिया को जन्म देने वाली है और धीरे–धीरे वह व्यक्ति की जीवन–शक्ति को सोख लेती है, तो लोकमान्य ने, जो वयोवृद्ध थे, कितना कष्ट झेला होगा।

लेकिन इस कारागार की चहारदीवारियों में उन्होंने क्या यातनाएँ सहीं, इसके विषय में लोगों को बहुत कम जानकारी है। कितने लोगों को पता होता है, उन अनेक छोटी–छोटी बातों का, जो किसी बन्दी के जीवन में सुइयों की चुभन बन जाती हैं और जीवन को दूभर बना देती हैं। वे गीता की भावना में मग्न रहते थे और शायद इसलिए दुःख और यन्त्रणाओं से ऊपर रहते थे। यही कारण है कि उन्होंने उन यंत्रणाओं से बारे में किसी से कभी एक शब्द भी नहीं कहा।

समय–समय पर मैं इस सोच में डूबता रहता हूँ कि कैसे लोकमान्य को अपने बहुमूल्य जीवन के छह वर्ष इन परिस्थितियों में बिताने के लिए विवश होना पड़ा था। हर बार मैंने अपने आपसे पूछा, 'अगर नौजवानों को इतना कष्ट महसूस होता है तो महान लोकमान्य को अपने समय में कितनी पीड़ा सहनी पड़ी होगी, जिसके विषय में उनके देशवासियों को कुछ भी पता नहीं रहा होगा।' यह विश्व भगवान् की कृति है, लेकिन जेलें मानव के कृतित्व की निशानी हैं। उनकी अपनी एक अलग ही दुनिया है और सभ्य समाज ने जिन विचारों और संस्कारों को प्रतिबद्ध होकर स्वीकार किया है, वे जेलों में लागू नहीं होते। अपनी आत्मा के ह्रास के बिना, बन्दी–जीवन के प्रति अपने आपको अनुकूल बना पाना आसान नहीं है। इसके लिए हमें पिछली आदतें छोड़नी होती हैं और फिर भी स्वास्थ्य और स्फूर्ति बनाए

रखनी होती है। केवल लोकमान्य जैसा दार्शनिक ही, उस यन्त्रणा और दासता के बीच मानसिक सन्तुलन बनाये रख सकता था और गीता भाष्य जैसे विशाल एवं युग–निर्माणकारी ग्रन्थ का प्रणयन कर सकता था।

मैं जितना ही इस विषय पर चिन्तन करता हूँ उतना ही ज्यादा मैं उनके प्रति आदर और श्रद्धा में डूब जाता हूँ कि मेरे देशवासी लोकमान्य की महत्ता को आँकते हुए इन सभी तथ्यों को भी दृष्टिपथ में रखेंगे। जो महापुरुष मधुमेह से पीड़ित होने के बावजूद इतने सुदीर्घ कारावास को झेलता गया और जिसने उन अन्धकारमय दिनों में अपनी मातृभूमि के लिए ऐसी अमूल्य भेंट तैयार की, उसे विश्व के महापुरुषों की श्रेणी में प्रथम पंक्ति में स्थान मिलना चाहिए।

लेकिन लोकमान्य ने प्रकृति के जिन अटल नियमों से अपने बन्दी जीवन के दौरान टक्कर ली थी, उनको अपना बदला लेना ही था। अगर मैं कहूँ तो मेरा विश्वास है कि लोकमान्य ने जब मॉडले को अन्तिम नमस्कार किया था तो उनके जीवन के दिन गिने–चुने ही रह गये थे। निःसंदेह यह एक गम्भीर दुःख का विषय है, कि हम अपने महानतम् पुरुषों को इस प्रकार खोते रहे, लेकिन मैं यह भी सोचता हूँ कि क्या वह दुर्भाग्य किसी न किसी प्रकार टाला नहीं जा सकता था।

आदपूर्वक।
आपका स्नेहभाजन,
सुभाषचन्द्र बोस

टिप्पणी

एन.सी. केलकर —तत्कालीन विदर्भ के काँग्रेस के वरिष्ठ नेता। बाद में 'स्वराज्य दल' में सम्मिलित हो गये थे। लोकमान्य तिलक के निधन के पश्चात् 'केसरी' पत्रिका का सम्पादन श्री केलकर ने ही सँभाला था।

शंकर व रामानुज –शंकराचार्य और रामानुज भारत के प्रसिद्ध दार्शनिक थे। इन्होंने अपने–अपने ग्रंथों में ब्रह्म, जगत्, जीव आदि दार्शनिक तत्वों पर अपने–अपने विचार प्रकट किये हैं और वेदों का भाष्य लिखा है।

अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. सुभाषचन्द्र बोस को किस जेल के लिए स्थानान्तरण आदेश मिला ?
2. लोकमान्य तिलक ने मांडले जेल में किस ग्रन्थ की रचना की ?
3. लोकमान्य तिलक को कौन–सी बीमारी थी ?
4. लेखक ने यह पत्र किसे लिखा ?
5. लोकमान्य तिलक कितने वर्ष तक मॉडले जेल में रहे ?

लघु उत्तरीय प्रश्न –

1. जेल के जिस वार्ड में लोकमान्य तिलक रहते थे, वह कैसा था ?

2. सुभाषचन्द्र बोस ने माँडले जेल को तीर्थस्थल क्यों कहा ?
3. 'गीता भाष्य' के प्रणेता को कौन–सी उपाधि दी गई और क्यों ?
4. म्याँमार (बर्मा) देश की जलवायु के विषय में नौजवानों को क्या शिकायत थी ?
5. 'वे गीता की भावना में मग्न रहते थे'–गीता की भावना क्या है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

1. सुभाषचन्द्र बोस के अनुसार बंदी जीवन के अनुकूल बनाने के लिए स्वयं में क्या–क्या परिवर्तन लाने पड़ते हैं ?
2. सुभाषचन्द्र बोस ने जेलों की स्थिति के बारे में क्या बताया है ?
3. सुभाषचन्द्र बोस ने लोकमान्य तिलक को विश्व के महापुरुषों में प्रथम पंक्ति में स्थान मिलने की बात क्यों कही है ?
4. लोकमान्य को जेल में किन यंत्रणाओं से गुजरना पड़ा ?
5. इस पाठ के आधार पर लोकमान्य तिलक के चरित्र पर प्रकाश डालिए।

सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

1. धीरे–धीरे पर अटूट ....सोख लेता है।
2. अपनी मातृभूमि और ....प्रेरणा देंगी।

शब्दार्थ

स्थानान्तरण	= बदली, तबादला।	**बलात्**	= जबरदस्ती।
हतोत्साहित	= उत्साह, विहीनता।	**यंत्रणा**	= पीड़ा।
प्रणयन	= रचना करना।	**ह्रास**	= पतन।
भाष्यकार	= टीका करने वाला।		
प्रकांड	= बहुत ।		

इकाई – 8

पाठ – 19
सहयोग, श्रम और शांति
रामधारी सिंह 'दिनकर'

(1) जन्म एवं शिक्षा

राष्ट्रीय जागरण के ओजस्वी कवि रामधारी सिंह 'दिनकर' का जन्म सन् 1908 में बिहार प्रान्त के मुंगेर जिले के सिमरिया गाँव में हुआ था। पटना विश्वविद्यालय से उन्होंने बी.ए. आनर्स की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् मोकाना गाँव में ही आप प्रधानाध्यापक बन गए और वहीं से ही बिहार सरकार के प्रसार विभाग में डिप्टी डायरेक्टर के पद पर नियुक्त हुए। वे शासन तंत्र में बंधकर नहीं रहना चाहते थे, फलतः राष्ट्रीय आन्दोलनों में सहभागी एवं क्रांति दूत बनकर साहित्य जगत में अपना परिचय दिया। मुजफ्फरपुर में हिन्दी विभागाध्यक्ष रहे तथा भागलपुर विश्वविद्यालय में 'कुलपति' जैसे महत्वपूर्ण पदों को भी सुशोभित किया।

वे राज्य सभा के मनोनीत सदस्य भी रह चुके हैं। उनकी विशिष्ट सेवाओं के लिए भारत शासन ने इन्हें पद्मभूषण की उपाधि से भी अलंकृत किया। उन्हें ''उर्वशी'' नामक महाकाव्य पर सन् 1972 में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 24 अप्रैल सन् 1974 में वे पंचतत्व में विलीन हो गए।

(2) रचनाएँ –

(1) महाकाव्य– कुरूक्षेत्र, रश्मिरथी, उर्वशी।
(2) अन्य काव्य–रेणुका, हुँकार, इतिहास के आँसू, नीलकुसुम, चक्रवात आदि।
(3) निबंध एवं आलोचना–
(4) जीवनी– लोक देव नेहरू।
(5) बाल साहित्य– मिर्च का मजा, धूप–छाँह आदि।
(6) संस्कृति विषयक– भारतीय संस्कृति के चार अध्याय।

भावपक्ष–

दिनकर जी की कविताओं में राष्ट्रप्रेम, विश्व बंधुत्व, भारतीय संस्कृति के प्रति लगाव, दयनीय दशाओं का चित्रण, शोषण के प्रति घृणा आदि का सुन्दर एवं समग्र चित्र देखने को मिलता है।

उदाहरण–

श्वानों को मिलता दूध वस्त्र,
भूखे बालक अकुलाते हैं।
माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर,
जाड़ों की रात बिताते हैं।
मालिक जब इत्र फुलेलों पर,
पानी सा द्रव्य बहाते हैं।
युवती के लज्जा वसन बेच,
जब ब्याज चुकाये जाते हैं।
पापी महलों का अहंकार,
तब देता मुझको आमंत्रण।

काव्यगत विशेषताएँ–

(1) प्रेम और सौन्दर्य
(2) देश प्रेम और राष्ट्रीय भावना।
(3) जीवन का प्रगतिवादी वर्णन।
(4) यथार्थ का सफल चित्रण।

कलापक्ष–

दिनकर जी का भाषा ज्ञान अपार था। वे हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत के अतिरिक्त उर्दू एवं बंगला भाषाओं में भी गहरी पैठ रखते थे। उनकी भाषा भावानुगामिनी रही है। विषयानुसार उन्होंने तत्सम शब्दों को सरल रूप में प्रयोग करने का प्रयास किया है। इनका सम्पूर्ण काव्य प्रासादिकता से पूर्ण है।

प्रतीक एवं बिम्ब विधान यथास्थान द्रष्टव्य होते हैं। उपमा, रूपक, अनुप्रास, उत्प्रेक्षा संदेह, अपन्हुति, दृष्टांत, विभावना आदि अलंकार सहृदय पाठक को आनंद विभोर कर देते हैं। इसके साथ ही उन्होंने वर्णिक एवं मात्रिक छंदों का सफल प्रयोग किया है।

साहित्य में स्थान –

रामधारी सिंह 'दिनकर' आधुनिक काव्यधारा के सशक्त हस्ताक्षर हैं। बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व, राष्ट्र के पुरोधा, हिन्दी साहित्याकाश के दैदीप्यमान सूर्य के रूप में आपकी रश्मियाँ सदैव विकीर्ण हो रही हैं। प्रगतिवाद एवं राष्ट्रवादी काव्य धारा के आप शीर्षस्थ कवि हैं।

केन्द्रीय भाव –

संकलित अंश दिनकर जी के महाकाव्य कुरूक्षेत्र से उद्धृत किया गया है। मानव जगत की विसंगतियों, भेद–भावों और एकाधिकार की प्रवृत्ति से कवि का हृदय विचलित हो उठा है। अतः अशांति के कारणों का उल्लेख कर उनके निराकरण के सुझाव प्रस्तुत करता है। श्रम ही सब प्रकार की सुख–समृद्धि का मूलाधार है किन्तु धनी और बलवान निर्धनों के श्रम को छीन लेते हैं। फलतः निर्धन और अधिक निर्धन होता जा रहा है। कवि की मान्यता है कि प्रकृति–प्रदत्त पदार्थों पर सबका समान अधिकार है। कोई भी अपनी श्रम–शक्ति द्वारा उसे प्राप्त कर सकता है। भाग्य की रेखाओं का लेखा नहीं है। मानव अपने बाहुबल के आधार पर ही सफलताएँ प्राप्त करता है एवं सुख समृद्धि की ओर अग्रसर होता है।

कविता

सहयोग, श्रम और शांति

– दिनकर

धर्मराज ? यह भूमि किसी की नहीं क्रीत है दासी।
है जन्मना समान परस्पर इसके सभी निवासी।।
है सबको अधिकार मृत्तिका पोषक रस पीने का।
विविध अभावों से अ–शंक होकर जग में जीने का ।। 1।।

सबको मुक्त प्रकाश चाहिए, सबको मुक्त समीरण।
बाधा–रहित विकास, मुक्त आशंकाओं में जीवन।।
उद्‌भिज निभ चाहते सभी नर बढ़ना मुक्त गगन में।
अपना चरम विकास ढूँढना किसी प्रकार भुवन में।। 2।।

लेकिन विघ्न अनेक अभी इस पथ में पड़े हुए हैं।
मानवता की राह रोककर पर्वत अड़े हुए हैं।।
न्यायोचित सुख सुलभ नहीं जब तक मानव–मानव को।
चैन कहाँ धरती पर तब तक, शांति कहाँ इस भव को।। 3।।

जब तक मनुज–मनुज का यह सुख भाग नहीं सम होगा।
शमित न होगा कोलाहल, संघर्ष नहीं कम होगा।।
था पथ सहज अतीव, सम्मिलित हो समग्र सुख पाना।
केवल अपने लिए नहीं कोई सुख भाग चुराना।। 4।।

उसे भूल नर फँसा परस्पर की शंका में, भय में।
निरत हुआ केवल अपने ही हेतु भोग–संचय में।।
इस वैयक्तिक भोग–वाद से फूटी विष की धारा।
तड़प रहा जिसमें पड़कर मानव–समाज यह सारा।। 5।।

प्रभु के दिए सुख इतने हैं विकीर्ण धरती पर ।
भोग सकें जो इन्हें, जगत् में कहाँ अभी इतने नर ।।
भू से ले अम्बर तक यह जल कभी न घटने वाला।
यह प्रकाश, यह पवन, कभी भी नहीं सिमटने वाला ।। 6।।

यह धरती फल–फूल, अन्न, धन, रत्न उगलने वाली।
यह पालिका मृगव्य जीव की अटवी सघन निराली।।
तुंग श्रृंग ये शैल, कि जिनमें हीरक–रत्न भरे हैं
ये समुद्र जिनमें मुक्ता विद्रूम प्रवाल बिखरे हैं ।। 7।।

और मनुज की नयी–नयी प्रेरक ये जिज्ञासाएँ।
उसकी वे सुबलिष्ठ सिंधु–मंथन में दक्ष भुजाएँ।।
अन्वेषिणी बुद्धि वह तम में भी टटोलने वाली।
नव रहस्य, नव रूप प्रकृति का नित्य खोजने वाली ।। 8।।

इस भुज, इस प्रज्ञा के सम्मुख कौन ठहर सकता है ?
कौन विभव यह जो कि पुरुष को दुर्लभ रह सकता है।।
इतना कुछ है भरा विभव का कोष प्रकृति के भीतर।
निज इच्छित सुख–भोग सहज ही पा सकते नारी–नर ।। 9।।

सब हो सकते तुष्ट, एक–सा सब सुख पा सकते हैं।
चाहें तो पल में धरती को स्वर्ग बना सकते हैं।।
छिपा दिए सब तत्व आवरण के नीचे ईश्वर ने ।
संघर्षों से खोज निकाला उन्हें उद्यमी नर ने ।। 10।।

ब्रह्मा से कुछ लिखा भाग्य में मनुज नहीं लाया है।
अपना सुख उसने अपने भुज–बल से ही पाया है।।
ब्रह्मा का अभिलेख पढ़ा करते निरुद्यमी प्राणी।
धोते वीर कु–अंक भाल का बहा भ्रुवों से पानी ।। 11।।

भाग्य–वाद आवरण पाप का, और शस्त्र शोषण का ।
जिससे रखता दबा एक जन भाग्य दूसरे जन का।।
पूछो किसी भाग्यवादी से, यदि विधि–अंक प्रबल है –
पद तर क्यों देती न स्वयं वसुधा निज रत्न उगल है ।। 12।।

उपजाता क्यों विभव प्रकृति को सींच–सींच वह जल से ।
क्यों न उठा लेता निज संचित कोष भाग्य के बल से ?
यह भी पूछो, जोड़ा उसने जब प्रथम–प्रथम था।
उस संचय के पीछे रखा किस भाग्यवाद का धन था ।। 13।।

एक मनुज संचित करता है अर्थ पाप के बल से।
और भोगता उसे दूसरा भाग्यवाद के छल से।।
नर–समाज का भाग्य एक है, वह श्रम, वह भुज–बल है।
जिसके सम्मुख झुकी हुई पृथ्वी, विनीत नभ–तल है ।। 14 ।।

जिसने श्रम–जल दिया, उसे पीछे मत रह जाने दो।
विजित प्रकृति से सबसे पहले उसको सुख पाने दो ।। 15 ।।

जो कुछ न्यस्त प्रकृति में है, वह मनुज मात्र का धन है।
धर्म–राज ! उसके कण–कण का अधिकारी जन–जन है।।
सहज सुरक्षित रहता यह अधिकार कहीं मानव का।
आज रूप कुछ दूसरा ही होता इस भव का ।। 16 ।।

श्रम होता सबसे अमूल्य धन सब जन खूब कमाते
सब अशंक रहते अभाव से, सब इच्छित सुख पाते।।
राजा–प्रजा नहीं कुछ होता, होते मात्र मनुज ही।
भाग्यलेख होता न मनुज का, होता कर्मठ भुज ही ।। 17 ।।

प्रश्न और अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

(1) सहयोग तथा श्रम से क्या अभिप्राय है ?

(2) प्रकृति ने प्राणि–मात्र के लिए कौन–कौन सी सुविधाएँ समान रूप से प्रदान की हैं ?

(3) शांति प्राप्त करने के लिए हमें कवि ने क्या संदेश दिया है ?

(4) यह पाठ दिनकरजी की किस कृती से संबंधित है?

(5) दिनकर जी किस वाद के कवि हैं ?

लघु उत्तरीय प्रश्न–

(1) मनुष्य अपनी किन योग्यताओं के कारण प्रगति के सोपान पर चढ़ते चला जाता है ?

(2) प्रस्तुत काव्यांश से तुम्हें क्या शिक्षा (प्रेरणा) मिलती है ?

(3) कवि ने भाग्यवाद की अपेक्षा–कर्मवाद की प्रतिष्ठा की है। उदाहरण सहित समझाइए।

(4) कवि मानव समाज में क्या परिवर्तन लाना चाहते हैं ? स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

(1) दिनकर जी के अनुसार ''समाज में सर्वत्र अशांति और संघर्ष का वातावरण है।'' इसके तीन कारणों को तर्क सहित स्पष्ट कीजिए।

(2) कवि के अनुसार समाज में सुख समृद्धि और शांति की स्थापना के लिए क्या परिवर्तन अपेक्षित है ?

(3) सन्दर्भ सहित व्याख्या कीजिए –

(अ) ब्रह्मा से कुछ लिखा ....

........................बहा भ्रुवों से पानी।

(ब) सबको मुक्त प्रकाश ....

..................किसी प्रकार भुवन में।

शब्दार्थ

क्रीत	=	खरीदी हुई।
उद्भिज	=	फोड़कर निकलने वाला।
निभ	=	समान।
मृगव्य	=	शिकार के योग्य।
अटवी	=	जंगल।
अन्वेषणी	=	खोज करने वाली।
कुअंक	=	दुर्भाग्य।
श्रमजल	=	पसीना।
न्यस्त	=	रखा है।

पाठ – 20
– आशा सर्ग से –

– जयशंकर प्रसाद

छायावादी काव्यधारा के कीर्ति स्तम्भ महाकवि जयशंकर प्रसाद का जन्म 30 जनवरी सन् 1890 में काशी के प्रतिष्ठित सुँघनी साहू घराने में हुआ।

उनकी शिक्षा घर पर ही हुई, उन्होंने रामायण, महाभारत एवं संस्कृत वाङ्मय का गहन अध्ययन किया था।

आपका निधन 15 जनवरी 1937 में हुआ।

रचनाएँ–

(1) महाकाव्य – कामायनी

(2) खण्ड काव्य – आँसू, लहर, झरना, प्रेम–पथिक, पेशोला की प्रतिध्वनि, महाराणा का महत्व आदि।

(3) नाटक – चन्द्रगुप्त, स्कंदगुप्त, ध्रुवस्वामिनी आदि।

(4) कहानी संग्रह – आकाशदीप, आँधी, इन्द्रजाल छाया, प्रतिध्वनि

(5) कंकाल, तितली, इरावती।

भावपक्ष –

इनकी कविताओं में प्राचीन भारतीय संस्कृति का दर्शन तो हुआ ही है साथ ही ऐतिहासिक एवं काल्पनिक रूपों की सहज मोहक झाँकी भी परिलक्षित होती है। मनोभावनाओं के चित्रण में प्रसाद जी अद्वितीय हैं।

प्रकृति का मोहक चित्रण इनकी मौलिकता का स्वयं परिचय देती हैं।

कलापक्ष–

प्रसाद जी ने अपनी रचनाओं में रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, संदेह, विरोधाभास आदि अलंकारों का सम्यक प्रयोग किया है।

आपके छंदों में लयात्मकता एवं ध्वन्यात्मकता के साथ–साथ भावों को हृदय तक पहुँचाने की अद्भुत क्षमता भी है। इतना ही नहीं प्रसंगानुसार प्रतीक शैली एवं बिम्ब विधान की छटा सर्वत्र प्रतिबिम्बित होती है।

साहित्य में स्थान–

निःसंदेह प्रसाद जी हिन्दी के युग प्रवर्तक साहित्यकार एवं छायावादी काव्यधारा के अमर गायक एवं शीर्षस्थ कवि हैं।

काव्यगत विशेषताएँ –

(1) दार्शनिक विचारधारा।

(2) प्रेम और सौन्दर्य की व्यंजना।

(3) अनुभूति की गहनता एवं तीव्रता।

(4) वेदना का प्राधान्य।

(5) कल्याण का अतिरेक।

(6) रहस्यवादी भावनाएँ।

(7) प्रकृति चित्रण।

(8) नारी के प्रति श्रद्धा भाव।

कविता

आशा सर्ग से

जयशंकर प्रसाद

केन्द्रीय भाव–

प्रस्तुत पद्यांश उनके प्रसिद्ध महाकाव्य कामायनी के ''आशा'' सर्ग से उद्धृत है। इसमें महाप्रलय के पश्चात् धीरे–धीरे जल के उतरने, नवीन सृष्टि के उदय होने का बहुत ही रोमांचकारी चित्रण हुआ है। साथ ही महाप्रलय के पश्चात् जीवित बचे ''मनु'' के द्वारा इस सृष्टि के रचनाकार और नियंत्रक विराट पुरुष के विषय में ''कौतूहल'' के साथ चिन्तन करने का वर्णन है।

आशा सर्ग से

(1)

उषा सुनहले तीर बरसती
जय–लक्ष्मी सी उदित हुई,
उधर पराजित कालरात्रि भी,
जल में अन्तर्निहित हुई।

(2)

वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का
आज लगा हँसने फिर से,
वर्षा बीती, हुआ सृष्टि में
शरद विकास नये सिर से।

(3)

नव कोमल आलोक बिखरता
हिम संसृति पर भर अनुराग,
सित सरोज पर क्रीड़ा करता
जैसे मधुमय पिंग पराग।

(4)

धीरे–धीरे हिम **आच्छादन**
हटने लगा धरातल से,
लगीं वनस्पतियाँ अलसाई
मुख धोती शीतल जल से।

(5)

नेत्र **निमीलन** करती मानो
प्रकृति प्रबुद्ध लगी होने,
जलधि लहरियों की अँगड़ाई
बार–बार जाती सोने।

(6)

सिंधु सेज पर धरा वधु अब
तनिक संकुचित बैठी सी,
प्रलय निशा की हलचल स्मृति में
मान किए सी ऐंठी सी।

(7)

देखा मनु ने वह **अतिरंजित**
विजन विश्व का नव एकांत,
जैसे कोलाहल सोया हो
हिम शीतल जड़ता–सा श्रांत।

(8)

इन्द्र नीलमणि महाचषक था
सोम रहित उल्टा लटका,
आज पवन मृदु साँस ले रहा
जैसे बीत गया खटका।

(9)

वह विराट था हेम घोलता
नया रंग भरने को आज,
कौन? हुआ यह प्रश्न अचानक
और कुतूहल का था राज।

(10)

''विश्वदेव सविता या पूषा''
सोम, मरुत चंचल **पवमान,**
वरुण आदि सब घूम रहे हैं
किसके शासन में **अम्लान** ?

(11)
किसका था **भ्रू–भंग** प्रलय सा
जिसमें ये सब विकल रहे,
अरे ! प्रकृति के शक्ति–चिन्ह ये
फिर भी कितने निबल रहे।

(12)
विकल हुआ सा काँप रहा था
सकल भूत–चेतन समुदाय,
उनकी कैसी बुरी दशा थी
वे थे विवश और निरुपाय।

(13)
देव न हम और न ये हैं
सब परिवर्तन के पुतले,
हाँ कि गर्व–रथ में **तुरंग** सा;
जितना जो चाहे जुत ले।

(14)
महानील इस परम व्योम में,
अंतरिक्ष में ज्योतिर्मान
ग्रह नक्षत्र और विद्युतकण
किसका करते थे **संधान** ।

(15)
छिप जाते हैं और निकलते
आकर्षण में खिंचे हुए,
तृण, वीरुध लहलहे हो रहे
किसके रस से सिंचे हुए ?

(16)
सिर नीचा कर किसी सत्ता
सब करते स्वीकार यहाँ,
सदा मौन हो प्रवचन करते
जिसका, वह अस्तित्व कहाँ।

(17)
हे अनंत रमणीय ! कौन तुम ?
यह मैं कैसे कह सकता,
कैसे हो ? क्या हो ? इसका तो
भार विचार न सह सकता।

(18)
हे विराट ! हे विश्वदेव ! तुम
कुछ हो ऐसा होता भान,
मंद गंभीर धीर स्वर संयुत
यही कर रहा सागर गान।

–जयशंकर 'प्रसाद' (कामायनी महाकाव्य से)

प्रश्न–अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न (1) ''सुनहले तीर'' शब्द का क्या अभिप्राय है ?

प्रश्न (2) ''उषा'' और कालरात्रि शब्दों का प्रयोग किस आशय से किया गया है ?

प्रश्न (2) ''जय लक्ष्मी–सी'' में कौन–सा अलंकार है ?

प्रश्न (4) प्रसाद जी किस छंद में लिखते थे ? नाम बताइए।

प्रश्न (5) व्यंजना शब्द शक्ति को स्पष्ट करने वाली पंक्तियाँ लिखिए ।

लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न (1) प्रलय के बाद प्रकृति में क्या परिवर्तन हुए ?

प्रश्न (2) ''इन्द्र नीलमणि महाचषक'' से कवि का क्या आशय है ?

प्रश्न (2) विराट सत्ता के विषय में 'मनु' के चिन्तन को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न (4) मनु एकांत पाकर कौतूहल से क्या सोचने लगे ?

प्रश्न (5) ''गर्व–रथ में तुंरग–सा जितना चाहे जो जुत ले'' पंक्ति का क्या आशय है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न (1) मनु ने किन दैवी शक्तियों को प्रलय काल में निबल होते हुए देखा था ?

प्रश्न (2) उन पंक्तियों का उल्लेख कीजिए जिनमें प्रकृति का मानवीकरण हुआ है ?

प्रश्न (3) कामायनी के आशा सर्ग का केन्द्रीय भाव लिखिए।

प्रश्न (4) व्याख्या कीजिए –

(1) सिंधु सेज पर धरा वधू ....
..........हिम शीतल जड़ता सा श्रांत।

(2) विश्व देव सविता या पूषा...........
........किसके शासन में अम्लान ?

शब्दार्थ

कालरात्रि = प्रलय की काली रात।
विवर्ण मुख = फक्क (मुरझाया) चेहरा, आभाहीन।
संसृति = सृष्टि।
हिम आच्छादन = बर्फ की मोटी चादर।
निमीलित करती = झपकाती।
पवमान = पवन।
अम्लान = तेजस्वी।
भ्रू–भंग = भृकुटि विलास।
तुरंग = घोड़े।
व्योम = आकाश।
संधान = खोज।
वीरुध = वनस्पति।
श्रांत = थका हुआ।
अन्तर्निहित = निमग्न।
पिंग = पीला।
चषक = प्याला।
सोम = चन्द्रमा।
पूषा = पृथ्वी।
हेम = सोना।
सविता = सूर्य।
प्रवचन = भली भाँति समझाकर वर्णन करना।

पाठ – 21
चुरकी अउ मुरकी

एक गाँव म दू झन बहिनी रहें–चुरकी और मुरकी। उंखर एकेच ठिन भाई रहे। दूनों ओखर बर अब्बड़ **मया** करें। उंखर बाढ़े ऊपर ले उंखर बिहाव हो गै। संजोग की बात के एके गाँव म दुनों झन बिहाइन। चुरकी के बाल–बच्चा होइस। मुरकी के नइ होइस। खूब **बछर** बीते ऊपर ल चुरकी के मन 'भइया' मेर जाय के होइस। मुरकी ल बता के ओ हर कहिस– ''मैं भइया घर जातेंव ओ। दू–चार दिन म लहुट आहौ। तलघचा ले मोर बाल–बच्चन ल संभाल लेते।' मुरकी रजिया गइस। चुरकी मइके डहर रेंगिस।

रद्दा म चुरकी ल एक ठिन बोइर पेड़ परिस। पेड़ कहिस–'कस ओ कहाँ जाथ हस ?' चुरकी– 'भइया घर तो जाथ हौं गा।' पेड़ कहिस–'अइसे ! ले मोर तरी के भुईंयाँ ल लीप–बहार दे तो तोर लहुटत ले मैं सुघ्घर मीठ–मीठ बोइर ल टपका दे रहिहौं। तेला तैं बीन के अपन लइकन खातिर लै जाबे।' चुरकी कहिस–'का हो ही ! **बनिहारिन** त हौं रे भाई ! लीप देथौं। अइसे बोल के चुरकी ओ पेड़ तरी ल बने सुघ्घर बहार देइस, अउ कहूँ ले गोबर लान के लीप डारिस। फेर आघु रेंगिस। चलत–चलत ओला एक खूब बड़ दइहान दिखीस। ओमा सुरही गाय मन बैठे रहिन। एक सुरही गाय चुरकी ल पूछिस–'कहाँ जात हस ओ ?'

'अपन भइया घर तो जाथ हौं दाई।'

'ए दइहान ल खरहार–बहार के लीप देते ओ। लहुटत खानी एक ठिन दोहनी अपन भइया घर ले ले आबे। तोला हमन दूध दे देबो। लइकन–बच्चन ल खवा–पिया देबे।'

'ह–हो! का भइगे! बनिहारिन तो आहिच हों।' अतका कहि के चुरकी लकर–लकर ीपिस– बहारिस और सुरही गाय मन ला माथा टेकिस और रद्दा रेंगिस। थोरकन दूर गे हो ही कि ओला एक भिभोंरा दिखीस। भिंभोरा के तीर–तकार कोनो मनखें न रहें। चुरकी ल **मनखे** भाखा सुनाइस –'कस ओ बहिनी ? कोन डहर जाथ हस ?' चुरकी बड़ अचम्भो म पर गै। कहीस 'जात तो हों में भइया घर रे भाई। फेर तैं कौन हस ? ए मेर कोनो दिखत नईये।'

'मैं **भिंभोरा** बोलत हौं ओ। ए मेर के मोर भुंईयाँ ल साफ कर देते त लहुटती बेरा तोला बनी दे देतेंव।'

'ले का होही !' कहि के चुरकी बने खुबेच सुघ्घर भुंइया ल लीप–बहार के गोबरा देइस। भिंभोरा के पाँव परिस और भइया घर कोती रेंगिस।

सँझा बेरा होत रहे। गाँव के मेंड़ों तीर ले भइया के खेत ह दिखत रहे। चुरकी मेंड़ो तीर पहुँच के थोरिक सुरताइस। फेर देखिस भइया ह खेतेच म हवै। ओला खूब खुसी लागिस। ओहिच मेर ले चुरकी आरो करिस 'भइया हस का गा ?' 'अइ' कोन ? चुरकी हस का ओ, आ नोनी, आ ओ ! मैं तो रात–दिन खेतेच म रहिथौं ओ। चना ल **बेंदरा,** गइया खा जाहीं तोने पाके रखवारी करथौं। दूनो भाई बहिनी बड़ दिन म मिले रहें। दुख–सुख गुठियाइन। बहिनी ह भाई बर अब्बड़ कलेवा धर के लाने रहिस। तेला देइस, खवाइस–पियाइस। भइया कहिस 'जा **नोनी** ! घर डहर तोर भउजी घरे म हो ही। उहें खाबे–पीबे जौन कुछ पेज–पसैया हो ही तेला। मैं रात घर नइ आवौं।'

चुरकी भउजी पास चलीस। घर पहुँचत y scusv f/k; kj gksx sj gs Hkmt h **ढेंकी** म धान कूटत रहिस। चुरकी पहुँचिस, खुशी–खुशी भउजी के पाँव परीस। भउजी सुघ्घर नइ गुठियाइस। चुरकी बपुरी ल चुपे–चुप धान कुटवाये लागिस। धान कुटे ऊपर ले चुरकी ल भउजी कहिस– 'ले न ओ ! रांध डारबे। बहुत दिन म मोला अराम मिलही।'

'ओ भउजी ! मैं तोर पहुना हौं न ओ! अतका दूर ले रेंगत आए हौं, थकासी लागत है।'

'ले, का हो गै। एहीच घर के बेटी हस।' चुरकी बपुरी कुछू नई बोलिस अउ रांधे लगिस।'

'जेवन चुरे ऊपर ले भउजी कहिस–'मैं तोर भइया बर खेत म लेजिहौं, महू ओखर सों खा लेहों। ले हमरे दूनों झिन के जेवन ल जोर दे। अउ, ते इहेंच खा लेबे अउ सूत जाबे।

चुरकी जोर देइस। भउजी चल दीस। चुरकी घलो खाइस और सूत भुलाइस। सहींच म चुरकी बहुत सीधा रहीस।

खेत म पहुँच के भउजी भइया ल खाये–पिये ल देइस। अपनो खाइस। फेर कथे–'आज घर मं पहुना आये हवे। मोला नइ सुहाइस। हमीं मन तो भर पेट खाए ल नइ पावन, फेर पहुना ल कइसे पोसबो ?'' भाई ओला समझाइस–'अपने बहिनी तो आय ओ! हमन तो गरीबी के मारे ओला तीजा–तिहार म बिदा नइ करावन। बपुरी मया म तो आइस हवे अपने मन ले। ओला ऐसे झन कहि ओ। **पेज–पसइया** जौन हम खाबौ तौन आहू ल देबो। फेर काल–परसो त ओहा चल देही। अइसे समझा के ओला घर डहर भेजिस।

बिहान होइस। चुरकी कथे–'अब घर जातेंव भउजी।' भउजी बड़ा खुस। चुरकी एक ठिन दोहनी मांगिस। भउजी कथे–'जा न घर भीतर देख लेबे।' कोनो तीर म जुन्ना–मुन्ना माढ़े हो ही त ले ले।' चुरकी एक ठिन पाइस, धरिस, भौजी के **गोड़ लागिस** अउ खार कोती रेंगिस। खेत म भइया संग भेंट करिस। भइया कहिस –'ले, नोनी, चना भाजी टोर ले' चुरकी थोरच भाजी टोरिस अउ भइया के पाँव पर के अपन घर डहर रेंगिस।

रद्दा म ओला सबले पहिली भिंभोरा भेंटिस। चुरकी ओला लीपिस बहारिस अउ हाथ गोड़ धोय बर तीर के तरिया म गिस। लहुटिस त देखत का है के भिंभोरा तीर दू तीन पसर अस रूपया कुढ़ोय हवे। भिंभोरा कहिस–'ए तोर बनी हे आ! एला उठा ले।' चुरकी झटकुन रुपया ला सकेल के **चरिहा** म राखिस। तेखर ऊपर चना भाजी ल तोप देइस। भिंभोरा के पाँव परिस अउ आघू रेंगिस।

थोरकन आगे चले ऊपर ले वे। ह दइहान ल भेंटिस। ओखरो माटी–गोटी ल चुरकी सफा करिस। सुरही गाय मन अपन–अपन बछरू ल कहिन एक–एक ढेंठी के दूध चुरकी के दोहनी में उलद देव। ओ मन ओइसने करिन, अउ देखते–देखत दौ चुरकी के दोहनी दूध म भर गै। चुरकी गइया मन के पाँव पर के रेंग देइस।

अब चुरकी बोइर झाड़ तरी पहुँचीस। अब्बड़ **सुघ्घर–सुघ्घर** पके–पके बोइर ओही लीपे बहारे भुंइया म गिरे रहे। झाड़ ह चुरकी ल कहिस–एला बीन के ले जा। अब चुरकी के चरिहा, दुहनी सबों ह तो भर गे रहीस। कामा धरतीस। तबो ले ओली म जतका बोइर रखत बनीस ततका ल धर लेइस। अउ बोइर झाड़ के माथा टेक के घर डहर चल देइस।

चुरकी घर पहुँचिस त मुरकी ह देखत रहे। चुरकी के मूड़ ऊपर भरे चरिहा अउ ओली घलो भरे–भरे देख के मुरकी के जी ललचाइस।

पूछिस–'का–का पाए ओ भइया घर ले।' ओ पूछत अपने ह अंगना में ठाड़ भइ गे ओखरेच तीर। चुरकी सबो जिनिस ल देखा देइस। मुरकी हर जानिस सबों चीज ल भइया दे हवै। ओ हर कहिस–'महूँ काल भइया घर जातेंव ओ।' जा न ओ–चुरकी कहिस।

बिहान भए मुरकी भइया घर रेंगिस। रद्दा मे बोइर झाड़ ओखर ले कहीस–'मोर तरी के भुंइया ल लीप बहार देते ओ। तोला लहुटती खानी बोइर देहूँ।' मुरकी तनिया गइस अउ जवाब देइस ''मैं अपन भइया घर ल नइ ले आहौं का।' आघु रेंग देइस। दइहान म सुरही गाय मन लीपे–बहार ले कहीन तो उन्हू ल उल्टा–सुलटा कहि के आगे रेंगिस। भिंभोरा भेंटिस। ओहू कहिस। ओहू ल ऐंठ के जवाब देइस– 'मैं भूख मरथ हौं का! ओ भैया घर डहर रेंग देइस।

खेत म भइया संग भेंटिस। भइया बने गुठियाइस बताराइस। घर पहुँचिस भउजी घलौ बने खवाइस पियाइस। बिहनिया बेरा मुरकी घर बहुरे बर कहिस। भउजी कहिस 'हौ' और देइस कुछू नहीं। भइया पास पहुॅचिस। भइया कहिस 'जा न नोनी, भाजी–उजी टोर लेते।' थोरकुन भाजी टोरिस अउ रेंग देइस। मनेमन–मनेमन मुरकी **कुड़बुड़–कुड़बुड़** करत जाय। 'मोला भइया कुछू नइ देइस। चुरकी ल सबो कुछ दे डारिस।' इसे रिसात चले जात रहिस के भिंभोरा तीर आ गे। ओखर पहुँचते साथ भिंभोरा ले दु तीन बड़े–बड़े करिया साँप परकट होइन, जौ औला चाबे बर दौड़िन। मुरकी भागिस। गिरत–परत दइहान तक पहुँचिस। सुस्ताय बर बइठिस तौ मरकनही सुरही गाय मारे ल दौड़िस, बपुरी ओहू मेर नइ बैठ पाइस। भागे लागिस। कहूँ गोड़ पिराइस, कहूँ कोहनी और माड़ी फूटिस। बोइर झाड़ तरी बोइर के काँटेच काँटा भरे रहिस। ओहू म हाथ–पाँव छेदाइस। खून म लथपथ भइगे। रद्दा भर भउजी अउ भइया ल गारी देत जाय अउ रोवत जाय। घर पहुँचिस।

चुरकी जब मुरकी ल देखिस त बड़ा दुख लागिस ओला। ओखर मरहम पट्टी करिस अउ पूछिस–सब कइसे हो गेओ। मुरकी कहिस –तोला तो भइया–भउजी मन अतका अतका चीज दे रहिस। मोला त कुछेच नइ देइस। चुरकी कहिस–भइया त मोहू ला कुछु नइ दे रहिस। ओखर मन पूँजीच कतका हवै जउन ल ओहर दे सकही। तोला रद्दा म कोनो कुछ नइ कहिस का ओ ?' फेर मुरकी सब हाल ल बताइस।

तब चुरकी कहिस– 'तोला खूब गरब रहिस ओ। तउने पा के तोर अइसन गत होइस। ए दुनिया म गरब कौने के नइ रह जाय ओ, अउ मनखे ल ए गरब ह नीचे गिरा देथे।'

कथा–सार

चुरकी मुरकी दो बहिनें थीं। दोनों एक ही गाँव में ब्याही थीं। चुरकी के बाल–बच्चे थे, पर मुरकी निःसंतान थी, उनका भाई गरीब था। वह बहनों को अपने गाँव बुला न पाता था। एक बार चुरकी ने अपने भाई के पास जाने का विचार बनाया। उसने अपने बच्चे मुरकी के पास छोड़े और भाई के घर चल दी। रास्ते में उसे बेर का पेड़ मिला। पेड़ ने उसके नीचे सफाई–लिपाई करने को कहा। चुरकी ने उसका कहा कर दिया। आगे उसे एक गोठान की गाय ने भी यही कहा। चुरकी ने वहाँ भी सफाई–लिपाई कर दी और गाय को प्रणाम कर आगे बढ़ी । फिर उसे एक बाँबी मिली। उसने भी कुछ जगह साफ करने को कहा। चुरकी ने सोचा, सफाई तो मैं रोज ही करती हूँ और उसने बाँबी की बात पूरी की उसे प्रणाम किया और आगे बढ़ी।

गाँव पहुँचते–पहुँचते शाम होने लगी।

उसका भाई चुरकी को खेत पर मिल गया। दोनों भाव विह्ल होकर मिले और बातें कीं। फिर भाई, बोला ''बहन तुम घर चलो। वहाँ तुम्हारी भाभी है। मैं रात खेत पर रहूँगा।'' चुरकी घर पहुँची। भाभी धान कूट रही थी। चुरकी ने उसके पैर छुए और धान कुटाने लगी। फिर भाभी ने उससे खाना बनाने को कहा। चुरकी को यह रूखा व्यवहार अच्छा न लगा और वह सुबह ही अपने घर चल दी। वह भाई से खेत पर ही मिली। भाई के आग्रह पर चुरकी ने थोड़ा सा चने का साग घर के लिए तोड़ लिया, फिर वह भाई को प्रणाम कर विदा हुई।

लौटते वक्त बाँबी ने चुरकी को बहुत से रुपये दिए, गाय ने दूध दिया और बेर के पेड़ ने बहुत से मीठे फल दिए। चुरकी ने सबको प्रणाम किया और घर पहुँची। मुरकी ने उसका स्वागत किया और अपने मन में सोचा कि भाई ने उसे खूब माल दिया। फिर बोली मैं भी भाई से मिलने जाऊँगी। चुरकी बोली जरूर जाओ। मुरकी ने चुरकी से अधिक बात न की और भाई के यहाँ चल दी। रास्ते में उससे बेर के पेड़, गोठान की गाय और मिट्टी की बाँबी ने सफाई–लिपाई करने को कहा। पर मुरकी ने नहीं की, उन्होंने उसे बेर, दूध और टीले ने मजदूरी देने को कहा तो मुरकी चिढ़कर बोली, ''मैं गरीब नहीं। मेरे भैया मुझे सब कुछ देंगे।''

मुरकी की भी भाई से भेंट खेत पर ही हुई। दोनों प्रेम से मिले। भाभी ने घर पर उसका स्वागत किया, पर सुबह जब मुरकी अपने घर के लिए विदा हुई, तो भाभी ने विदाई में कुछ न दिया, फिर खेत पर भाई मिला। उसने थोड़ा सा चने का साग ले जाने को कहा। मुरकी ने साग तोड़ा और भाई से विदा ली। वह भाई से भी कुछ न मिलने पर खिन्न तो थी ही रास्ते में टीले से चार नागों ने उस पर हमला किया। वह भागी और गोठान के पास पहुँची तो सुरहीन गाएँ उसे मारने दौड़ी। गिरते–पड़ते वह बेर के पेड़ के पास से निकली तो काँटों में छिद गई। लहू–लुहान, थकी–हारी मुरकी घर पहुँची, तो उसकी दुर्दशा पर चुरकी को बहुत दुःख हुआ। उसने मुरकी की व्यथा कथा सुनी। चुरकी ने बताया कि उसे भाई–भाभी ने कुछ नहीं दिया था, जो कुछ मिला था, वह टीले, गाय और बेर के पेड़ ने दिया था। तुम्हारी दुर्गति तुम्हारे गर्व से हुई। दुनिया में गर्व किसी का नहीं रहता।

प्रश्न–अभ्यास

अति लघु उत्तरीय प्रश्न –

प्रश्न (1) चुरकी और मुरकी किस विधा से सम्बन्धित कहानी है ?

प्रश्न (2) चुरकी और मुरकी कौन थीं ?

प्रश्न (3) चुरकी ने भाई के यहाँ जाना क्यों चाहा ?

प्रश्न (4) कहानी के प्रमुख तत्वों के नाम लिखिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न–

प्रश्न (1) चुरकी के साथ मार्ग में क्या–क्या घटनाएँ हुईं ?

प्रश्न (2) चुरकी की भाभी ने उसके साथ कैसा व्यवहार किया ?

प्रश्न (3) चुरकी लौटते समय सबसे पहले किससे मिली तथा उसने क्या देखा ?

प्रश्न (4) चुरकी और मुरकी कहानी हमें क्या संदेश देती है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न –

प्रश्न (1) चुरकी और मुरकी के चरित्र में क्या अंतर है ? स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न (2) लोक साहित्य किसे कहते हैं ? छत्तीसगढ़ के लोक साहित्य पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न (3) निम्नलिखित छत्तीसगढ़ी वाक्यों को हिन्दी में लिखिए।

(क) खूब बछर बीते ऊपर ल चुरकी के मन भइया मेर जाय के होइस।

(ख) फेर आघु रेंगिस। चलत चलत ओला एक खूब बड़ दइहान दिखीस।

(ग) चना ल बेंदरा गइया खा जाहीं तोने पाके रखवारी करथौं।

(ख) भिंभोरा कहिस –'ए तोर बनी है ओ ! एला उठा ले।' चुरकी झटकुन रूपया ल सकेल के चरिहा म रखिस।

प्रश्न (4) निम्नलिखित शब्दों के आशय स्पष्ट कीजिए–

गोठान, लथपथ, दोहनी, कुड़बुड़, थोरकुन गरब, मनखे, बिहान।

प्रश्न (5) प्रस्तुत कहानी का कथा सार हिन्दी में लिखिए।

शब्दार्थ

बिहाब = विवाह। **रजिया गइस** = राजी हो गई।

बोइर = बेर। **तरी** = नीचे।

दोहनी = मिट्टी का पात्र। **भिंभोरा** = टीला।

संझा =शाम। **भउजी** = भाभी। **पहुना** = अतिथि।

थकासी = थकान। **सुत जावे** = सो जाना।

नई सुहाइस =अच्छा नहीं लगा।

बपुरी = बेचारी। **उलद दे** = डाल दे।

तनिया गइस = तन गई। **मया** = प्रेम।

परकट होइन = प्रकट हुए। **करिया** = काले।

विहान = सुबह। **बछर** = वर्ष। **रद्दा** = रास्ते।

बनिहारिन = मजदूरिन

दइहान = मैदान, ठिकाना।

मनखे भाखा = मनुष्य की बोली।

भिंभोरा = बाँबी। **बेंदरा** = बंदर।

नोनी = लड़की। **गुठियाइस** = बातें की।

गोड़ लागिस = पैर छूना। **चरिहा** = डलिया।

सुघ्घर = अच्छे। **कुड़बुड़–कुड़बुड़** = कुड़बुड़ाती।

गत = दशा।

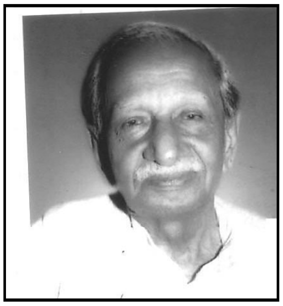

पाठ – 22
छत्तीसगढ़ी कविताएँ

पं. श्यामलाल चतुर्वेदी

जीवन परिचय –

छत्तीसगढ़ अंचल के सशक्त हस्ताक्षर पं. श्यामलाल चतुर्वेदी का जन्म 20 फरवरी सन् 1926 ग्राम कोटमीसुनार तहसील एवं जिला जॉजगीर (छ.ग.) में हुआ। नौ वर्ष की अवस्था में चौथी उत्तीर्ण के बाद पढ़ाई अवरुद्ध हो गई। फिर भी वाणी के इस अमरपुत्र ने पाँचवी की परीक्षा स्वाध्यायी छात्र के रूप में सर्वाधिक अंकों के साथ उत्तीर्ण की फिर सन् 1976 में एम.ए. हिन्दी की परीक्षा में स्वैच्छिक विषय के रूप में छत्तीसगढ़ के पाठ्यक्रम में इनकी कविताएँ संकलित थीं। परीक्षार्थी के रूप में इन्हें अपनी ही कविता पर उत्तर लिखने का सुअवसर मिला, यह एक सुखद संयोग की बात है।

अपने जीवन काल में आपको अनेक संस्थाओं ने सम्मानित किया है।

साहित्यिक कृतियाँ –

(1) राम बनवास (छत्तीसगढ़ी खण्ड काव्य)।

(2) पर्रा भर लाई (छत्तीसगढ़ी)

(3) भोलवा भोलाराम बनिस (छत्तीसगढ़ी कहानी संग्रह)।

(4) मेरे निबंध (हिन्दी निबंध संग्रह)।

भावपक्ष–

चतुर्वेदी जी का जीवन छत्तीसगढ़ की पावन मिट्टी में रचा बसा है। यहाँ की ''बासी'' हमारे जीवन में 'टानिक' का काम करती है।

छत्तीसगढ़ के चुने हुए सहज शब्दों से अपनी वाणी को इन्होंने सहृदय पाठकों तक बड़े ही सहजतापूर्वक पहुँचाने का कार्य किया है। भारतीय संस्कृति एवं लोक परम्परा पर आपकी लेखनी ऐसे चली है कि कलकल निनाद करती हुई गंगा की पावन धारा छत्तीसगढ़ की भूमि को अपने अमृत जल से सींच रही है।

कलापक्ष –

श्री चतुर्वेदी जी ठेठ छत्तीसगढ़ी के प्रयोग में सिद्धहस्त हैं। आपका गद्य एवं पद्य दोनों में समान अधिकार है। छत्तीगढ़ी भाषा को साहित्य में पल्लवित और प्रतिष्ठित करने में इनका महत्वपूर्ण योगदान है। संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू आदि भाषाओं पर भी आपकी गहरी पैठ है। जनमानस में आपकी लोकप्रियता ही प्रत्यक्ष प्रमाण है।

साहित्य में स्थान –

बहुमुखी प्रतिभा के धनी चतुर्वेदी जी के कविता, कहानी और निंबंध नागपुर तथा रायपुर आकाशवाणी केन्द्र से प्रसारित होते रहे हैं। आप अनेक संस्थाओं से जुड़े हैं और साहित्य की सेवा में सक्रिय हैं। आपको छत्तीसगढ़ का भीष्म पितामह कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। आप साहित्याकाश में दैदीप्यमान सूर्य की तरह सदैव अपनी पारस लेखनी से स्वर्णिम रश्मियाँ विकीर्ण करते रहेंगे।

छत्तीसगढ़ी कविताएँ
ये धरती करमइता के हवय

हमर बनौकी हमर हाँथ म, भल अनभल मनचाही।
लंगटा कस चाहे दिन काटी, चाहे राजा साही।।

सिरजोइया संसार बनोइय्या, सबके चेत रखइय्या।
दुनिया मा सब जिनिस बनादिस, पाही काम करइय्या।।

कर्ता के ये पिथ्वी हर ये, करम करव लौ लाहो।
मीट्ठ फरे हे आमा, खाहौ तब सेवाद ल पाहौ।।

मेहनत कर उजोग मा रइही, तउने तो सुख पाही।
ठलहा हाथ पांव बिन सरकाये लुआठ ला खाही?

तब भाई मन रोना गाना, छोड़ बुता मा माढ़ा।
करनी करे ले किस्मत बनथे, सार बात ये गाढ़ा।।

करतब करके कोनो भी हर करमइता कहवाथे।
दुख के पीछू सुख हर हावै, करथे ते गम पाथे।।

कतको तिनहा मेहनत करके, मंडल होथे भारी।
जाँगर चीर हजरिया ला तूँ पाहा बेंचत थारी।।
सत इमान से बूता करबो, तब तो बढ़ती होही।
पतियावा, सच परमेश्वर हर, छप्पर फार रितोही।।

खेती बाला करव किसानी, मेहनत मस्त लगाके।
परके धन ला धुर्रा समझो, तब रइही डर का के ?

नियत के खोंटा काम के चोरहा, छल छिद्दर मा चलथे।
चलनी म दुह दूध करम ला, ठोंक हाँथ ल मलथे।।

अइसन काम चले के नो है, असल नकल खुल जाथे।।
पीतल कोन कोन सोन है, दिखथें जब तिप जाथे।

सच्चा सुख के भूख अगर होय मेहनत करव हकन के।
चार दिना के जिनगी हे ये का ठउका ये तन के ?

खूब कमावा कस के खावा, दुखी भुखी ला देवा।
यु दुनिया मा जनम लेहे के, हटके लाहो लेवा।।

शब्दार्थ

बनौकी = कार्य का बनना।
लंगटा = गरीब।
धुर्रा = धूल।
छल = कपट।
तिप = गर्म होना।
हकन = पेट भर।
हटके = अलग होकर।
सिरजोइया = सृजन करने वाला।
जिनिस = वस्तु।
सेवाद = स्वाद।
ठलहा = निकम्मा।
करतब = कर्त्तव्य।
पतियावा = विश्वास।

जमुना प्रसाद कसार

– श्यामलाल चतुर्वेदी
जीवन परिचय–

जन्म एवं शिक्षा– स्वतंत्रता संग्राम सेनानी जमुना प्रसाद कसार का जन्म जबलपुर के चीचली ग्राम में सन् 1926 में हुआ।

शिक्षा– कसार जी एम.ए., बी.टी., एम.एड. हैं। आपने प्राचार्य, जिला शिक्षाधिकारी, उपसंभागीय शिक्षाधिकारी जैसे महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित किया है। सम्प्रति आप दूरदर्शन एवं आकाशवाणी से जुड़े हुए हैं।

साहित्य साधना– आप बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार हैं। आपकी कविता, कहानी निबंध आदि विविध–पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। आपको राज्य स्तरीय राष्ट्रभाषा अलंकरण सम्मान से सम्मानित किया गया है।

कृतियाँ –

(1) संस्कार का मंदिर

(2) जीवनराग (कविता)

(3) सरला ने कहा (कहानी)

(4) छत्तीसगढ़ी कुण्डलियाँ (कविता)

(5) आजादी के सिपाही, अक्षर (उपन्यास), अमर सेनानी

(6) खण्ड काव्य–अंगद, माता कैकयी (एक रूपांकन शोध)

भावपक्ष – आपकी कविताओं में क्रांति के स्वर तो मुखरित हुए ही हैं साथ ही अध्यात्म की सलिला भी सतत् प्रवाहित हो रही है। रामचरित मानस के प्रखर वक्ता के रूप में आज भी ख्याति है।

कलापक्ष – भाषा संस्कृत निष्ठ एवं भावानुकूल है। जिससे हृदयतंत्री झंकृत हो उठती है। कहीं–कहीं हिन्दी के साथ उर्दू एवं अंग्रेजी का भी प्रयोग सहजता से हुआ है।

साहित्य में स्थान – छत्तीसगढ़ के पुरोधा, सर्जक के रूप में आपकी लेखनी सतत् गतिमान रहे।

छत्तीसगढ़ी कुण्डलियाँ

जमुना प्रसाद कसार

(1)

नारी तै नारायणी काबर होत उदास।
जिनगी के बिखला पिये नर ला दिए उजास।।
नर ला दिये उजास तोर जिव आगी लागिस।
अब तुहँ अइसन बरौ कहँय सब दुरगा जागिस।।
कह जमुना कवि सूर के पढ़–लिख ज्ञान जगा ले।
फूहड़ फैसन छोड़ पढ़ई के गीता गा लै।।

(2)

आगी म सोना तपय तपै होय अउ शुध।
मनखे जब दुःख म तपय अउ बन जावय बुध।।
अउ बन जावै बुध जगत पीरा के खान हे।
दूसर बर जे सहय उही जिनगी महान हे।।
कह जमुना, कवि सूर होय चहूँ ओर पुछारी।
बर पीपर कस बनव के पूजयँ सब नर नारी।।

(3)

का हे गुस्सा ? का कहँव आगी हावय एक।
तन सुखाय मन के हरय ये हर सबो विवेक।।
ये हर सबो विवेक बनैं मनखे मन पागल।
सुख ला मारय टंगिया करै शांति ला घायल।।
कह जमुना कवि–सूर क्रोधि ल झन तै भड़का।
चुप्पे चाप गटक ले मंत्र इही हे बड़का ।।

शब्दार्थ

उदास = निराश।
गटक = निगलना।
विष = जहर।
उजास = प्रकाश।
खान = खदान।
गुस्सा = क्रोध।
गटक = निगलना।
पीरा = कष्ट।
भड़का = उकसाना।

डॉ. उमाशंकर तिवारी

जीवन परिचय–

जन्म एवं शिक्षा– डॉ. उमाशंकर तिवारी का जन्म 10 अगस्त सन् 1947 को ग्राम सिंघनपुरी जिला –कवर्धा में हुआ था।उनके पिता का नाम स्व. वेद प्रसाद तिवारी था।

शिक्षा – एम.ए. (हिन्दी, संस्कृत, अर्थशास्त्र)

आप शास. कन्या उ. मा. शाला नेवरा में प्राचार्य पद से सेवानिवृत्त हुए। आपको वर्ष 1994 में आपकी उत्कृष्ट सेवाओं के कारण भारत के राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत किया गया। इसके अतिरिक्त – साक्षरता वाचस्पति सम्मान, समन्वय रत्न, साहित्य सृजन सम्मान, न्यू ऋतम्भरा साहित्यमणि सम्मान से सम्मानित किए जा चुके हैं।

इनकी रचनाओं में समाज की तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों का ज्वलंत चित्रण मिलता है। शोषित वर्ग के प्रति पीड़ा, कृषकों का उत्थान, समसामयिक सन्दर्भों में इनकी रचनाएँ हृदय को झकझोर देती हैं।

इनकी भाषा संस्कृत निष्ठ एवं भावानुगामिनी है। ''सृजन पत्रिका'' में आपकी रचनाएँ प्रकाशित होती रही हैं।

छत्तीसगढ़ में इनका स्थान विद्वानों, शिक्षा–विदों में अद्वितीय है।

किसान

कवि (डॉ. उमाशंकर तिवारी)

जागव जागव रे किसान,
जागव जागव रे,
भूइया के भगवान, जागव जागव रे।
तुहरे मेहनत अऊ लगन म, सब परानी के परान हे।
अरर ततत के बोली म, वंशी वाले के तान हे।
धर ले नागर अउ तुतारी, ऐ ही तोर पहिचान रे।
जागव जागव रे किसान, जागव जागव रे।
मत बेचव अपन खेती खार ल, मत छोड़व गाँव ल।
एक–एक दाना म लिखे, अपन सुघ्घर नाव ल।
हाथ जोड़ चिरौरी करथन, तै माटी के बरदान रे।
जागव जागव रे किसान, जागव जागव रे।
बाँध बनावव कुँआ खोदव, उपजावव अब्बड़ धान।
शहर म धुँगिया नाली मच्छर, छोड़ दव शहरी धियान।
परियावरन पुकारत हावय, भुइया के भगवान रे।
जागव जागव रे किसान, जागव जागव रे।
बाप बपुरा बरस बरस के, दुःख ल अपन रोवत हे।
आँखी फार के बिजरी बेचारी, नागर बइला ल देखत हे।
गरज गरज के गोहरावत हे, तै कइसे करत हस सियान रे।
जागव जागव रे किसान, जागव जागव रे ।
हरेली म नागर के पूजा, पोरा नदिया बइला के।
गेड़ी चढ़के नाचहि लइका, तिजहारिन आहीं तिजा के।
ठेठरी खुरमी खूब मिठाही, जब खेती रइही किसान के।
जागव जागव रे किसान, जागव जागव रे।
भुइया के भगवान जागव जागव रे।

शब्दार्थ

जागव = जागना।
भुइयाँ = धरती।
बइला = बैल।
परान = प्राण।
सुघ्घर = सुंदर।
चिरौरी = विनती।
अब्बड़= बहुत।
धुँगिया = धुआँ।

अभ्यास–प्रश्न

ये धरती करमइता के हवय

(1) ''करमइता'' शब्द का अभिप्राय क्या है?
(2) कवि ने कर्म और भाग्य के सन्दर्भ में कविता के माध्यम से किन विचारों को बताना चाहा है?
(3) प्रस्तुत पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?

छत्तीसगढ़ी कुण्डलियाँ

(1) नारी के सन्दर्भ में कवि ने क्या कहा है ?
(2) समाज में आप किन गुणों से प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकते हैं ?
(3) क्रोध से विवेक नष्ट हो जाता है । इसके परिणाम कष्टप्रद होते हैं। समझाइए।

किसान

(1) कवि ने भुइयाँ के भगवान किसे माना है ?
(2) भारतीय किसान की दशा का चित्रण प्रस्तुत कविता के माध्यम से कीजिए।
(3) प्रस्तुत कविता में कवि ने छत्तीसगढ़ के किन–किन पर्वों का उल्लेख किया है ?

वाक्य संरचना

पं. कामता प्रसाद गुरू के अनुसार– ''एक पूर्ण विचार व्यक्त करने वाला शब्द समूह वाक्य कहलाता है।

इससे स्पष्ट होता है कि पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराने वाले सार्थक शब्द समूह को वाक्य कहते हैं।

जैसे – मोहन पुस्तक पढ़ता है।

वाक्य रचना की कुछ विशेषताएँ होती हैं :–

(1) शब्दों का क्रम।

(2) भावों और विचारों को जागृत करने की क्षमता।

(3) अर्थ का स्पष्ट होना।

(4) माधुर्य।

वाक्य के अंग

वाक्य के दो अनिवार्य अंग हैं :–

(1) कर्ता (2) क्रिया

कर्ता को ही उद्देश्य और क्रिया को विधेय कहते हैं।

उद्देश्य – जिसके सम्बन्ध में कुछ कहा जाता है।

विधेय – उद्देश्य के लिए जो कुछ कहा जाता है।

वाक्य के भेद

वाक्यों को दो आधार पर वर्गीकृत किया जाता है –

(अ) अर्थ की दृष्टि से, (ब) रचना की दृष्टि से।

(अ) अर्थ की दृष्टि से वाक्य के आठ भेद किए गए हैं :–

(1) विधि वाचक वाक्य– जिस वाक्य में किसी बात के होने की सूचना प्राप्त होती है।

जैसे – (1) सूर्य पूर्व दिशा से उदित होता है।

(2) वह पुस्तक पढ़ रहा है।

(2) निषेध वाचक– जिस वाक्य से किसी बात के न होने की सूचना मिलती है –

उदाहरण – बिजली के खम्भे को मत छुओ।

(3) आज्ञा वाचक– जहाँ आदेश दिया गया हो। जैसे–

(1) मोहन बाजार जाओ।

(2) काम बंद करो।

(4) प्रश्न वाचक – जिस वाक्य में प्रश्न किए जाते हैं । जैसे–

तुम्हारा निवास कहाँ है ?

तुम यहाँ कैसे आए ?

(5) विस्मय वाचक – जिस वाक्य में आश्चर्य, दुःख, सुख या घृणा आदि का बोध होता है।

जैसे – अरे ! यह कितना सुन्दर है।

ओह ! आप आ गए, बहुत अच्छा हुआ।

(6) इच्छा वाचक – जिस वाक्य में इच्छा या शुभकामनाओं का बोध हो ।

जैसे – (1) आप दीर्घायु हो ।

(2) दूधो नहाओ पुतो फलो ।

(7) संदेह वाचक वाक्य – जिस वाक्य में किसी बात का संदेह हो ।

जैसे (1) मुझे आशा नहीं थी कि वह आएगा।

(2) संभवतः आज पानी बरसेगा।

(8) संकेत वाचक वाक्य– जिस वाक्य में संकेत का भाव रहता हो –

जैसे– (1) मैं तुम्हें राम मंदिर में मिलूँगा।

(2) वह पाँच बजे मेरे घर में आएगा।

(ब) रचना की दृष्टि से वाक्य के तीन प्रकार हैं –

(1) साधारण वाक्य, (2) मिश्र वाक्य, (3) संयुक्त वाक्य।

(1) साधारण वाक्य– जिस वाक्य में एक कर्ता और एक ही क्रिया होती है उसे सरल वाक्य या साधारण वाक्य कहते हैं।

उदाहरण –(1) सीता गाना गा रही है।

(2) बालक खेल रहे हैं।

(2) मिश्र वाक्य– जिस वाक्य में एक साधारण वाक्य के आश्रित अन्य साधारण वाक्य हो उसे मिश्र वाक्य कहते हैं।

जैसे– (1) जब सूर्योदय हुआ तब किसान खेत चला गया।

(2) जो जैसे कर्म करेगा उसे वैसा ही फल मिलेगा।

मिश्र वाक्यों में जहाँ, ज्यों ही, जब, तब, जैसा।

(3) संयुक्त वाक्य – जिस वाक्य में एक से अधिक मुख्य उपवाक्य हों, उसे संयुक्त वाक्य कहते हैं। ऐसे वाक्यों में संयोजन या विभाजक शब्द लगे रहते हैं।

जैसे – और, या, किन्तु, परंतु, अथवा, तथापि।

उदाहरण –

(1) मैं पढ़ता हूँ तथा नौकरी भी करता हूँ।

(2) मोहन आया और सोहन चला गया।

सही वाक्य संरचना के लिए निम्नांकित दोषों से बचना चाहिए :–

(1) क्रम सम्बन्धी दोष – कर्ता, क्रिया, कर्म को उचित स्थान पर नहीं रखने से वाक्य अशुद्ध हो जाते हैं।

(2) शब्द अज्ञान सम्बन्धी दोष –संज्ञा का अशुद्ध प्रयोग करने से भाषा में दोष उत्पन्न हो जाता है।

जैसे– (1) **अशुद्ध**– गुरू के उपर श्रद्धा रखनी चाहिए।

शुद्ध – गुरू पर श्रद्धा रखनी चाहिए।

(2) **अशुद्ध**– निरपराधी को दण्ड देना अन्याय है।

शुद्ध – निरपराध को दण्ड देना अन्याय है।

(3) वचन सम्बन्धी –

अशुद्ध–श्री कृष्ण के अनेकों नाम हैं।

शुद्ध– श्री कृष्ण के अनेक नाम हैं।

अशुद्ध–एक फूलों की माला लाओ।

शुद्ध– फूलों की एक माला लाओ।

(4) लिंग सम्बन्धी दोष –

अशुद्ध–राम और सीता वन जा रही हैं।

शुद्ध – राम और सीता वन जा रहे हैं।

(5) प्रत्यय सम्बन्धी–

(1) आपकी सौजन्यता से मुझे नौकरी मिली।

(2) आपके सौजन्य से मुझे नौकरी मिली।

(6) पुनरूक्ति दोष –

अशुद्ध–वहाँ अकाल सम्बन्धी खतरे का डर है।

शुद्ध– वहाँ अकाल का खतरा है।

(7) विशेषण सम्बन्धी –

अशुद्ध–यह घी की शुद्ध दुकान है।

शुद्ध– यह शुद्ध घी की दुकान है।

(8) क्रिया सम्बन्धी –

अशुद्ध–आप स्नान करो।

शुद्ध– आप स्नान करें।

(9) निरर्थक शब्दों का प्रयोग –

अशुद्ध–युवकों में जो निराशावाद छाया हुआ है।

शुद्ध– युवकों में निराशा छायी हुई है।

(10) विरोधी शब्दों के प्रयोग सम्बन्धी दोष–

अशुद्ध–उसे अनुत्तीर्ण होने की आशा है।

शुद्ध– उसे अनुत्तीर्ण होने की आशंका है।

इकाई – 9

(1) पत्र–लेखन

पत्र–लेखन एक कला है। पत्र अपने दूरस्थ संबंधियों तथा मित्रों से बातचीत करने का एक अच्छा, सुगम और सस्ता साधन है। पत्र में जितनी स्वाभाविकता और आत्मीयता होगी, वह उतना ही प्रभावकारी होगा। इसमें लेखक की भावनाएँ ही नहीं व्यक्त होती, बल्कि उसका व्यक्तित्व भी उभरता है।

इस प्रकार पत्र लेखक के चरित्र, दृष्टिकोण, संस्कार, मानसिक स्थिति, आचरण और मान्यताओं का दर्पण है।

सामान्यतः एक पत्र में निम्नांकित विशेषताओं का होना अपेक्षित है –

1. पत्र संक्षिप्त होना चाहिए परन्तु उसमें विषय का कलेवर सम्पूर्ण हो।
2. पत्र में अनावश्यक विस्तार न हो, परंतु विचार स्पष्ट हों।
3. पत्र का उद्देश्य एवं विषय–वस्तु इतनी स्पष्ट होनी चाहिए कि एक बार पढ़ने से ही समझ में आ जाए।
4. पत्र की भाषा सरल, सुबोध एवं पठनीय हो।
5. पत्र में आरम्भ से अंत तक नम्रता, मैत्री एवं मृदुता के भाव बने रहने चाहिए।

पत्र लिखते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए :–

1. पत्र के प्रारूप को पूर्णतः ध्यान में रखना चाहिए।
2. विरामादि चिन्हों का प्रयोग यथास्थान करना चाहिए।
3. पत्र में पंक्तियाँ अथवा शब्द सटाकर नहीं लिखने चाहिए।
4. विषय वस्तु को पूर्णतः ध्यान में रखकर अनुच्छेद बनाकर लिखना चाहिए।
5. पत्र में कड़वी या अशोभनीय बातों का जिक्र नहीं करना चाहिए।
6. पाठक के मन को दुःखी करने वाले शब्दों या तथ्यों का उल्लेख नहीं करना चाहिए।

पत्रों की श्रेणियाँ – सामान्यतः पत्रों को हम दो श्रेणियों में विभक्त करते हैं :–

1. औपचारिक पत्र

(व्यावसायिक व अधिकारिक पत्र)–

ऐसे पत्र जो सरकारी कार्यालयों के कर्मचारियों, प्रधानाचार्यों, अध्यापकों, प्रकाशकों, व्यावसायिक संस्थानों के अधिकारियों, दुकानदारों आदि को लिखे जाते हैं, औपचारिक पत्र कहलाते हैं।

2. अनौपचारिक पत्र (व्यक्तिगत पत्र)–

ऐसे पत्र जो रिश्तेदारों मित्रों, परिचितों आदि को लिखे जाते हैं, अनौपचारिक पत्र कहलाते हैं। बधाई–पत्र, निमंत्रण–पत्र तथा शोक– पत्र भी इन्हीं के अंतर्गत आते हैं।

पत्र के अंग–मूल रूप में पत्र के तीन प्रमुख अंग होते हैं–

1. प्रारम्भ, 2. मध्य, 3. अंत।

इन्हीं तीन प्रमुख अंगों को हम छः अंगों में विभक्त कर उन पर विचार करते हैं। ये छः अंग हैं–

1. स्थान तथा तिथि,
2. संबोधन एवं प्रशस्ति,

3. शिष्टाचार

4. मुख्य विषय

5. समाप्ति तथा

6. पता

1) स्थान तथा तिथि – पत्र लिखते समय लेखक को पत्र के सबसे ऊपर दाँयीं ओर अपना पता, स्थान तथा दिनांक का उल्लेख करना चाहिए।

जैसे – 49, अवंति विहार, रायपुर

दिनांक ....

2) सम्बोधन एवं प्रशस्ति– जिसे पत्र लिखा जा रहा है, उसे उसके सम्बन्ध एवं सम्मान के अनुसार सम्बोधन लिखना चाहिए।

जैसे– पिता को पत्र लिखते समय बाँईं ओर

परम पूज्य पिताजी,

3) शिष्टाचार – पद के अनुसार प्रशस्ति या प्रणाम, नमस्कार, आशीर्वाद आदि लिखना चाहिए।

जैसे – परम आदरणीय पिताजी,

सादर चरण स्पर्श

4) मुख्य विषय –इसमें समाचारों का समावेश होता है, किन्तु उसके पूर्व भी औपचारिकता हेतु निम्न प्रकार से प्रारम्भ करना चाहिए –

हर्ष की दशा में –

1. आपके कृपा पत्र के लिए कोटिशः धन्यवाद।

2. आपका स्नेहपूर्ण पत्र प्राप्त कर, बड़ी प्रसन्नता हुई आदि।

विषाद की दशा में –

1. आपका पत्र पढ़कर अपार वेदना हुई।

2. आपके शोक संकुल पत्र ने मुझे अपार शोक सागर में डुबो दिया आदि।

इस औपचारिक वाक्य के पश्चात् पत्र लेखन के उद्देश्य या विषय पर पहुँचना चाहिए। यही वह स्थान है जहाँ भावों का सुरूचिपूर्ण क्रम, विचारों की सुसम्बध्दता, सुबोधता एवं भाषा की सुघड़ता की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए क्योंकि यहीं उद्देश्यपूर्ति होती है।

5) समाप्ति – यह पत्र का अंतिम भाग है। समाप्ति निम्न वाक्यों से भी की जा सकती है–

i) धन्यवाद के साथ।

i) अविलम्ब पत्रोत्तर की आशा में।

i) हृदय की समस्त शुभकामनाओं के साथ आदि।

6) पता – यह पत्र का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है। पता ठीक न लिखने से पत्र लेखन का उद्देश्य ही निस्सार सिद्ध होता है, क्योंकि पत्र यथास्थान नहीं पहुँच पाता है। अतः सावधानी बरतनी चाहिए। यहाँ उदाहरण के रूप में आवेदन पत्र, शिकायती पत्र, सम्पादकीय पत्र एवं पारिवारिक पत्र दृष्टव्य हैं।

1. आवेदन पत्र

अपने विद्यालय के प्रधानाचार्य को पत्र लिखकर उनसे छात्रवृत्ति की प्रार्थना कीजिए। पत्र में यह भी स्पष्ट कीजिए कि आपको छात्रवृत्ति की आवश्यकता क्यों है ?

सेवा में,

प्रधानाचार्य महोदय,
शास. उच्च. मा. शाला,
बलौदाबाजार, रायपुर (छ.ग.)

विषय– छात्रवृत्ति प्रदान करने के लिए प्रार्थना पत्र।

आदरणीय महोदय,

मैं शा. उ. मा. शाला में दसवीं कक्षा का छात्र हूँ। अपनी शिक्षा के आरम्भ से लेकर आज तक मैं हर कक्षा में प्रथम रहा हूँ। इसी कारण आज तक हर कक्षा में मेरी फीस माफ रही है। मैं अपने विद्यालय में 'एक अच्छे खिलाड़ी के रूप में जाना जाता हूँ।' अन्तर्कक्षा तथा अन्तर्विद्यालय वाद–विवाद प्रतियोगिता में कई पुरस्कार प्राप्त कर चुका हूँ। एन.सी.सी. के अच्छे कैडेटों में मेरी गिनती होती है।

मैं आगे भी पढ़ना चाहता हूँ परन्तु परिवार की कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण शायद मैं आगे न पढ़ सकूँ, क्योंकि मेरे पिता चतुर्थ श्रेणी के एक सामान्य कर्मचारी हैं। माता को भी मेहनत मजदूरी करनी पड़ती है। महँगाई के इस जमाने में बड़ी कठिनाई से परिवार का पालन कर रहे हैं और वे आगे मेरी पढ़ाई का खर्च वहन नहीं कर पायेंगे। छात्रवृत्ति की शर्तों या नियमों के अनुसार भी मुझे इसके योग्य समझा जाए।

मुझे आशा है कि मेरी परिस्थितियों तथा योग्यताओं को ध्यान में रखते हुए अवश्य छात्रवृत्ति प्रदान कर उत्साहित करेंगे, ताकि मैं अपनी पढ़ाई जारी रख सकूँ।

सधन्यवाद। आपका आज्ञाकारी शिष्य

दिनांक 26.8.2015 क, ख, ग

2. शिकायती पत्र

अपने नगर/क्षेत्र के स्वास्थ्य अधिकारी को शिकायती पत्र लिखकर अपने क्षेत्र में 'खाने की वस्तुओं में मिलावट' की घटनाओं के प्रति उनका ध्यान आकृष्ट कीजिए।

''स्वास्थ्य अधिकारी को शिकायती पत्र''

40, अवन्ति विहार,
रायपुर–छ.ग.
दिनांक 27.8.2015

सेवा में,

स्वास्थ्य अधिकारी,
स्वास्थ्य विभाग,
नगर निगम,
रायपुर, छ.ग.।

महोदय,

मुझे यह कहते हुए बहुत खेद हो रहा है कि हमारे क्षेत्र में आजकल खाने की वस्तुओं में बहुत मिलावट हो रही है, जिसकी वजह से हमें शुद्ध भोजन प्राप्त नहीं हो पाता है। इससे अनेक रोग एवं बीमारियाँ फैल रही हैं। मैंने कई बार इस विषय पर अपने क्षेत्र के अधिकारियों से बात की थी और इस ओर उनका ध्यान आकृष्ट करने का प्रयास किया था, परन्तु इसे कोई भी गंभीरता से नहीं ले रहा है।

अतः आपसे अनुरोध है कि आप इस क्षेत्र में आकर खाद्य पदार्थों में हो रही मिलावट की जाँच करवाएँ और जो व्यक्ति मिलावट करते हैं तथा जो व्यक्ति इस मामले में उनका साथ देते हैं उन्हें कड़ी से कड़ी सजा दिलवाएँ जिससे वे लोग भविष्य में इस प्रकार की हरकत न कर सकें।

इस प्रकार हमारे स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ समाप्त हो जाएगा और आपके द्वारा उठाए गए इस सराहनीय कदम के लिए सदा आभारी रहूँगा।

धन्यवाद। प्रार्थी

किरण कुमार

3. सम्पादकीय पत्र

समाचार पत्र के सम्पादक को पत्र लिखकर पुलिस की लापरवाही के कारण अपने नगर में बढ़ रही गुण्डागर्दी के प्रति प्रशासन का ध्यान आकृष्ट कीजिए।

सेवा में,

सम्पादक महोदय,

नवभारत, रायपुर।

विषय– पुलिस की लापरवाही की शिकायत हेतु–पत्र।

माननीय महोदय,

मैं आपके सम्मानित समाचार–पत्र के माध्यम से प्रशासनिक अधिकारियों का ध्यान नगर में बढ़ती गुण्डागर्दी और पुलिस की लापरवाही की ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ। गत दो माह से हमारे टैगोर नगर में गुण्डों द्वारा मार–पीट, छेड़–छाड़, अपहरण आदि की घटनाओं के कारण आंतक की लहर दौड़ गई है। प्रतिदिन सुनने में आता है कि किसी की चेन छीन ली गई, किसी का पर्स छीन लिया। कोई बैंक लुट गया। लड़कियों तथा नारियों को छेड़ने की बात तो सामान्य हो गई है।

इन सभी कारणों से यहाँ के आम नागरिकों का जीवन दूभर तथा असुरक्षित हो गया है। पुलिस हाथ पर हाथ धरे बैठी है, आज तक किसी को गिरफ्तार नहीं किया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि पुलिस अपना कर्तव्य भूल गई है। प्रशासन से प्रार्थना है कि वह इस समस्या के समाधान के लिए उचित कदम उठाए तथा अतिशीघ्र अपराध करने वालों को गिरफ्तार करे। पुलिस के विरुद्ध भी उचित कार्यवाही की जानी चाहिए, जिससे नागरिक अपने आपको सुरक्षित महसूस करें।

24/8/2015

प्रार्थी

प्रतीक।

4. पारिवारिक पत्र

छात्रावास में रहने वाले अपने भाई/बहन को पत्र लिखकर 'समय के सदुपयोग' के महत्व पर प्रकाश डालिए।

''समय के सदुपयोग के लिए पत्र''

C–31, शंकर नगर, रायपुर

दिनांक 25. 8. 2015

प्रिय अनुज प्रवाह,

खुश रहो। कल ही तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे अंक अपेक्षानुसार नहीं थे, परन्तु अधिक अफसोस तब हुआ जब पता चला कि तुम्हें परीक्षा की तैयारी के लिए समय नहीं मिला। तुम्हारे सहपाठी से पता चला कि तुम अपने समय को यूँ ही बर्बाद करते हो और तुम्हारा कोई नियमित कार्यक्रम नहीं है जबकि तुम्हारे विद्यालय की दिनचर्या एक विद्यार्थी के लिए आदर्श है। सिर्फ कमी है तो तुम्हारे परिश्रम एवं समय के सदुपयोग की, क्योंकि कोई भी काम करने के लिए मिला हुआ समय कम लगता है और हम उस निर्धारित समय का सदुपयोग नहीं करते। समय बड़ा अमूल्य है। एक बार निकल जाने के बाद पुनः नहीं आता। समय का सदुपयोग करना सीखो। तभी तुम अपने जीवन में कुछ कर पाओगे। अन्यथा बाद में पछताना पड़ेगा। जरा उन बच्चों को सोचो, जिन्होंने उसी निर्धारित समय में तुमसे अधिक अंक प्राप्त किए हैं, अतः समय का दुरुपयोग न कर समय के महत्व को समझो। प्रत्येक कार्य के लिए एक समय निर्धारित करो, क्योंकि बीता हुआ समय कभी वापस नहीं आता। आशा है, मेरी बातें तुम्हारी समझ में आई होंगी । तुम सभी कार्य समयानुसार ही पूर्ण करने का प्रयास करोगे। माँ और बाबूजी का प्यार और मेरी शुभकानाओं सहित।

तुम्हारी अग्रजा

राधिका।

(2) अपठित गद्यांश

संकलनकर्ता–श्रीमती सरिता नासरे

''अपठित' का अर्थ है, वह पाठ या सन्दर्भ जो छात्र की आँखों के सामने पहले न गुजरा हो। ऐसे गद्यांशों के मूल भावों को समझने में बुद्धिबल से काम लेना पड़ता है। यह एक प्रकार का मानसिक व्यायाम है लेकिन यह कोई कठिन कार्य नहीं है। थोड़ी सावधानी और धैर्य से काम लेने पर सारे प्रश्नों के उत्तर निकल आते हैं, क्योंकि सभी प्रश्नों के उत्तर उसी गद्यांशों में रहते हैं।

सामान्य निर्देश–

अपठित अवतरणों से सम्बद्ध प्रश्नों का उत्तर देने में निम्नलिखित कुछ सामान्य नियम सहायक सिद्ध होंगे–

1. मूल अवतरण को कम से कम तीन बार पढ़ना चाहिए। यदि इससे मूल भाव स्पष्ट न हो तो उसे एक बार और पढ़ना चाहिए।
2. मूल भावों, विचारों तथा शब्दों को रेखांकित करना चाहिए।
3. एक–एक प्रश्न का उत्तर मूल अवतरण में ही ढूँढना चाहिए, बाहर नहीं।
4. प्रश्नोत्तर लिखते समय मूल में दिए गए शब्दों का ही यथासम्भव प्रयोग करना चाहिए।
5. यह बात याद रखनी चाहिए कि सभी प्रश्नों के उत्तर सरल और संक्षिप्त हों।
6. सभी प्रश्नोत्तर प्रसंगानुकूल होने चाहिए। अनावश्यक शब्दों के प्रयोग से बचना चाहिए। प्रश्न जितना किया गया हो, उत्तर उतना ही होना चाहिए।
7. प्रश्नोत्तर लिखते समय अपनी और से बढ़ा–चढ़ाकर लिखना या अतिरिक्त उदाहरण देना नहीं चाहिए।
8. यदि अपठित गद्यांश का सारांश या भावार्थ पूछा जाए तो सारांश मूल का आधा या तिहाई होना चाहिए किन्तु भाषा सर्वथा मौलिक होनी चाहिए।
9. यदि रेखांकित शब्दों के अर्थ लिखने हों तो वे प्रसंगानुकूल हों क्योंकि कभी–कभी एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं ।
10. यदि मूल गद्यांश का शीर्षक देने के लिए कहा जाए तो उसके केन्द्रीय भाव की खोज करनी चाहिए। दिये गए गद्यांश के आरम्भ या अन्त में शीर्षक छिपा होता है।
11. शीर्षक अत्यंत संक्षिप्त और सरल होना चाहिए। उसके शब्द मूल गद्यांश से भी ज्यों के त्यों लिये जा सकते हैं।
12. प्रश्नकर्ता के निर्देशानुसार ही परीक्षार्थी को अपना मत या विचार व्यक्त करना चाहिए, अन्यथा नहीं।

कभी –कभी परीक्षाओं में हिन्दी के ऐसे गद्यांश दिये जाते हैं, जिनका पाठ्य–पुस्तकों से सम्बन्ध नहीं होता। इनसे छात्रों की बौद्धिक गहराई, पहुँच और पकड़ की जाँच होती है। इसके अतिरिक्त, इन गद्यांशों से परीक्षार्थियों के सामान्य ज्ञान और स्वतंत्र अध्ययन की भी परीक्षा होती है। ये अवतरण प्रायः समाचार–पत्रों, सामान्य ज्ञान की पुस्तकों और हिन्दी की विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं से लिये जाते हैं।

उपर्युक्त सामान्य नियमों के आधार पर यहाँ दो अपठित गद्यांश उदाहरण के रूप में दिए जा रहे हैं।

उसमें दिए गए प्रश्नों को हल कीजिए।

उदाहरण –1 नीचे लिखे गद्यांश को ध्यान से पढ़िए और उसके नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर लिखिए। उत्तर यथासम्भव आपके अपने शब्दों में होने चाहिए।

'एक राजा के चार पुत्र थे। राजा ने उनको बुलाकर कहा कि 'जो सर्वश्रेष्ठ धर्मात्मा को ढूँढ लाएगा, वही राज्य का उत्तराधिकारी बनेगा।'' पिता की आज्ञा प्राप्त कर चारों राजकुमार घोड़ों पर सवार हुए और चारों दिशाओं में चले गए। बड़ा राजकुमार अपने साथ सेठ को लाया और उसने बताया –'ये सेठ जी सदा सहस्त्रों रूपये दान करते हैं।' इन्होंने बहुत से मंदिरों का निर्माण करवाया है, जलाशय खुदवाए हैं और उनके स्थानों पर इनकी ओर से प्याऊ चलते हैं। ये नित्य भागवत् कथा श्रवण करते हैं।''

दूसरे राजकुमार के साथ कृशकाय ब्राह्मण था। उसने कहा –'इन विप्रदेव ने समस्त तीर्थ स्थानों का भ्रमण पैदल ही किया है। असत्य व क्रोध इन्हें छू तक नहीं पाए। नियम से पूजा करके ही जल पीते हैं। तीनों समय स्नान करके पूजा–पाठ करते हैं।''

तीसरा राजकुमार अपने साथ किसी साधु को लेकर आया। उसकी बड़ी भारी जटाएँ थीं और शरीर कंकाल–मात्र नजर आता था। उस राजकुमार ने बताया–''महाराज आप बहुत बड़े तपस्वी हैं। सात दिनों में केवल एक बार दूध पीते हैं। गरमी में पंचाग्नि तापते हैं, सर्दी में जल में खड़े रहते हैं। सदा भगवान का ध्यान करते हैं।''

राजा ने उन तीनों को ही धर्मात्मा स्वीकार किया और उन्हें ससम्मान राज्य सभा में स्थान भी दिया। अन्त में छोटा राजकुमार आया। उसके साथ मैले कपड़े पहने एक देहाती था। वह बेचारा दूर से ही हाथ जोड़कर डरता हुआ राजा के सामने आया। तीनों बड़े राजकुमार छोटे भाई की मूर्खता पर हँसने लगे। छोटे राजकुमार ने कहा –''एक कुत्ते के शरीर में घाव हो गए थे। पता नहीं किसका कुत्ता था, इसने देखा और लगा घाव धोने। मैं इसे ले आया हूँ। पता नहीं, यह धर्मात्मा है या नहीं ? आप पूछ लें।''

राजा ने पूछा –''तुम धर्म के लिए क्या करते हो ?''

डरते हुए देहाती ने कहा –''मैं अनपढ़ हूँ धर्म क्या जानूँ। कोई बीमार होता है तो सेवा कर देता हूँ। कोई माँगता है तो मुट्ठी भर अन्न दे देता हूँ।''

राजा ने कहा–''यह देहाती सबसे बड़ा धर्मात्मा है, क्योंकि कृत्य करना तो धर्म है ही, किन्तु सर्वोत्तम धर्म है बिना किसी चाह के असहाय प्राणियों की सहायता करना। बिना किसी स्वार्थ के भूखे को अन्न देना, रोगी की सेवा–सुश्रूषा करना, कष्ट में पड़े हुए को कष्ट से मुक्ति दिलाना आदि।''

प्रश्न 1. उपर्युक्त गद्यांश का उचित शीर्षक दीजिए।

प्रश्न 2. राजा के कितने पुत्र थे ? उन्हें कहाँ और क्यों जाना पड़ा ? परीक्षा में कौन सफल हुआ ?

प्रश्न 3. बड़े राजकुमार की दृष्टि में सबसे बड़ा धर्मात्मा कौन था और उसका क्या कारण था?

प्रश्न 4. दूसरे राजकुमार ने किसको सबसे बड़ा धर्मात्मा माना और क्यों ?

प्रश्न 5. साधु किसके साथ आया था ? उसका परिचय किस प्रकार दिया गया ? उसकी दशा का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 6. देहाती को राजा के सामने कौन और क्यों लाया ? देहाती ने राजा के प्रश्न का क्या उत्तर दिया ?

प्रश्न 7. राजा ने किसे और किस आधार पर सबसे बड़ा धर्मात्मा माना ?

प्रश्न 8. उपर्युक्त गद्यांश का सारांश लिखिए।

उदाहरण–2 नीचे लिखे गद्यांश को ध्यान से पढ़िए और उसके नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर लिखिए। उत्तर यथासम्भव आपके अपने शब्दों में होने चाहिए :–

एक बार रोम का राजा एक भीषण रोग से पीड़ित हो गया। उस समय देश–विदेश के प्रख्यात एवं निष्णात चिकित्सक राजा के उपचार के लिए बुलाए गए। किन्तु अच्छी से अच्छी औषधियों के प्रयोग से भी वे राजा के रोग का निदान न कर सके। राजा का रोग पहले की अपेक्षा और अधिक बढ़ता चला गया। असाध्य रोग के कारण राजा के हृदय में विकलता और राज्य में उदासी छा गई।

एक दिन एक वृद्ध पुरुष राजा के प्रासाद में आया और उसने रोगग्रस्त राजा से कहा –''राजन् ! एक विशेष औषधि के सेवन से आपका रोग ठीक हो सकता है। यह विशेष औषधि किसी अन्य व्यक्ति के पिताशय (पित्त की थैली – ''GALL-BLADDER") से तैयार की जाती है। यह औषधि आपके रोग को मूल से उखाड़ने की क्षमता ही नहीं रखती, अपितु आपको चिरंजीवी भी बना सकती है।''

वृद्ध के वचनों को सुनकर राजा के निराश मन में आशा का संचार हो गया। उसने वृद्ध के प्रति मन ही मन कृतज्ञता अभिव्यक्त करते हुए राज्य के चिकित्सकों को एक ऐसे व्यक्ति को तलाश करने का आदेश दिया, जिसके पित्त की थैली से वह औषधि बनाई जा सके। अन्ततः चिकित्सकों को एक ऐसा परिवार मिल गया, जिसे हाथ की तंगी के कारण भरपेट भोजन भी उपलब्ध नहीं होता था। इस परिवार में केवल तीन सदस्य थे– एक लड़का और उसके माता–पिता। चिकित्सकों ने लड़के के माता–पिता को प्रभूत धन का प्रलोभन देकर उनके एकमात्र पुत्र को खरीदने का प्रस्ताव रखा। धन की लालसा ने माता–पिता की आँखों पर पर्दा डाल दिया। उनकी दृष्टि में धन–मोह के सम्मुख पुत्र–मोह फीका पड़ गया और उन्होंने अपने घर के दीपक को चिकित्सकों के हाथों बेच दिया।

चिकित्सक लड़के को राजा के सामने लेकर आए। राजा ने लड़के की पित्त की थैली को लेने के विषय में राज्य पुरोहित से विचार–विमर्श किया। पुरोहित ने कहा–''राजन् ! यद्यपि देश सर्वोपरि होता है, किन्तु उसका शासक उससे भी बड़ा होता है, क्योंकि वह देश की रक्षा करता है तथा अहर्निश उसकी समृद्धि के लिए प्रयास करता है तथा शासक के लिए किसी भी व्यक्ति के जीवन की बलि देना कोई अपराध नहीं है।''

पुरोहित के वचनों को सुनकर लड़के को राजा के सम्मुख खड़ा कर दिया गया। जल्लाद भी तलवार लेकर वहाँ आ पहुँचा। चिकित्सक औषधि तैयार करने वाले उपकरणों को लेकर वहाँ खड़े हो गए। अब राजा के आदेश की प्रतीक्षा थी। उसी क्षण लड़का आकाश की ओर देखकर जोर–जोर से हँसने लगा। उसे हँसता देखकर, सम्राट ने लड़के से हँसने का कारण पूछा। लड़के ने कहा–''जिस देश में माँ–बाप धन के लिए सन्तान को बेचें, पुरोहित निरपराध मनुष्य की हत्या को उचित ठहराएँ, देश और प्रजा की रक्षा करने वाला शासक निर्दोष प्राणी की जान लेकर अपनी जान बचाए, वहाँ तो ऊपर वाले के न्याय पर ही भरोसा करना पड़ेगा।''

लड़के की बातों को सुनकर सम्राट की आँखें खुल गई। उसे अपनी भूल पर पश्चाताप होने लगा। उसका मन ग्लानि से भर गया। उसके अन्तः स्थल में मानवता के अंकुर फूट पड़े। उसने जल्लाद को वापस कर दिया।

प्रश्न 1. उपर्युक्त गद्यांश का उचित शीर्षक दीजिए।

प्रश्न 2. राजा को रोग से छुटकारा दिलाने के लिए क्या–क्या प्रयास किए गए ? उन प्रयासों का क्या परिणाम निकला ? उसके बाद राजा और प्रजा की क्या दशा हुई ?

प्रश्न 3. राजा के प्रासाद में कौन आया ? उसने किस औषधि का सुझाव दिया, उसको बनाने का क्या तरीका बताया ? उस औषाधि के गुणों का उल्लेख कीजिए।

प्रश्न 4. उस व्यक्ति के वचनों को सुनकर राजा को कैसा अनुभव हुआ ? उसके प्रति राजा ने क्या किया ? उसके बाद राजा ने किसको क्या आदेश दिया ?

प्रश्न 5. राजा के व्यक्तियों को तलाश करने पर कैसा परिवार मिला ? उस परिवार के कौन–कौन सदस्य थे ? राजा के व्यक्तियों ने क्या प्रलोभन दिया ? प्रलोभन का उस परिवार पर क्या प्रभाव हुआ और फिर उस परिवार ने क्या किया ?

प्रश्न 6. राजा और पुरोहित में किस विषय पर विचार विमर्श हुआ ? पुरोहित ने राजा को क्या सलाह दी ? उसके बाद दरबार में क्या घटनाएँ घटीं ?

प्रश्न 7. राजा ने लड़के से क्या पूछा ? लड़के ने क्या उत्तर दिया ? उसके उत्तर का राजा पर क्या प्रभाव हुआ ? उसके बाद राजा ने क्या किया ?

प्रश्न 8. गद्यांश का सारांश लिखिए।

संकलनकर्ता
श्रीमती सरिता नासरे

परिभाषा – **जानसन के अनुसार** –''निबंध मस्तिष्क के विचारों की एक तरंग है।''
पं. श्यामसुंदर दास के अनुसार –''निबंध वह लेख है जिसमें किसी गहन विषय पर विस्तारपूर्वक और पाण्डित्यपूर्ण ढंग से विचार किया गया हो।''
बाबू गुलाबराय के अनुसार – ''निबंध का आकार सीमित होता है, उसमें निजीपन होता है, स्वच्छ और सजीव होता है।

इकाई – 10

निबन्ध लेखन

आचार्य शुक्ल के अनुसार – निबंध रचना अत्यंत दुरूह होती है। ''यदि गद्य कवियों की कसौटी है तो निबन्ध गद्य की।''

इस प्रकार निबंध किसी विषय पर विचार प्रकट करने की कला है। इसमें विचारों को क्रमबद्ध रूप में पिरोया जाता है। इसमें ज्ञान, विचार और व्यक्तित्व का अद्भुत संगम होता है।

प्रश्न उठता है कि निबंध कैसे लिखें ? यद्यपि निबंध लिखने का कोई निश्चित सूत्र नहीं है। फिर भी निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए –

1. विचार बिखरे न हों।
2. विचारों में एक श्रृंखला हो जो क्रमबद्ध हो।
3. विचारों पर प्रकाश डालते समय उसमें संतुलन हो अर्थात् प्रमुख बातों को अधिक महत्व एवं गौण बातों को कम महत्व दिया जाना चाहिए।
4. निबंध में बदलती हुई विषय–सामग्री के अनुसार पैराग्राफ बदलने चाहिए।

कुल मिलाकर निबंध के **<u>चार अंग</u>** निश्चित किए जाते हैं –

1. शीर्षक– आकर्षक होना चाहिए ताकि लोगों में निबंध पढ़ने की उत्सुकता पैदा हो जाए।

2. प्रस्तावना– इसे भूमिका भी कहा जाता है। निबंध की श्रेष्ठता की यह नींव होती है। यह अत्यंत रोचक और आकर्षक होनी चाहिए। परन्तु यह बहुत लम्बी नहीं होनी चाहिए। भूमिका इस प्रकार की हो जो विषय वस्तु की झलक प्रस्तुत कर सके। यह लोकोक्तियों, महापुरुषों के वक्तव्यों या सूत्रात्मक कथनों की सहायता से शुरू की जा सकती है।

3. विस्तार– यह निबंध का सर्वप्रमुख अंश है। यही विचारों का वास्तविक विकास होता है। इसका संतुलित होना अत्यंत आवश्यक है। यहीं निबंधकार अपना दृष्टिकोण प्रकट करता है।

4. उपसंहार – यह निबंध का अंतिम चरण है। निबंध का समापन चमत्कारिक रूप में नहीं होता बल्कि एक निश्चित क्रम में होता है। यहाँ निबंध की केन्द्रीय भावना का दर्शन होता है। यहाँ विषय का खण्डन–मंडन करता हुआ लेखक अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। उपदेश, दूसरे के विचारों को उद्धृत कर या कविता की पंक्ति के माध्यम से निबंध समाप्त किया जा सकता है।

निबन्ध के भेद

निबंध प्रायः तीन प्रकार के होते हैं।

1. वर्णनात्मक, 2. विवरणात्मक, 3. विचारात्मक।

1. वर्णनात्मक निबंध – उस निबंध को कहते हैं, जिसमें किसी घटना, वस्तु अथवा स्थान का वर्णन होता है। इसमें लेखक की निरीक्षण शक्ति तीक्ष्ण होनी चाहिए। वर्णन के लिए भाषा सरल और ओजस्वी होनी चाहिए और शैली रोचक। वर्णनात्मक निबंध को पढ़कर उस वस्तु, घटना या स्थान का पूरा चित्र आँखों के सामने आ जाना चाहिए। नगर, ग्राम, रेल, तार, जहाज, नदी, पर्वत या प्राकृतिक दृश्य, रेडियो, पुस्तक आदि का वर्णन इस प्रकार के निबंधों का विषय हो सकता है।

2. विवरणात्मक निबंध–

उसे कहते हैं, जिसका सम्बन्ध काल से होता है। इस प्रकार के निबंधों में आदर्श युद्धों, यात्राओं, घटनाओं और जीवन–कथाओं और कहानियों का चित्रण किया जाता है। आत्म–कथाओं और कहानियों का चित्रण भी इसी कोटि के निबंधों में किया जाता है। विनोबा भावे, पुस्तक की आत्मकथा, हमारे राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद इसी कोटि के निबंध हैं। इस प्रकार के निबंधों में घटनाएँ क्रम से आनी चाहिए। मुख्य–मुख्य घटनाओं का वर्णन प्रमुख रूप से होना चाहिए। इस प्रकार के निबंधों में आत्मकथाएँ उत्तम पुरुष सर्वनाम में लिखी जाती हैं।

3) विचारात्मक निबंध– उसे कहते हैं, जिसका संबंध विवेचना से होता है। इसमें विचारों की प्रधानता रहती है। इस प्रकार के निबंध लिखना प्रायः कठिन होता है। भूदान–यज्ञ, अहिंसा परमो धर्मः, विद्यार्थी जीवन में अनुशासन का महत्व इसी प्रकार के निबंध हैं।

उदाहरण के रूप में एक साहित्यिक निबंध का नमूना दिया जा रहा है तथा कतिपय निबंधों की संक्षिप्त रूपरेखा दी जा रही है।

साहित्यिक निबंध

उदाहरण –

''मनुष्य है वही जो मनुष्य के लिए मरे''

औरों को हँसते देखो मनु,
हँसों और सुख पाओ।
अपने सुख को विस्तृत कर लो,
सबको सुखी बनाओ। – **प्रसाद**

मानव एक सामाजिक प्राणी है। परस्पर सहयोग उसके जीवन का महत्वपूर्ण अंग है। आदिकाल से ही मानव–जीवन में दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ काम करती हैं। कुछ लोग स्वार्थ–भावना से प्रेरित होकर अपना ही हित–साधन करते हैं। कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो दूसरों के हित के लिए अपना जीवन–न्यौछावर कर देते हैं। परोपकार की भावना दूसरों के लिए अपना सब कुछ त्यागने के लिए प्रोत्साहित करती है। भारत वर्ष 'बहुजन हिताय' तथा 'बहुजन सुखाय' की भावना लेकर चलने वालों की भूमि है। भारतवासी ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना से ओत–प्रोत हैं।

इतिहास तथा पुराणों के अनुसार महान् व्यक्तियों ने परोपकार के लिए अपने शरीर तक का त्याग कर दिया। ऐसे उदाहरणों से हमारे धार्मिक ग्रन्थ भरे पड़े हैं।

दानव–देवता संग्राम में जब देवराज इन्द्र बकासुर नामक राक्षस के अत्याचारों से अत्यंत दुःखी हो गए, तब वे अन्य देवताओं सहित संसार के सृष्टा ब्रह्माजी के समीप करबद्ध प्रार्थना करके बकासुर राक्षस से मुक्ति पाने का उपाय पूछने लगे। ब्रह्माजी ने देवताओं सहित देवराज इन्द्र को उपाय बताते हुए कहा– हे देवाधिपति यदि आप महर्षि दधीचि की अस्थियों का अस्त्र बनाकर राक्षसों से युद्ध करें तो निश्चय ही राक्षस बकासुर का वध तथा उससे मुक्ति संभव है। ब्रह्मा जी के इन वचनों को सुनकर देवराज इन्द्र महर्षि दधीचि के आश्रम में पहुँचे।

तपस्या में लीन महर्षि का मुख मण्डल दिव्य तेज से प्रदीप्त था। नेत्र खोलते ही उन्होंने इन्द्र देवता से वहाँ आने का कारण पूछा और आश्रमवासियों सहित उनका स्वागत किया। इन्द्र देवता ने कुछ हिचकिचाते हुए उन्हें बताया कि राक्षस बकासुर के अत्याचारों से सर्वत्र त्राहि–त्राहि मची हुई है। ऋषिवर बोले –''इस प्रकार से जो दूसरों को निरंतर कष्ट पहुँचाता है तो उसका अवश्य ही अंत कर देना चाहिए।'' उन्होंने बड़े ही मधुर शब्दों में सुरपति इन्द्र से पूछा –''आप मुझे

बताएँ कि मैं इसमें आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?'' तत्पश्चात् देवराज इन्द्र ने महर्षि दधीचि को ब्रह्मा द्वारा कहा गया सारा वृतान्त सुना दिया।

इन्द्र के वृतान्त को सुनकर ऋषि सहर्ष बोले ''देवराज आपने व्यर्थ ही संकोचवश मुझे यह बात बताने में विलम्ब कर दिया। यदि मेरा यह तुच्छ शरीर किसी के प्राणों की रक्षा करने में समर्थ होगा तो मैं स्वयं को सौभाग्यशाली समझूँगा।'' यह कहते हुए ऋषिवर दधीचि ने योगासन मुद्रा में श्वास खींचा और अपने प्राण त्याग दिए। देवराज इन्द्र ने ऋषि दधीचि की अस्थियों से वज्र नामक अस्त्र बनाया और राक्षसों का संहार किया।

उपरोक्त बातें दर्शाती हैं कि महर्षि दधीचि का मानव रूप में उत्पन्न होना सार्थक सिद्ध हुआ, क्योंकि उन्होंने अपने अमूल्य बलिदान से मानवता की रक्षा की। इसलिए कहा गया है कि मनुष्य वही है जो मनुष्य के लिए मरे।

कतिपय निबंधों की संक्षिप्त रूपरेखा

1) विज्ञान के बढ़ते चरण (विज्ञान संबंधी)

रूपरेखा –

1. आज का युग– एक वैज्ञानिक युग, 2. विज्ञान के कतिपय महत्वपूर्ण आविष्कारों के साथ उनके उपयोग व महत्व का वर्णन, 3. जीवन को सुविधाजनक बनाने में सर्वोपरि, 4. मनोरंजन में भी श्रेष्ठ मददगार, 5. चिकित्सा की आधुनिकतम विधियों में सहायक, 6. रक्षा के नवीनतम उपायों में योगदान, 7. कृषि की नूतन विधियों में सहायक, 8. कम्प्यूटरीकृत लेखे–जोखों में प्रगति, 9. रसोईघर में सहायक, 10. अन्य अनेक सुविधाएँ जैसे यातायात आदि का वर्णन जिनसे जीवन सुविधाजनक बन गया है।

2) मूल्य वृद्धि(महँगाई) और उसका निदान (समस्या मूलक)

रूपरेखा –

1. प्रस्तावना– मूल्य वृद्धि महँगाई का गंभीर रूप,

2. भारत सरकार के महँगाई रोकने के कदम,

3. महँगाई की समस्या अति जटिल, 4. सख्त कदम उठाने की माँग, 5. नागरिक आपूर्ति मंत्री का आश्वासन, 6. उपसंहार – सरकार को सुझाव।

3) विद्यार्थी जीवन में अनुशासन का महत्व (विचारात्मक)

रूपरेखा –

1. भूमिका, 2. विद्यार्थी का कर्तव्य,

3. अनुशासन की रूपरेखा, 4. अनुशासन के लाभ

5. बाधाएँ, 6. उपसंहार।

4) स्वावलम्बन की एक झलक पर न्यौछावर कुबेर का कोष (साहित्यिक)

रूपरेखा –

1. प्रस्तावना, 2. स्वावलम्बन का अर्थ,

3. स्वावलम्बी (या आत्मनिर्भर) के लक्षण, 4. कुछ स्वावलम्बी पुरूषों के उदाहरण, 5. स्वावलम्बन की महत्ता, 6. उपसंहार।

संकलनकर्ता

श्रीमती सरिता नासरे

स्वच्छ भारत मिशन

एक कदम स्वच्छता की ओर

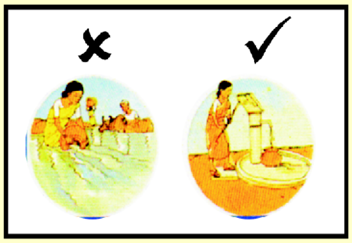

सुरक्षित पेयजल स्त्रोत का उपयोग करें

कूड़े कचरे का सुरक्षित निपटान करें

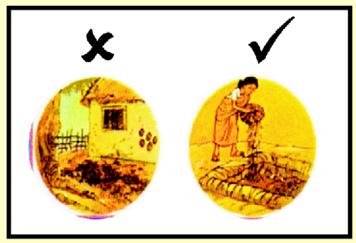

खाने के पूर्व व शौच के बाद साबुन से हाथ धोएं

खुले में शौच न करें, शौचालय का उपयोग करें

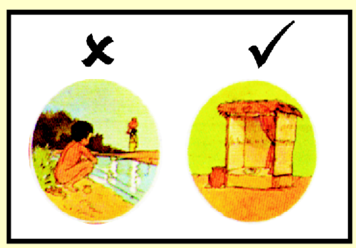

राज्य स्वच्छ भारत मिशन

छत्तीसगढ़ शासन

स्वच्छ भारत मिशन

स्वच्छ भारत

एक कदम स्वच्छता की ओर

खाने से पहले, शौच के बाद
जरूर धोएं साबुन से हाथ

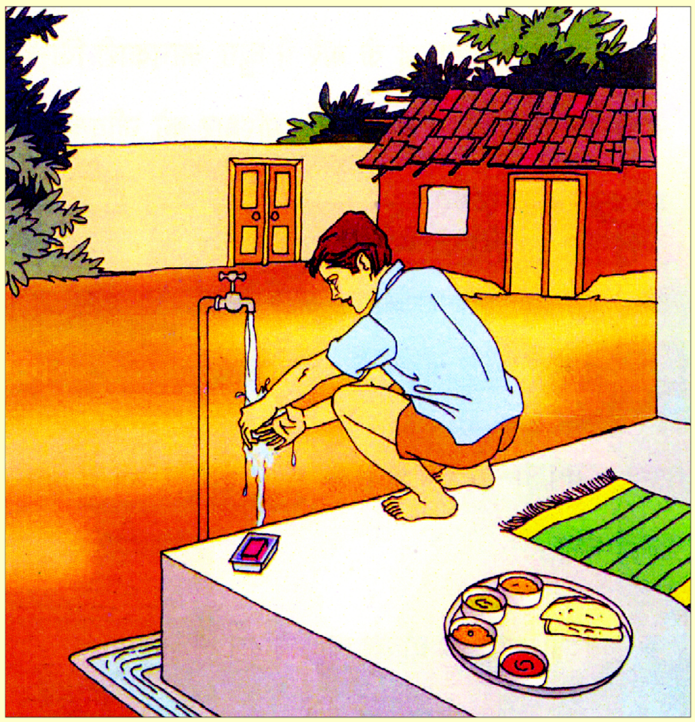

राज्य स्वच्छ भारत मिशन

छत्तीसगढ़ शासन